बी.ए. तृतीय वर्ष
इतिहास, प्रथम प्रश्नपत्र

भारत का इतिहास
1740 से 1857 ई.

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल

MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY-BHOPAL

Reviewer Committee

1. Dr. Ajay Khare
   Professor,
   IEHE, Bhopal.
2. Dr. Mamta Chansoriya
   Professor,
   MLB College, Bhopal.
3. Dr. Manisha Sharma
   Associate Professor,
   Govt. PG College, Bina.

Advisory Committee

1. Dr. Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor,
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University,
   Bhopal.
2. Dr. L.S. Solanki
   Registrar,
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University,
   Bhopal.
3. Dr. L.P. Jharia
   Director DME,
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University,
   Bhopal.
4. Dr. Ajay Khare
   Professor,
   IEHE, Bhopal.
5. Dr. Mamta Chansoriya
   Professor,
   MLB College, Bhopal.
6. Dr. Manisha Sharma
   Associate Professor,
   Govt. PG College, Bina.

COURSE WRITER

Dr. Alpana Singh, Associate Professor and Head of the Department, History, Mata Gujri Mahila Mahavidhyalay (Autonomous), Jabalpur (M.P).

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Information contained in this book has been published by VIKAS® Publishing House Pvt. Ltd. (Developed by Himalaya Publishing House Pvt. Ltd.) and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal, Publisher and its Authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020

VIKAS®

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT. LTD.
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: A-27, 2nd Floor, Mohan Co-operative Industrial Estate, New Delhi 1100 44
• Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

भारत का इतिहास 1740 से 1857 ई.

Syllabi	Mapping in Book
इकाई–1 18वीं शताब्दी के मध्य में राजनीतिक प्रवृत्तियाँ, कर्नाटक में आंग्ल– फ्रांसीसी संघर्ष, पानिपत का तृतीय युद्ध। भारत में ईस्ट इंडिया कम्पनी की सत्ता की स्थापना, प्लासी और बक्सर का युद्ध। बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दिवानी, द्वैध शासन।	**इकाई 1** : 18वीं शताब्दी के मध्य में राजनीतिक प्रवृत्तियाँ, कर्नाटक में आंग्ल– फ्रांसीसी संघर्ष, पानिपत का तृतीय युद्ध। भारत में ईस्ट इंडिया कम्पनी की सत्ता की स्थापना, प्लासी और बक्सर का युद्ध। बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दिवानी, द्वैध शासन **(पृष्ठ 3–25)**
इकाई–2 औपनिवेशिक प्रशासन का विकास–वारेन हेस्टिंग्ज तथा लॉर्ड कॉर्नवॉलिस, रेग्यूलेटिंग एक्ट, पिट्स इंडिया एक्ट, आंग्ल–मराठा सम्बन्ध, आंग्ल–मैसूर सम्बन्ध, लॉर्ड वेलेजली और सहायक सन्धियाँ।	**इकाई 2** : औपनिवेशिक प्रशासन का विकास–वारेन हेस्टिंग्ज तथा लॉर्ड कॉर्नवॉलिस रेग्युलेटिंग एक्ट, पिट्स इंडिया एक्ट, आंग्ल–मराठा सम्बन्ध, आंग्ल–मैसूर सम्बन्ध, लॉर्ड वेलेजली और सहायक सन्धियाँ **(पृष्ठ 26–60)**
इकाई–3 महाराजा रणजीत सिंह और आंग्ल–सिख सम्बन्ध, लॉर्ड हेस्टिंग्स और ब्रिटिश सार्वभौम शासन की स्थापना। मराठाओं का पतन, आंग्ल– बर्मा सम्बन्ध, आंग्ल–अफगान सम्बन्ध, डलहौजी का व्यपगत सिद्धांत उसका प्रशासन एवं सुधार। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857– कारण, प्रकृति और परिणाम। 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका–लक्ष्मीबाई, अवंतिबाई, झलकारी बाई।	**इकाई 3** : महाराजा रणजीत सिंह और आंग्ल–सिख सम्बन्ध, लॉर्ड हेस्टिंग्स और ब्रिटिश सार्वभौम शासन की स्थापना, मराठाओं का पतन, आंग्ल– बर्मा सम्बन्ध, आंग्ल–अफगान सम्बन्ध, डलहौजी का व्यपगत सिद्धांत, उसका प्रशासन एवं सुधार, प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857– कारण, प्रकृति और परिणाम, 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका **(पृष्ठ 61–100)**
इकाई–4 भारतीय पुनर्जागरण, सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन – राजा राममोहन राय, तथा ब्रह्म समाज, लॉर्ड विलियम बैंटिक, महिलाओं की स्थिति, पश्चिमी शिक्षा का विकास, भारत का आधुनिकीकरण, लॉर्ड मैकाले का षड्यन्त्र, निष्यंदन का सिद्धांत।	**इकाई 4** : भारतीय पुनर्जागरण, सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन– राजा राममोहन राय तथा ब्रह्म समाज, लॉर्ड विलियम बैंटिक, महिलाओं की स्थिति, पश्चिमी शिक्षा का विकास, भारत का आधुनिकीकरण, लॉर्ड मैकाले का षडयन्त्र और निष्यंदन का सिद्धांत **(पृष्ठ 101–129)**
इकाई–5 ब्रिटिश भू–राजस्व नीति – स्थायी बंदोबस्त, रैयतवारी एवं महालवारी। कृषकों की स्थिति। ग्रामीण ऋणग्रस्तता, कृषि का वाणिज्यीकरण, धन का निष्कासन, कुटीर उद्योगों का विनाश।	**इकाई 5** : ब्रिटिश भू–राजस्व नीति – स्थायी बंदोबस्त, रैयतवारी एवं महालवारी, कृषकों की स्थिति, ग्रामीण ऋणग्रस्तता, कृषि का वाणिज्यीकरण, धन का निष्कासन, कुटीर उद्योगों का विनाश **(पृष्ठ 130–144)**

विषय–सूची

परिचय 1

इकाई 1: 18वीं शताब्दी के मध्य में राजनीतिक प्रवृत्तियाँ, कर्नाटक में आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष, पानिपत का तृतीय युद्ध। भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी की सत्ता की स्थापना, प्लासी और बक्सर का युद्ध। बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दिवानी, द्वैध शासन 3–25

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 18वीं शताब्दी के मध्य राजनीतिक प्रवृत्तियाँ
  1.2.1 नादिरशाह का आक्रमण
1.3 कर्नाटक में आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष
  1.3.1 कर्नाटक की राजनीतिक एवं आर्थिक स्थिति
  1.3.2 प्रथम कर्नाटक युद्ध 1744–1748 ई.
  1.3.3 द्वितीय कर्नाटक युद्ध 1749–1754 ई.
  1.3.4 युद्ध की प्रमुख घटनाएँ
  1.3.5 कर्नाटक का तृतीय युद्ध– 1756–1763 ई.
1.4 पानिपत का तृतीय युद्ध
  1.4.1 अहमद शाह अब्दाली की लालसा
  1.4.2 मराठों की विस्तारवादी नीति
1.5 भारत में ईस्ट इंड़िया कम्पनी की सत्ता की स्थापना
  1.5.1 ईस्ट इंड़िया कम्पनी की स्थापना
1.6 प्लासी और बक्सर का युद्ध
  1.6.1 प्लासी का युद्ध (23 जून 1757 ई.)
  1.6.2 प्लासी का युद्ध.कारण एवं घटनाएँ
  1.6.3 प्लासी के युद्ध की घटनाएँ
  1.6.4 प्लासी के युद्ध के परिणाम
  1.6.5 बक्सर का युद्ध (1764 ई.)
1.7 बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दिवानी
1.8 द्वैध शासन
  1.8.1 द्वैध शासन प्रणाली
1.9 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
1.10 सारांश
1.11 मुख्य शब्दावली
1.12 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.13 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2: औपनिवेशिक प्रशासन का विकास–वारेन हेस्टिंग्ज तथा लॉर्ड कॉर्नवॉलिस रेग्युलेटिंग एक्ट, पिट्स इंडिया एक्ट, आंग्ल–मराठा सम्बन्ध, आंग्ल–मैसूर सम्बन्ध, लॉर्ड वेलेजली और सहायक सन्धियाँ 26–60

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 औपनिवेशिक प्रशासन–लॉर्ड वारेन हेस्टिंग्ज तथा लॉर्ड कॉर्नवॉलिस
  2.2.1 वारेन हेस्टिंग्ज
  2.2.2 वारेन हेस्टिंग्ज के इन समस्याओं को दूर करने के लिए प्रयास

2.2.3 व्यापारिक सुधार
2.2.4 न्याय संबंधी सुधार
2.2.5 लॉर्ड कॉर्नवॉलिस (1786–1793 ई.)
2.2.6 कॉर्नवॉलिस के व्यापारिक सुधार
2.2.7 स्थायी बन्दोबस्त : लॉर्ड कॉर्नवॉलिस
2.2.8 रैयतवारी प्रथा
2.2.9 कॉर्नवॉलिस के न्यायसंबंधी सुधार
2.3 रेग्युलेटिंग एक्ट
2.3.1 कम्पनी की संरचना
2.3.2 रेग्यूलेटिंग एक्ट पारित होने के कारण
2.3.3 रेग्यूलेटिंग एक्ट के गुण
2.3.4 रेग्यूलेटिंग एक्ट के दोष
2.4 पिट्स इंडिया एक्ट
2.4.1 अधिनियम पारित होने के कारण
2.4.2 अधिनियम के प्रावधान
2.4.3 महत्व
2.5 आंग्ल–मराठा सम्बन्ध (1775–1782 ई.)
2.5.1 प्रथम आंग्ल–मराठा युद्ध (1775–1782 ई.)
2.5.2 द्वितीय आंग्ल–मराठा युद्ध (1802–1805 ई.)
2.5.3 तृतीय आंग्ल–मराठा युद्ध (1804–1806 ई.)
2.5.4 चतुर्थ आंग्ल–मराठा युद्ध (1817–1818 ई.)
2.6 आंग्ल–मैसूर सम्बन्ध
2.6.1 प्रथम आंग्ल–मैसूर युद्ध (1767–1769 ई.)
2.6.2 द्वितीय आंग्ल–मैसूर युद्ध (1780–1784 ई.)
2.6.3 तृतीय आंग्ल–मैसूर युद्ध (1790–1792 ई.)
2.6.4 चतुर्थ आंग्ल–मैसूर युद्ध (1799 ई.) के कारण
2.7 लॉर्ड वेलेजली और सहायक सन्धि
2.7.1 लॉर्ड वेलेजली के आगमन के समय भारत का राजनीतिक वातावरण
2.7.2 सहायक सन्धि का उद्देश्य
2.7.3 सहायक सन्धि की विशेषताएँ
2.8 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
2.9 सारांश
2.10 मुख्य शब्दावली
2.11 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.12 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 3: महाराजा रणजीत सिंह और आंग्ल–सिख सम्बन्ध, लॉर्ड हेस्टिंग्स और ब्रिटिश सार्वभौम शासन की स्थापना, मराठाओं का पतन, आंग्ल–बर्मा सम्बन्ध, आंग्ल–अफगान सम्बन्ध, डलहौजी का व्यपगत सिद्धांत, उसका प्रशासन एवं सुधार, प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857– कारण, प्रकृति और परिणाम, 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका **61–100**

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 महाराजा रणजीत सिंह और आंग्ल–सिख सम्बन्ध
3.2.1 रणजीत सिंह और अंग्रेजों के बीच सम्बन्ध
3.2.2 मेटकाफ तथा रणजीत सिंह के बीच सन्धि
3.2.3 अमृतसर की सन्धि (1809 ई.)
3.2.4 सिंध और विलियम बैंटिक की कूटनीति

3.2.5 रणजीत सिंह की शासन व्यवस्था
3.2.6 प्रथम सिख युद्ध (1845–46 ई.)
3.2.7 युद्ध की घटनाएँ
3.2.8 द्वितीय सिख युद्ध (1848–49 ई.)
3.3 लॉर्ड हेस्टिंग्स और ब्रिटिश सार्वभौम शासन की स्थापना
3.3.1 आंग्ल–नेपाल युद्ध (1814–1816 ई.)
3.3.2 लॉर्ड हेस्टिंग्स के समक्ष समस्याएँ
3.3.3 लॉर्ड हेस्टिंग्स के कार्य
3.4 मराठों के पतन के कारण
3.5 आंग्ल–बर्मा संबंध
3.5.1 प्रथम बर्मा युद्ध (1824–26 ई.) के कारण
3.5.2 युद्ध की घटनाएँ
3.5.3 द्वितीय बर्मा युद्ध (1825 ई.) के कारण
3.5.4 तृतीय बर्मा युद्ध (1885 ई.)
3.6 आंग्ल–अफगान संबंध
3.6.1 प्रथम अफगान युद्ध (1839–1842 ई.) के कारण
3.6.2 युद्ध की घटनाएँ
3.6.3 1844–76 तक आंग्ल–अफगान सम्बन्ध
3.6.4 द्वितीय अफगान युद्ध (1878–90 ई.)
3.6.5 युद्ध की घटनाएँ एवं परिणाम
3.6.6 तृतीय अफ़गान युद्ध (1919 ई.)
3.7 डलहौजी का व्यपगत सिद्धांत उसका प्रशासन एवं सुधार
3.7.1 व्यपगत (उत्तराधिकारहरण) सिद्धांत का क्रियान्वयन
3.7.2 लॉर्ड डलहौजी का प्रशासन एवं सुधार
3.8 प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857–कारण, प्रकृति, और परिणाम
3.8.1 1857 ई. के विद्रोह के कारण
3.8.2 क्रान्ति का संगठन
3.8.3 क्रान्ति की घटनाएँ
3.8.4 क्रान्ति का दमन
3.8.5 1857 ई. की क्रान्ति के असफलता के कारण
3.8.6 1857 ई. की क्रान्ति के प्रभाव
3.8.7 क्रान्ति का स्वरूप
3.9 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका
3.9.1 रानी लक्ष्मीबाई
3.9.2 रानी अवंतीबाई
3.9.3 झलकारीबाई
3.10 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
3.11 सारांश
3.12 मुख्य शब्दावली
3.13 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.14 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 4: भारतीय पुनर्जागरण, सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन– राजा राममोहन राय तथा ब्रह्म समाज, लॉर्ड विलियम बैंटिक, महिलाओं की स्थिति, पश्चिमी शिक्षा का विकास, भारत का आधुनिकीकरण, लॉर्ड मैकाले का षडयन्त्र और निष्यंदन का सिद्धांत **101–129**

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य

4.2 भारतीय पुनर्जागरण
4.2.1 परिभाषाएँ
4.2.2 पुनर्जागरण के विभिन्न चरण
4.2.3 पुनर्जागरण की आवश्यकता क्यों?
4.2.4 पुनर्जागरण के कारण
4.3 सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन– राजा राममोहन राय तथा ब्रह्म समाज
4.3.1 आर्य समाज
4.3.2 राजा राममोहन राय तथा ब्रह्म समाज
4.4 लॉर्ड विलियम बैंटिक
4.4.1 लॉर्ड विलियम बैंटिक ने निम्न क्षेत्रों में सुधार
4.4.2 लॉर्ड विलियम बैंटिक का मूल्यांकन
4.5 महिलाओं की स्थिती
4.5.1 प्रथाएं
4.6 पश्चिमी शिक्षा का विकास
4.7 भारत का आधुनिकीकरण
4.8 लॉर्ड मैकाले का निष्यंदन का सिद्धान्त
4.9 निष्यंदन का सिद्धांत
4.10 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
4.11 सारांश
4.12 मुख्य शब्दावली
4.13 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.14 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 5: ब्रिटिश भू–राजस्व नीति – स्थायी बंदोबस्त, रैयतवारी एवं महालवारी, कृषकों की स्थिति, ग्रामीण ऋणग्रस्तता, कृषि का वाणिज्यीकरण, धन का निष्कासन, कुटीर उद्योगों का विनाश **130–144**

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 ब्रिटिश भू–राजस्व नीति–स्थायी बंदोबस्त
5.2.1 स्थायी बंदोबस्त से पूर्व व्यवस्थाएँ
5.2.2 स्थायी बंदोबस्त लॉर्ड कॉर्नवॉलिस
5.2.3 स्थायी व्यवस्था की विशेषताएँ
5.2.4 स्थायी व्यवस्था के लाभ
5.2.5 स्थायी बंदोबस्त के दोष
5.3 रैयतवारी एवं महालवारी
5.3.1 रैयतवारी व्यवस्था
5.3.2 महालवारी बन्दोबस्त
5.4 कृषकों की स्थिति
5.5 ग्रामीण ऋणग्रस्तता
5.6 कृषि का वाणिज्यीकरण
5.7 धन का निष्कासन
5.8 कुटीर उद्योगों का विनाश
5.8.1 उद्योग
5.9 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
5.10 सारांश
5.11 मुख्य शब्दावली
5.12 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.13 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

भारत का इतिहास 1740 से 1857 ई. तक मध्यप्रदेश के विभिन्न विद्यालयों में बी. ए. तृतीय वर्ष प्रथम प्रश्न पत्र के लिए निर्धारित नए वार्षिक पद्धती के अनुसार पाठ्यक्रम पर आधारित है।

इस पुस्तक में विद्यार्थियों को नवीनतम शोध कार्यों से प्राप्त जानकारियों को उपलब्ध कराया गया है। और इसकी भाषा भी अत्यंत सरल है जो की, विद्यार्थियों को आसानी से समझ में आ सकती है, और विद्यार्थी सरलतापूर्वक उसका अध्ययन कर सकते हैं। पुस्तक पूर्णतः विभिन्न पाठ्यक्रम के अनुरुप है। प्रत्येक अध्याय इकाई से संबंधित लघु एवं वस्तुनिष्ठ प्रश्न भी दिए गये हैं।

प्रस्तुत पुस्तक वि. वि. के पाठ्यक्रमानुसार प्रत्येक शीर्षक पर स्तरीय एवं प्रमाणित पाठ्यसामग्री सम्मिलित की गई है, जिसे सरल, सुबोध, सुगम्य, रुचिपूर्ण एवं तर्कसंगत ढंग से विश्लेषित किया गया है, जिससे विद्यार्थियों को समझने में सहायता मिलेगी।

अंत में, यह पुस्तक छात्रों के आवश्यक स्त्रोतग्रन्थ का कार्य करेगी।

डॉ. अल्पना सिंह
जबलपुर (मध्यप्रदेश)

इकाई 1 18वीं शताब्दी के मध्य में राजनीतिक प्रवृत्तियाँ, कर्नाटक में आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष, पानिपत का तृतीय युद्ध। भारत में ईस्ट इंडिया कम्पनी की सत्ता की स्थापना, प्लासी और बक्सर का युद्ध। बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दिवानी, द्वैध शासन

संरचना (Structure)

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 18वीं शताब्दी के मध्य राजनीतिक प्रवृत्तियाँ
  1.2.1 नादिरशाह का आक्रमण
1.3 कर्नाटक में आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष
  1.3.1 कर्नाटक की राजनीतिक एवं आर्थिक स्थिति
  1.3.2 प्रथम कर्नाटक युद्ध 1744–1748 ई.
  1.3.3 द्वितीय कर्नाटक युद्ध 1749–1754 ई.
  1.3.4 युद्ध की प्रमुख घटनाएँ
  1.3.5 कर्नाटक का तृतीय युद्ध– 1756–1763 ई.
1.4 पानिपत का तृतीय युद्ध
  1.4.1 अहमद शाह अब्दाली की लालसा
  1.4.2 मराठों की विस्तारवादी नीति
1.5 भारत में ईस्ट इंड़िया कम्पनी की सत्ता की स्थापना
  1.5.1 ईस्ट इंड़िया कम्पनी की स्थापना
1.6 प्लासी और बक्सर का युद्ध
  1.6.1 प्लासी का युद्ध (23 जून 1757 ई.)
  1.6.2 प्लासी का युद्ध-कारण एवं घटनाएँ
  1.6.3 प्लासी के युद्ध की घटनाएँ
  1.6.4 प्लासी के युद्ध के परिणाम
  1.6.5 बक्सर का युद्ध (1764 ई.)
1.7 बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दिवानी
1.8 द्वैध शासन
  1.8.1 द्वैध शासन प्रणाली
1.9 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
1.10 सारांश
1.11 मुख्य शब्दावली
1.12 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.13 सहायक पाठ्य सामग्री

टिप्पणी

1.0 परिचय (Introduction)

18वीं शताब्दी तक मुगल साम्राज्य का विघटन आरंभ हो चुका था। परिणामस्वरुप भारत अनेक राज्यों मे विभाजित हो गया था। इस स्थिती का लाभ यूरोपीय शक्तियों ने उठाया। कर्नाटक युद्धों मे अग्रेंजो ने फ्रांसीसियों को पराजित कर श्रेष्ठता का प्रमाण दिया। 1757 ई. मे प्लासी के युद्ध में कूटनीति विजय से कम्पनी ने साम्राज्य विस्तार की तरफ कदम बढ़ाया। जल्द ही कम्पनी ने सम्पूर्ण भारत पर आधिपत्य स्थापित कर लिया। अपने स्वार्थो की पूर्ती के लिए अंग्रजों ने भारतीयों का शोषण किया। उनके असीमित अत्याचारों के विरुद्ध 1857 ई. में भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में भारतीय जनता एकजुट हई।

कृषकों, मजदूरों तथा भारतीय शासकों जैसे रानी लक्ष्मीबाई ने ब्रिटिश नीतियों के विरोध में क्रांति में सहयोग दिया। इस समय भारतीय समाज सुधारकों राजा राममोहन रॉय, स्वामी विवेकानंद, स्वामी रामकृष्ण कि योग जनमत से भारतीय पुर्नजागरण प्रारंभ हुआ और सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्र में नये युग का सूत्रपात हुआ।

1707 ई. में औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् मुगल सम्राटों की अयोग्यता के कारण मुगल साम्राज्य का पतन होने लगा।

1.1 उद्देश्य (Objectives)

इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य है–

- भारत मे 18वीं शताब्दी के भारत में हुए प्रमुख राजनीतिक, धार्मिक घटनाओं से विद्यार्थियों को परिचित कराना।

1.2 18वीं शताब्दी के मध्य राजनीतिक प्रवृत्तियाँ (Political Trends During 18th Century)

18वीं शताब्दी तक यूरोपीय जातियों ने भारत में अपने व्यापारिक केन्द्र स्थापित कर लिए थे। प्रारंभ मे व्यापारिक लाभ के लिए भारत मे उन्होंने प्रवेश किया। किन्तु धीरे धीरे उनकी राजनीतिक सत्ता स्थापित करने की इच्छा प्रबल होने लगी।

1.2.1 नादिरशाह का आक्रमण (Nadirshah's Attack)

20 मार्च 1739 को नादिरशाह दिल्ली पहुँचा। उसके आक्रमण से दिल्ली की जो दुर्दशा हुई उसने मुगल सम्राटों की कमजोरी को स्पष्ट कर दिया। फलस्वरुप अनेक प्रान्तों ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी।

हैदराबाद

1724 में हैदराबाद ने स्वयं को स्वतंत्र घोषित किया। मुगल साम्राज्य के वजीर चिनकिलिच कमरुद्दिन ने मुगल सम्राट से दक्षिण का सूबा तथा निज़ामुल्मुल्क का खिताब प्राप्त किया। उसने मुगल साम्राज्य को सुव्यवस्था प्रदान करने का प्रयास किया किन्तु दरबारी षड़यन्त्रों के कारण असफल रहा। वह स्वयं महत्वाकांक्षी था अतः उसने सुबेदारी को वशांनुगत कर लिया और स्वतंत्र राज्य की स्थापना की। दक्षिण से मुगल सत्ता का लगभग अंत हो गया।

अवध

अवध में स्वतंत्र राज्य की स्थापना सआदत खाँ ने की। मुगल सम्राट की कृपादृष्टि से वह अवध का गवर्नर बना था। अवध कृषि तथा व्यापार की दृष्टि से समृद्ध क्षेत्र था। मुगल सम्राट की दुर्बलता का लाभ उठाकर सआदत खाँ ने स्वतंत्र मुस्लिम राज्य स्थापित किया। उसकी मृत्यु के बाद सफदरजंग अवध का नवाब बना।

बंगाल

बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा के स्वतंत्र राज्य की स्थापना मुर्शीद कुली खाँ ने की। 1740 में अलीवर्दी खाँ मुगल सम्राट की अनुमति से बंगाल का गर्वनर बना। कालान्तर में मुगल सम्राट की दुर्बलता के कारण बंगाल का स्वतंत्र शासक बन गया। पंजाब पर सिक्खों, मालवा, गुजरात तथा बुंदेलखण्ड़ पर मराठों, फर्रूखाबाद में मुहम्मद खाँ बगास, रुहेलखण्ड़ में अली मुहम्मद रुहेला, भरतपुर में जाटों और जयपुर में सवाईराजा जयसिंह ने स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिए।

1.3 कर्नाटक में आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष (Anglo-France Struggle in Karnataka)

1.3.1 कर्नाटक की राजनीतिक एवं आर्थिक स्थिति (Political and Economical Condition of Karnataka)

कर्नाटक का प्रथम युद्ध फ्रांसीसी तथा अंग्रेजों की महत्वाकांक्षा का परिणाम था। दोनों ही कम्पनियों ने राजनीतिक प्रभाव में वृद्धि के लिए कर्नाटक विवाद में खुलकर भाग लिया।

राजनीतिक स्थिति

दक्षिण भारत के कोरोमण्ड़ल तट और इसके पीछे की भूमि को कर्नाटक कहा जाता है। कर्नाटक में तीन यूरोपीय बस्तियाँ थीं। ड़चों की नेगापट्टम में, फ्रांसीसियों की पाण्ड़िचेरी में और अंग्रेजों की मद्रास में बस्तियाँ स्थापित थी।

अर्काट का राज्य

कर्नाटक के नवाब की राजधानी अर्काट थी। कर्नाटक का नवाब नाममात्र के लिए हैदराबाद के निज़ाम के अधीनस्थ था।

दोस्त अली के पश्चात् कर्नाटक की स्थिति

दोस्त अली की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र सफदर अली कर्नाटक का नवाब बना, परन्तु वह कर्नाटक की स्थिति संभाल नहीं पाया। 1742 में उसके चचेरे भाई मुर्तजा अली ने षड़यन्त्र कर उसकी हत्या कर दी। कर्नाटक की जनता ने मुर्तजा अली को स्वीकार नहीं किया। इन परिस्थितियों में निज़ाम ने कर्नाटक की राजनीति में हस्तक्षेप किया। उसने सफदर अली के पुत्र सईद मुहम्मद को कर्नाटक का नवाब बना दिया। निज़ाम ने अनवरुद्दीन को नवाब का संरक्षक नियुक्त किया। कुछ समय पश्चात् सईद मुहम्मद की हत्या हो गई और निज़ाम के संरक्षण में अनवरुद्दीन कर्नाटक का नवाब बन गया। इस प्रकार निज़ाम का कर्नाटक पर प्रभुत्व स्थापित हो गया।

दक्षिण भारत में आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष

भारत में यूरोपीय जातियाँ मुख्यतः व्यापारिक उद्देश्यों से आई थी, परन्तु तत्कालीन राजनीतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के कारण उनमें संघर्ष आरम्भ हो गये। उनके दृष्टि में व्यापारिक हितों की तुलना में राजनीतिक उद्देश्य महत्वपूर्ण हो गये।

संघर्ष के कारण

18वीं शताब्दी में दक्षिण भारत में अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के मध्य भीषण संघर्ष आरम्भ हो गये। इस संघर्ष के प्रमुख कारण निम्नलिखित थे–

1. मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात् भारत में ऐसी कोई शक्ति नहीं बची जो अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों के बढ़ते कदमों को रोक सके। इन परिस्थितियों में अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों ने अपना प्रभुत्व बढ़ाने के प्रयत्न किये।
2. अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों दोनों ही शक्तियाँ अपना व्यापार बढ़ाना चाहती थीं, इस प्रयास में संघर्ष अनिवार्य था।
3. दोनों ही भारत में एक ही स्थान पर औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना करना चाहते थे। ऐसी स्थिति में एक शक्ति की विजय तथा दूसरे का विनाश अनिवार्य था।
4. अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों दोनों ने भारतीय नवाबों और राजाओं के आन्तरिक झगड़ों में हस्तक्षेप की नीति अपनायी। अनेक बार एक राज्य के आन्तरिक संघर्ष में अंग्रेज एक पक्ष में होते थे तो फ्रांसीसी दूसरे पक्ष में। दोनों शक्तियाँ एक–दूसरे के सामने आ खड़ी होती थीं।
5. अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों के मध्य यूरोप में चल रहे संघर्ष का प्रभाव भारत पर भी पड़ता था।

दक्षिण में अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के मध्य तीन युद्ध हुए। ये युद्ध कर्नाटक की भूमि पर लड़े गये अतः इन युद्धों को कर्नाटक युद्धों के नाम से जाना जाता है।

1.3.2 प्रथम कर्नाटक युद्ध 1744–1748 ई. (First War of Karnataka 1744-1748 AD)

टिप्पणी

1740 ई. में यूरोप में ऑस्ट्रिया के उत्तराधिकार का युद्ध छिड़ गया। इस युद्ध में इंग्लैण्ड ऑस्ट्रिया के विरूद्ध सम्मिलित हुआ तथा फ्रांस ने ऑस्ट्रिया का पक्ष लिया। अतः शीघ्र ही भारत में भी इंग्लैण्ड और फ्रांसीसी व्यापारिक कम्पनियों के मध्य युद्ध प्रारम्भ हो गया। भारत में फ्रांसीसी बस्ती के केन्द्र पॉण्डिचेरी का गवर्नर डूप्ले था तथा मद्रास की अंग्रेजी बस्ती का गवर्नर मोर्स था।

डूप्ले द्वारा मद्रास विजय

1742 ई. में डूप्ले पॉण्डिचेरी में फ्रांसीसी गवर्नर बनकर आया। वह फ्रांसीसी व्यापार की सुरक्षा के लिए एक शक्तिशाली जहाजी बेड़ा, स्थापित करना चाहता था। इसे स्थापित करने में अंग्रेजों से सामना होना अनिवार्य था।

1746 ई. में इंग्लैण्ड का जहाजी बेड़ा मद्रास आ पहुँचा और फ्रांस के व्यापारिक जहाजों को नष्ट करना प्रारम्भ किया। डूप्ले ने नवाब अनवरुद्दीन को भी वचन दिया कि वह मद्रास को जीत लेने के बाद उसे नवाब को ही सौंप देगा। इस प्रकार फ्रांसीसियों की स्थिति मजबूत हो गयी। इन परिस्थितियों में सितम्बर 1746 ई. में फ्रांसीसियों ने मद्रास पर अधिकार कर लिया।

अडियार या सेण्ट थॉम का युद्ध (1746 ई.)

कर्नाटक के नवाब अनवरुद्दीन को आशा थी कि डूप्ले अपने वचन के अनुसार मद्रास उसे सौंप देगा, परन्तु जब डूप्ले ने अपने वचन को पूर्ण नहीं किया, तब अनवरुद्दीन ने एक सेना डूप्ले के विरुद्ध भेजी, किन्तु मद्रास के निकट अडियार या सेण्ट थॉम के युद्ध में डूप्ले ने नवाब की विशाल सेना को पराजित किया।

सेण्ट डेविड तथा पॉण्डिचेरी का घेरा

1748 ई. में अंग्रेजों ने फ्रांसीसियों के मुख्य केन्द्र पॉण्डिचेरी को घेर लिया पर अधिकार नहीं कर सके। अंग्रेजों को घेरा उठाने को बाध्य होना पड़ा इससे डूप्ले की प्रतिष्ठा में और वृद्धि हुई।

युद्ध का अन्त तथा एई.ला. शापैल की सन्धि 1748 ई.

1748 ई. में यूरोप में एई.ला. शापैल की सन्धि द्वारा फ्रांसीसियों तथा अंग्रेजों के मध्य युद्ध समाप्त हो गया। परिणामस्वरूप भारत में भी शान्ति स्थापित हो गयी। इसके अनुसार डूप्ले को मद्रास अंग्रेजों को वापस देना पड़ा।

प्रथम कर्नाटक युद्ध का महत्व

प्रथम कर्नाटक युद्ध में किसी भी पक्ष को कुछ प्राप्त नहीं हुआ तथा यूरोपीय सैनिकों की श्रेष्ठता सिद्ध हो गयी। फ्रांसीसी और अंग्रेजी नौ सैनिक शक्ति से प्रभावित होकर भारतीय नरेश इन शक्तियों की सहायता प्राप्त करने के लिए

टिप्पणी

उत्सुक हो गए। मैलेसन ने लिखा है, ''अधीन प्रजा की स्थिति से उछलकर वे प्रायः नरेशों की समता की स्थिति में पहुँच गये।''

1851 ई. तक अपनी नीतियों के कारण डूप्ले का पतन होने लगा था।

1.3.3 द्वितीय कर्नाटक युद्ध 1749–1754 ई. (Second War of Karnataka 1749-1754 AD)

द्वितीय कर्नाटक युद्ध के प्रमुख कारण निम्नलिखित थे।

तंजौर के उत्तराधिकारी का युद्ध

1738 ई. में होने वाले तंजौर के उत्तराधिकारी युद्ध में पॉण्डिचेरी के फ्रांसीसी गवर्नर डूप्ले ने हस्तक्षेप किया तथा बदले में कारीकल की बस्ती प्राप्त की थी। 1749 ई. में तंजौर में पुनः उत्तराधिकार का युद्ध प्रारम्भ हो गया। इस बार अंग्रेजों ने हस्तक्षेप किया तथा बदले में देवीकोट्टई का क्षेत्र प्राप्त किया। इस प्रकार दोनों कम्पनियों में भारतीय नरेशों के आन्तरिक झगड़ों में हस्तक्षेप करके फायदा उठाने की होड़ लग गई।

हैदराबाद तथा कर्नाटक में आन्तरिक असन्तोष

मई 1748 ई. में हैदराबाद के संस्थापक आसफज़ाह निज़ामुल्मुल्क की मृत्यु हो गयी और उसके बाद उसके पुत्र नासिरजंग और पौत्र मुजफ्फरजंग में उत्तराधिकार का युद्ध छिड़ गया। कर्नाटक के तत्कालीन नवाब अनवरुद्दीन और स्वर्गीय नवाब दोस्त अली के दामाद चाँदा साहब के मध्य संघर्ष प्रारम्भ हो गया। चाँदा साहब स्वयं कर्नाटक का नवाब बनना चाहता था, अनवरुद्दीन को निज़ाम ने गद्दी पर बैठाया था परन्तु उनकी भी 1748 में मृत्यु हो गई। उनका पोता गद्दी के लिए फ्रांसीसियों और चाँदा साहब से मिल गया। उन्होंने डूप्ले से सहायता की याचना की।

अम्बर का युद्ध

चाँदा साहब, मुजफ्फरजंग तथा फ्रांसीसियों तीनों ने मिलकर कर्नाटक पर आक्रमण किया 1749 ई. को वेलोर के दक्षिण–पूर्व में अम्बर के युद्ध में कर्नाटक के नवाब अनवरुद्दीन को पराजित कर मार डाला। अनवरुद्दीन के पुत्र मुहम्मद अली को भागकर त्रिचनापल्ली में शरण लेनी पड़ी। चाँदा साहब कर्नाटक का नवाब बन गया बदले में चाँदा साहब ने पॉण्डिचेरी का निकटवर्ती प्रदेश फ्रांसीसियों को दे दिया।

अंग्रेजों का युद्ध में प्रवेश

अंग्रेजों ने स्वाभाविकतः चाँदा साहब के शत्रु मुहम्मद अली तथा मुजफ्फरजंग के शत्रु नासिर जंग को सहायता प्रदान की। इस प्रकार आंग्ल–फ्रांस संघर्ष पुनः प्रारंभ हुआ।

मुहम्मद अली अनवरूद्दीन का पुत्र था। डूप्ले ने चाँदा साहब को मुहम्मद अली पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित किया क्योंकि वह उसे मार्ग से हटाकर कर्नाटक पर प्रभाव स्थापित करना चाहता था।

1.3.4 युद्ध की प्रमुख घटनाएँ (Main Events of the War)

हैदराबाद तथा अर्काट पर फ्रांसीसी प्रभुत्व की स्थापना

फ्रांसीसी मछलीपट्टम तथा जिन्जी पर अधिकार करने में सफल हुए। दिसम्बर 1750 ई. में फ्रांसीसी सेना ने नासिजंग पर आक्रमण किया और उसकी हत्या कर दी गई। मुजफ्फरजंग को हैदराबाद का निज़ाम घोषित कर दिया। निज़ाम ने फ्रांसीसियों को दीवी एवं मछलीपट्टम के क्षेत्र भेंट किए तथा विशाल धनराशि उपहार में दी। डूप्ले ने अपने योग्य सेनापति बुसी को एक फ्रांसीसी सैन्यदल के साथ हैदराबाद में रखा। चाँदा साहब कर्नाटक का नवाब बना दिया गया। इस प्रकार हैदराबाद और अर्काट दोनों ही राज्यों पर अपना प्रभाव स्थापित करने में डूप्ले को सफलता मिली।

त्रिचनापल्ली में युद्ध– डूप्ले का दक्षिण में बढ़ता हुआ प्रभाव अंग्रेजों के हितों के लिए घातक था। मई 1751 ई. में अंग्रेज टुकड़ी मुहम्मद अली की सहायतार्थ त्रिचनापल्ली पहुँच गई। इस प्रकार त्रिचनापल्ली पर अधिकार करने के लिए दोनों शक्तियों के बीच एक लम्बा युद्ध हुआ।

क्लाइव द्वारा अर्काट का घेरा–ऐसे समय में रॉबर्ट क्लाइव नामक एक योग्य अंग्रेज अधिकारी ने अर्काट पर आक्रमण कर उसे अधिकार में ले लिया। चाँदा साहब ने भाग कर तंजौर में शरण ली, जहाँ उसकी हत्या कर दी गयी।

डूप्ले की वापसी– निरन्तर संघर्ष के कारण फ्रांसीसी कम्पनी की स्थिति कमजोर हो गयी थी। फ्रांसीसी सरकार ने 1754 ई. में डूप्ले को वापस फ्रांस बुला लिया। प्रो. एस.आर. शर्मा के शब्दों में, ''क्लाइव के आगमन तथा डूप्ले के चले जाने से मानो भाग्य ने भारत के भविष्य के शासकों का निर्णय कर दिया।

पॉण्डिचेरी की सन्धि 1755 ई.– फ्रांसीसी सरकार ने 1755 ई. में अंग्रेजों के साथ पॉण्डिचेरी की सन्धि कर ली। हैदराबाद में मुजफ्फरजंग की मृत्यु के बाद सलाबतजंग को फ्रांसीसी अधिकारी बुसी ने निज़ाम बना दिया तथा फ्रांसीसी प्रभाव रखने में उसे सफलता प्राप्त हुई। कर्नाटक का नवाब मुहम्मद अली अंग्रेजों के प्रभाव में था।

1.3.5 कर्नाटक का तृतीय युद्ध– 1756–1763 ई. (Third War of Karnataka 1756-1763 AD)

1761 ई. में पॉण्डिचेरी के पतन के बाद अंग्रेजों ने फ्रांसीसियों की भारत में जो बस्तियां थी, उन पर अधिकार कर लिया। 1763 ई. में पेरिस की सन्धि के परिणामस्वरूप अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों के बीच युद्ध समाप्त हो गया। फ्रांसीसियों को सेना न रखने का वचन देना पड़ा और वे केवल व्यापारिक हितों तक सीमित रह गये।

कर्नाटक के तृतीय युद्ध के निम्नलिखित कारण थे–

1. हैदराबाद में बुसी द्वारा स्थापित फ्रांसीसी प्रभाव अंग्रेजों की आँखों में खटक रहा था।
2. इस बीच यूरोप में 1756 ई. में सप्तवर्षीय युद्ध प्रारंभ हुआ। उसका प्रभाव भारत पर भी पड़ा तथा अंग्रेजों और फ्रांसीसियों में तनाव उत्पन्न हुआ।

फ्रांसीसी सरकार ने गवर्नर काउंट लैली को भारत भेजा। लैली ने मद्रास का घेरा डाल दिया। इस कार्य की सफलता हेतु उसने बुसी को हैदराबाद से बुलाया। बुसी के हटते ही हैदराबाद से फ्रांसीसी प्रभाव समाप्त हो गया। अंग्रेजों ने हैदराबाद के निज़ाम सलाबतजंग को सन्धि करने के लिए विवश किया। सन्धि के अनुसार सलाबतजंग ने मछलीपट्टम तथा उसके आस–पास का विशाल प्रदेश अंग्रेजों को सौंप दिया।

मद्रास भी फ्रांसीसी जीत नहीं सके, क्योंकि लैली तथा बुसी के विचारों में तथा योजनाओं में मतभेद था। दूसरी ओर, फ्रांसीसियों के पास रसद, धन, सैनिक आदि का अभाव था।

वाण्डीवाश का युद्ध

1759 ई. में अक्टूबर में अंग्रेज सेनापति जनरल आयरकूट एक विशाल सेना लेकर मद्रास पहुँचा। उसके पहुँचते ही अंग्रेजों ने आक्रमक कार्यवाहियाँ आरम्भ कर दीं। अन्त में 22 जनवरी, 1760 ई. को वाण्डीवाश के युद्ध में फ्रांसीसियों की पराजय हुई। बुसी को कैद कर लिया गया। फ्रांसीसियों के लिए यह हार निर्णयात्मक साबित हुई।

मई 1760 ई. में अंग्रेजों ने पाण्डिचेरी का घेरा डाल दिया। लैली के पास साधनों का नितान्त अभाव था। 16 जनवरी 1761 ई. को लैली को समर्पण करना पड़ा। उसे कैद कर लिया गया। अंग्रेजों ने पॉण्डिचेरी को हस्तगत कर लिया।

हैदराबाद में सलाबतजंग को निज़ाम तथा कर्नाटक में मुहम्मद अली को नवाब स्वीकार किया गया। इस प्रकार दक्षिण में फ्रांसीसी प्रभाव समाप्त कर दिया गया।

अंग्रेजों की सफलता और फ्रांसीसियों की असफलता के कारण

तृतीय कर्नाटक युद्ध की समाप्ति ने यह स्पष्ट कर दिया कि भारत में अंग्रेजों का ही प्रभुत्व स्थापित होगा। बीस वर्षों की अवधि तक चलने वाले कर्नाटक युद्धों में अग्रेजों की सफलता और फ्रांसीसियों की असफलता के निम्नलिखित प्रमुख कारण थे–

इंग्लैण्ड की कम्पनी का व्यापार फ्रांसीसी कम्पनी की तुलना में लगभग तीन गुना अधिक था।

1. **अंग्रेजों की श्रेष्ठ नाविक सेना**– फ्रांस की तुलना में अंग्रेजों की नाविक शक्ति श्रेष्ठ थी। अपनी श्रेष्ठ नाविक शक्ति के बल पर ही इंग्लैण्ड के सेनापतियों ने अपने समुद्री व्यापारिक मार्ग को सुरक्षित रखा तथा अपने

साम्राज्य का विस्तार भी किया। अंग्रेजी कम्पनी को जब भी आवश्यकता पड़ी, तब उन्हें इंग्लैण्ड से रसद एवं सैनिक सहायता पहुँचाना सुदृढ़ जल सेना के कारण ही सम्भव हो सका। फ्रांसीसी नाविक शक्ति दुर्बल होने के कारण ही फ्रांसीसी सेनापति असफल हुए।

2. **व्यापारिक एवं आर्थिक दृष्टि से अंग्रेजी कम्पनी की श्रेष्ठता–** फ्रांसीसी कम्पनी की तुलना में अंग्रेजी कम्पनी व्यापारिक एवं आर्थिक दृष्टि से श्रेष्ठ एवं समृद्ध थी।

3. **कम्पनियों के स्वरूप–** अंग्रेजी कम्पनी एक गैर सरकारी संस्था थी। कम्पनी पर इंग्लैण्ड की सरकार का नियंत्रण नहीं था। फ्रांसीसी कम्पनी को राज्य का संरक्षण प्राप्त था। फ्रांसीसी कम्पनी के संगठन और व्यवस्था कार्य में सरकार का धन लगा हुआ था। कम्पनी को निश्चित लाभांश मिलता था। इस कारण कम्पनी को उन्नत बनाने में फ्रांसीसी पूर्ण समर्पण से कार्य नहीं करते थे।

4. **अंग्रेजों की श्रेष्ठ सैनिक शक्ति–** अंग्रेज सैनिक फ्रांसीसियों की तुलना में अधिक अनुशासनबद्ध, प्रशिक्षित तथा हथियारों से सुसज्जित होते थे।

1.4 पानीपत का तृतीय युद्ध (Third Battle of Panipat)

अहमद शाह अब्दाली अफगानिस्तान के सदोजाई कबीले का था। उसके पिता का नाम जमानशाह था।

1761 अहमद शाह अब्दाली तथा मराठों के बीच संघर्ष हुआ। अब्दाली नादिरशाह का सेनापति था तथा उसकी मृत्यु के पश्चात् स्वतंत्र शासक बना था। भारत की अपार धन सम्पदा को लूटकर वह शक्तिशाली बनना चाहता था। अब्दाली को यह अवसर उन अमीरों ने दिया जो मुगल दरबार में मराठों की हस्तक्षेप नीति से उनके विरोधी हो गए थे। 1748, 1749 में उन्होंने अब्दाली को आमंत्रित किया। 1752 में मुगल सम्राट तथा मराठों के बीच समझौता हुआ जिसके अन्तर्गत मराठों ने सम्राट को शत्रुओं से सुरक्षा का वचन दिया। 1756 में अब्दाली ने तीसरी बार भारत में प्रवेश किया। 1761 में मराठों तथा अब्दाली की सेनाएँ पानीपत के मैदान में आमने–सामने थी। मराठों को पराजय का सामना करना पड़ा।

इस प्रकार 18वीं शताब्दी के मध्य राजनीतिक अस्थिरता, मुगल सम्राट की दुर्बलता तथा आपसी सहयोग के अभाव एवं आंतरिक फूट ने अंग्रेजों के लिए साम्राज्य स्थापना के लिए भारत के द्वार खोल दिए।

1.4.1 अहमद शाह अब्दाली की लालसा (Ambitions of Ahmad Shah Abdali)

पानीपत का तृतीय युद्ध 1761 में अहमद शाह अब्दाली तथा मराठों के बीच हुआ था। अहमद शाह अफगान था। 1739 में जब नादिरशाह ने भारत में प्रवेश किया

टिप्पणी

तब अब्दाली उसके सेनापति के पद पर नियुक्त था। नादिरशाह की मृत्यु के पश्चात् उसने सिंहासन प्राप्त कर लिया था। अब्दाली महत्वाकांक्षी था तथा वह अपने साम्राज्य के विस्तार के लिए उत्सुक था। अपनी विशाल सेना के लिए भी उसे धन की आवश्यकता थी। अब्दाली को भारत की अपार धन–सम्पदा की जानकारी थी। साथ ही उसे भारत की तत्कालीन राजनीतिक स्थिति और मुगल सम्राट की निर्बलता का भी ज्ञान था। मुगल सम्राट दरबारी षड़यंत्रों से घिरे हुए थे। अमीरों के बीच सत्ता संघर्ष चल रहा था।

चित्र क्र. 1.1: अहमद शाह अब्दाली
https://wikibio.in/ahmad-shah-abdali/

अनेक राज्य जैसे अवध, बुन्देलखण्ड, मालवा, बंगाल, राजस्थान ने मुगल सत्ता को अस्वीकार करते हुए स्वयं को स्वतंत्र रूप से स्थापित कर लिया था। इन्हीं परिस्थितियों ने अब्दाली को भारत पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित किया।

1.4.2 मराठों की विस्तारवादी नीति (Expansionist Policy of Marathas)

1752 ई. में मुगलों ने अपनी सुरक्षा का उत्तरदायित्व मराठों को सौंपकर उनसे सन्धि कर ली। सन्धि के अनुसार मराठों को सुरक्षा प्रदान करने के बदले धन देना तय किया गया। इस सन्धि ने मराठों की महत्वाकांक्षा को बढ़ा दिया। वे राजनीतिक हस्तक्षेप करने लगे। विस्तारवादी नीति के चलते उन्होंने उत्तर–पश्चिम क्षेत्र तक मराठा साम्राज्य स्थापित करने का प्रयास किया। मराठों की हस्तक्षेप, तथा विस्तारवादी नीति से अन्य अमीर उनसे नाराज हो गए तथा अब्दाली को भारत आने का आमंत्रण दिया। पंजाब के शासक तथा मराठों के विरोधी नजीब खाँ ने अब्दाली को आमंत्रित किया। पंजाब पर मराठों का अधिकार अब्दाली के लिए चुनौती थी। अतः मराठों से उसका संघर्ष अनिवार्य हो गया। अब्दाली स्वयं को पंजाब में नादिरशाह का उत्तराधिकारी मानता था। डॉ. आशीवादीलाल के अनुसार,

''पंजाब उसके घर अफगानिस्तान से निकट था। अतः उस पर भी अधिकार करना वह बहुमूल्य समझता था।''

घटनाएँ

अब्दाली की सेना में 60 हजार तथा मराठों की सेना में 45 हजार लड़ाकू सैनिक थे।

अब्दाली अत्यन्त आक्रामक रूप में भारत पहुँचा और पंजाब तथा दिल्ली पर अधिकार कर लिया। 1760 में अब्दाली ने मराठों के साथ भीषण युद्ध किया। इस युद्ध में दत्ताजी सिंधिया मारे गये। जानकोजी घायल हुए। मराठा सेना तितर–बितर हो गई। ऐसी स्थिति में पेशवा ने सदाशिवराव भाऊ को नेतृत्व के लिए भेजा।

सदाशिवराव भाऊ को युद्ध तथा कूटनीति का ज्ञान था। पेशवा के ज्येष्ठ पुत्र विश्वासराव, उनके सहायक सदाशिवराव भाऊ अनेक योग्य सेनापति, 30 हजार सैनिकों तथा उत्तम युद्ध सामग्री के साथ अब्दाली के साथ मुकाबला करने के लिए एकत्रित हुए। इब्राहिम खाँ गार्दी ने भी अपना तोपखाना पानीपत के मैदान में जमा दिया। भाऊ को आशा थी कि अब्दाली ग्रीष्म ऋतु में वापस चला जाएगा और उनके लिए यमुना पार कर अफगान क्षेत्रों पर अधिकार करना आसान होगा, परन्तु अब्दाली भारत में ही रुका और दूसरी तरफ वर्षा ऋतु जल्दी प्रारंभ होने से मराठे यमुना पार नहीं कर सके। लम्बे समय तक शिविर में रहने के कारण सेना की रसद समाप्त होने लगी। भाऊ ने दिल्ली की तरफ प्रस्थान किया। सूरजमल जाट ने भाऊ के साथ हाथ मिला लिया। मराठों का दिल्ली पर अधिकार हो गया।

अवध के शासक शुजाउदौला ने अफगानों का साथ दिया। सूरजमल जाट भी भरतपुर वापस लौट गया क्योंकि भाऊ ने उसे दिल्ली का संरक्षक बनाने से मना कर दिया था।

1760 तक भाऊ दिल्ली से धन और अन्न प्राप्त करते रहे। उसके बाद उन्होंने दिल्ली से 78 मील दूर कुंजपुरा पर महत्वपूर्ण विजय प्राप्त की जिससे मराठा सेना को अन्न, धन, अस्त्र–शस्त्र, गोला बारूद की पूर्ति हो गई।

कुंजपुरा पर मराठों की विजय से अब्दाली अत्यन्त क्रुध्द हुआ और तोपखाने सहित यमुना पर जा पहुँचा। यह समाचार प्राप्त करते ही भाऊ भी पानीपत जा पहुँचा।

दो महिने तक दोनों सेनाएँ आमने सामने खड़ी रहीं। दोनों ओर से आक्रमण की पहल नहीं हुई। मराठा शिविर में अन्न, धन का अभाव होने लगा। अफगान सेना खाद्य सामग्री शिविरों तक पहुँचने नहीं दे रही थी। महिलाओं ने गहने देकर खाद्य–सामग्री लाने का प्रबन्ध किया। ऐसी स्थिति में मराठों ने 14 जनवरी 1768 मकर संक्रांति के दिन युद्ध करने का निश्चय किया।

प्रातः 9 बजे युद्ध आरंभ हुआ। मराठों ने युद्ध कौशल का परिचय देते हुए अब्दाली की सेना को मैदान छोड़कर भागने पर मजबूर कर दिया। अब्दाली ने मराठा सेना की थकान का लाभ उठाया और अपनी 10 हजार की सुरक्षित सेना

टिप्पणी

को युद्ध मैदान में भेज दिया। इस सेना तथा ऊँटों पर लदी हल्की तोपों ने मराठों का विनाश कर दिया। विश्वास राव वीरगति को प्राप्त हुए।

परिणाम– विश्वास राव की मृत्यु का समाचार सुन भावुक होकर भाऊ घोड़े पर बैठकर अफगान सेना पर टूट पड़े किन्तु मारे गए। भाऊ को हाथी पर न देखकर मराठा सेना में भागदौड़ मच गई। अफगान सेना ने कत्लेआम किया। लगभग 75,000 मराठे मारे गए और हजारों को बंदी बना लिया गया। मराठों का तोपखाना, हाथी तथा सम्पत्ति जब्त कर ली गई। पानीपत का तृतीय युद्ध इतिहास के विनाशकारी युद्धों में से एक है। महाराष्ट्र में ऐसा एक भी घर नहीं था, जिसका कोई न कोई सदस्य युद्ध में मारा न गया हो।

1.5 भारत में ईस्ट इंडिया कम्पनी की सत्ता की स्थापना (Establishment of East India Company's Rule in India)

1.5.1 ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना (Establishment of East India Company)

1600 ई. में इंग्लैण्ड में महारानी एलिजाबेथ के शासनकाल में ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना हुई जिसे पूर्वी देशों में व्यापार का अधिकार दिया गया। कम्पनी ने मुगल सम्राटों से व्यापारिक कोठियाँ स्थापित करने की अनुमति प्राप्त की तथा मद्रास, बम्बई और बंगाल प्रेसीडेन्सियों की स्थापना कर ली।

अंग्रेजों से पहले अन्य यूरोपीय शक्तियों ने भारत में प्रवेश कर लिया था। 1498 में पुर्तगाली नाविक वास्को–डि–गामा ने भारत के बंदरगाह कालीकट पर कदम रखा। 1515 तक पुर्तगालियों ने कई कोठियाँ स्थापित कर लीं।

1602 में डचों ने डच ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना की। भारत में उन्होंने सूरत, अहमदाबाद, कासिम बाजार, पटना, कोचीन एवं अन्य व्यापारिक केन्द्र स्थापित किए।

फ्रांसीसियों ने विलम्ब से भारत में प्रवेश किया। 1664 में लुई चौदहवें में फ्रेंच ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना की। फ्रांसीसियों ने मसौलीपट्टम, पॉण्डिचेरी तथा सूरत में बस्ती की स्थापना की।

अंगेजों के समक्ष प्रतिद्वन्दी व्यापारिक कम्पनियों से संघर्ष कर स्वयं को स्थापित करने की चुनौती की। 18वीं शताब्दी तक उन्होंने पुर्तगालियों, डचों एवं फ्रांसीसियों को परास्त कर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया। उनकी प्रबल सैन्य शक्ति एवं आर्थिक सुदृढ़ता से प्रभावित होकर देशी शक्तियाँ भी उन्हें पक्ष में करने का प्रयास करने लगीं। इसका लाभ ईस्ट इंडिया कम्पनी ने उठाया एवं व्यापारिओं के साथ राजनीतिक लाभ भी प्राप्त करने लगी। परिणाम यह हुआ कि भारत अंग्रेजी उपनिवेश और बाद में अंग्रेजी साम्राज्य का हिस्सा बन गया।

टिप्पणी

1.6 प्लासी और बक्सर का युद्ध (Battles of Plassey and Buxar)

1.6.1 प्लासी का युद्ध (23 जून 1757 ई.) (Battles of Plassey, 23rd June 1757 AD)

ईस्ट इंडिया कम्पनी का भारत आने का प्रारंभिक कारण व्यापारिक था। मुगल सम्राट जहाँगीर ने 1613 में उन्हें कपड़े के व्यापार की अनुमति दी। अंग्रेजों ने पहले सूरत और बाद में बम्बई तथा मद्रास में व्यापारिक केन्द्र स्थापित किए। अब तक अंग्रेजों ने भारत की राजनीतिक दुर्बलता को समझ लिया था और वे व्यापार के साथ सत्ता स्थापित करने का भी प्रयास करने लगे। ब्रिटिश शासन की नींव बंगाल में पड़ी।

चित्र क्र. 1.2: प्लासी का युद्ध
https://www.britishbattles.com/anglo-french-wars-in-india/battle-of-plassey/

बंगाल

बंगाल एक समृद्ध प्रान्त था। बंगाल का समुद्री तट तथा उर्वर प्रदेश व्यापार के लिए लाभदायी थे। सम्राट औरंगज़ेब ने मुर्शिदकुली जाफ़र खाँ को बंगाल का दीवान नियुक्त किया था। 1717 में फर्रूखसियर के शासनकाल में जाफर खाँ ने स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर दिया। 1739 में बंगाल के नवाब सरफराज़ ख़ान को मार अलीवर्दीखाँ ने अपनी सत्ता स्थापित की। यूरोपीय जातियों से सूबे की रक्षा के लिए अलीवर्दीखाँ ने मराठों से सन्धि कर ली। इसके बदले 12 लाख रुपये चौथ के रूप में मराठों को देना स्वीकार किया।

टिप्पणी

सिराजुद्दौला का उत्तराधिकार एवं आंतरिक मनमुटाव

अलीवर्दीखाँ ने 1740 से 1756 तक बंगाल, बिहार और उड़ीसा पर शासन किया। उसका कोई पुत्र नहीं था। उसकी तीन पुत्रियाँ थी जिनका विवाह उसने क्रमशः ढाका, पूर्णिया एवं पटना के सूबेदारों से किया। उसने अपनी सबसे छोटी पुत्री के पुत्र सिराजुद्दौला को अपना उत्तराधिकारी चुना। इससे उसकी बड़ी पुत्री घसीटी एवं बेगम पूर्णिया के शासक का पुत्र शौकत जंग उसके विरोधी हो गये और सिराजुद्दौला के लिए कठिनाइयाँ बढ़ गईं। सिराजुद्दौला आंतरिक रूप से ही षड़यंत्रकारियों से ही घिरा हुआ नहीं था बल्कि अंग्रेज भी चुनौती के रूप में उसके समक्ष थे। इन्हीं परिस्थितियों ने प्लासी के युद्ध का वातावरण तैयार कर दिया था।

1.6.2 प्लासी का युद्ध-कारण एवं घटनाएँ (Battle of Plassey-Reasons and Events)

सिराजुद्दौला और अंग्रेजों की बीच शीघ्र ही बैर भाव की स्थिति उत्पन्न होने लगी। अंग्रेजों को पूर्वानुमान नहीं था कि सिराजुद्दौला बंगाल का भावी नवाब होगा। अतः उन्होंने उसके शत्रु घसीटी बेगम तथा उसके दीवान राजवल्लभ का साथ दिया। अंग्रेजों ने राजवल्लभ के पुत्र कृष्णदास को शरण दी और सिराजुद्दौला द्वारा कृष्णदास को वापस मांगने पर उसके आदेश को नहीं माना।

अंग्रेजों ने नवाब की आज्ञा के बिना ही कलकत्ता में किलेबंदी आरंभ की। सिराजुद्दौला के आदेश के बाद भी किलेबंदी नष्ट नहीं की गयी। अंग्रेजों ने मुगल सम्राट फर्रूखसियर से व्यापारिक कर न देने की सुविधा प्राप्त कर ली थी। अब अंग्रेज व्यापारियों ने सुविधाओं का दुरुपयोग करना प्रारंभ कर दिया था। कम्पनी के कर्मचारी तथा उनके रिश्तेदारों ने भी इसका उपयोग शुरु कर दिया। इससे नवाब की आय में कमी आई। यही नहीं अंग्रेजों ने हिन्दू व्यापारियों के साथ मिलकर नवाब के विरुद्ध षड़यंत्र आरंभ कर दिए।

ब्लैक होल दुर्घटना

अंग्रेजों ने कलकत्ता में किलेबंदी नष्ट करने के कोई आदेश का पालन नहीं किया। अतः 14 जून को नवाब ने कासिम बाजार और 20 जून 1756 को कलकत्ता पर अधिकार कर लिया। ऐसा कहा जाता है कि फोर्ट विलियम कलकत्ता पर अधिकार करने के बाद नवाब ने 146 अंग्रेज बंदियों को एक छोटी सी कोठरी में, जो 18 फुट लम्बा तथा 14 फुट 10 इंच चौड़ा था बन्द कर दिया। इनमें से 123 दम घुटने से मर गए। केवल 23 जीवित बचे। इस घटना को 'कालकोठरी' या 'ब्लैक होल' दुर्घटना के नाम से जाना जाता है। कुछ इतिहासकार इसे विश्वसनीय नहीं मानते हैं।

कलकत्ता पर अंग्रेजों का पुनः अधिकार

सिराजुद्दौला अनुभवहीन था। साथ ही षड़यंत्रकारियों से घिरा हुआ था। अंग्रेज इस स्थिति से परिचित थे। सिराजुद्दौला के लिए कोई उपाय करना कठिन हो

रहा था। अंग्रेजों ने सैनिक तैयारियाँ की और नगर के व्यापारी जगत सेठ और अमीनचन्द को अपनी तरफ मिला लिया। जनवरी 1757 को कलकत्ता पर क्लाइव ने अधिकार कर लिया। विवश होकर नवाब को अंग्रेजों के साथ अलीनगर की सन्धि करनी पड़ी। अंग्रेजों ने समस्त अधिकारों को पुनः प्राप्त कर लिया।

अंग्रेजों द्वारा चन्द्रनगर पर अधिकार

यूरोप में अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों के बीच सप्तवर्षीय युद्ध शुरू हो चुका था, अतः भारत में भी अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के बीच संघर्ष आरंभ हो गया। कलकत्ता के उत्तर में स्थित चन्द्रनगर में फ्रांसीसियों की बस्ती थी। अंग्रेजों ने उस पर अधिकार कर लिया। फ्रांसीसियों ने नवाब के पास शरण ली। अंग्रेजों ने नवाब से फ्रांसीसियों को सुपुर्द करने को कहा पर नवाब ने अस्वीकार कर दिया।

सिराजुद्दौला के प्रति अंग्रेजों ने षड़यंत्र आरंभ कर दिये क्योंकि उन्हें लगा कि नवाब उनके विरुद्ध फ्रांसीसियों के साथ गठबन्धन कर लेगा।

षड़यंत्रों के तहत् अंग्रेजों ने सिराजुद्दौला को गद्दी से हटाने और किसी ऐसे व्यक्ति को नवाब बनाने का विचार किया जो उनके इरादों के अनुकूल हो। उन्होंने सेनानायक राय दुर्लभ, मीर जाफर, साहूकार जगतसेठ को अपनी तरफ मिला लिया। मीर जाफर को नवाब बनाना निश्चित किया गया। इसके बदले मीर जाफर ने अंग्रेजों को 1 करोड़ 50 लाख रुपये कलकत्ता के विनाश की क्षतिपूर्ति के रूप में, कम्पनीकी आवश्यक प्रतिरक्षा सेना के खर्च का भार और दक्षिण भाग की जमींदारी देने का वचन दिया। क्लाइव ने इस षड़यंत्र में मध्यस्थता करने वाले व्यापारी अमीचंद के विरुद्ध जाली पत्र तैयार करके वाटसन के हस्ताक्षर के लिए भेजा किन्तु वाटसन ने अस्वीकार करने पर क्लाइव ने जाली हस्ताक्षर बनाकर अमीचन्द को एक पैसा नहीं दिया।

1.6.3 प्लासी के युद्ध की घटनाएँ (Events of Battle of Plassey)

षड़यंत्रकारियों से सन्धि के बाद क्लाइव ने युद्ध की तैयारी प्रारंभ कर दी। उसने नवाब पर अंग्रेजों पर अत्याचार करने का बहाना बनाया और 22 जून 1757 को सेना लेकर प्लासी के मैदान पर पहुँच गया। नवाब की सेना भी पहुँच गई। नवाब की सेना में 50,000 सैनिक थे। क्लाइव की सेना में 3,000 भारतीय और 800 यूरोपीय सैनिक थे। 23 जून 1757 को प्रातःकाल युद्ध आरंभ हुआ। सेनापति मीर जाफर और रायदुर्लभ निष्क्रिय रहे, उन्होंने युद्ध में कोई भाग नहीं लिया। मीरमदीन के नेतृत्व में छोटी सी सैन्य टुकड़ी युद्ध कर रही थी किन्तु उसके मारे जाने के साथ सैनिकों का मनोबल टूटा और वो मैदान से भाग खड़े हुए। नवाब ने भी घबराकर युद्धभूमि छोड़ना श्रेयस्कर समझा। पटना में उसे बन्दी बना लिया गया और मुर्शिदाबाद लाकर मीर जाफर के पुत्र मीरन के हाथों मार दिया गया। इस प्रकार अंग्रेजों के षड़यन्त्र की जीत हुई।

टिप्पणी

1.6.4 प्लासी के युद्ध के परिणाम (Result of the Battle of Plassey)

प्लासी का युद्ध राजनीतिक, आर्थिक तथा नैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण युद्ध था। इससे बंगाल पर अंग्रेज की साख बढ़ी और सम्पूर्ण भारत की विजय प्राप्त करने का हौसला मिला। मीर जाफर को बंगाल का नवाब बना दिया गया। मीर के गद्दी पर बैठते ही अंग्रेजों ने लूट शुरू की। मीर जाफर ने क्लाइव को ही 2,34,000 पौण्ड दिये, वाटसन को 80,000 पौण्ड, गवर्नर ड्रेक को 31,500 पौण्ड दिये गये। परिणाम यह हुआ कि राजकोष रिक्त हो गया। इसके अलावा अंग्रेजों को बंगाल, बिहार और उड़ीसा में निःशुल्क व्यापार की स्वतंत्रता मिली। कलकत्ता में कम्पनी की टकसाल स्थापित हो गयी और 24 परगना की जमींदारी मिल गयी। मीर जाफर नाममात्र का नवाब रह गया। मैलेसन के अनुसार, ''इतना तुरन्त, स्थायी और प्रभावशाली परिणामों वाला युद्ध कोई नहीं हुआ।''

1.6.5 बक्सर का युद्ध (1764 ई.) (Battle of Buxar, 1764 AD)

नवाब पद पर मीर कासिम की नियुक्तिः– मीर जाफर को प्लासी के युद्ध के बाद बंगाल की मसनद प्राप्त हुई थी किन्तु वह केवल नाम मात्र का नवाब था। उसका राजकोष रिक्त था। कम्पनी उससे भारी मात्रा में धन प्राप्त कर चुकी थी। 1760 में क्लाइव भी इंग्लैण्ड जा चुका था। हॉलवेल को अस्थायी गवर्नर बनाया गया। कुछ लाभ की गुंजाइश न हो सकने से हॉलवेल नाराज़ हो गया। उसने मीर जाफर को नवाब के पद से हटाने का प्रस्ताव रखा। उसने मीर जाफर पर क्रूरता, अत्याचार, विलासिता एवं डचों से सहयोग के आरोप लगाए। मीर जाफर के स्थान पर उसके दामाद मीर कासिम को नवाब बनाना निश्चित किया गया। इसके बदले मीर कासिम ने कम्पनी को बर्दवान, मिदनापुर, चटगाँव के जिले देना स्वीकार किया। इस समय स्थायी गवर्नर वेंसिटार्ट भी भारत पहुँच चुका था। मीर जाफर को महल में घेर कर अंग्रेजों ने उसे नवाब का पद छोड़ने के लिए बाध्य किया। अंग्रेजों का प्रतिरोध करना कठिन था। अतः विवश मीर जाफर ने मीर कासिम के पक्ष में पद का परित्याग कर दिया।

बक्सर के युद्ध के कारण

अंग्रेजों का विचार था कि मीर कासिम भी मीर जाफर की तरह उनकी मांगों को पूरा करता रहेगा, किन्तु मीर कासिम ने अपनी योग्यता सिद्ध करते हुए शासन में सुधार करने आरंभ कर दिये। भ्रष्टाचार को रोकने के लिए अपराधियों को दण्ड दिया। सेना को मजबूत करने के लिए यूरोप से प्रशिक्षक नियुक्त किए। सीमान्त दुर्गों पर मजबूत सुरक्षा इंतजाम किए। अंग्रेजों के कुचक्र एवं हस्तक्षेप से बचने के लिये मुर्शिदाबाद को छोड़कर मुंगेर में राजधानी स्थापित की। राजस्व व्यवस्था में सुधार किया। आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए स्वयं आय–व्यय का निरीक्षण करना प्रारंभ किया। अंग्रेजों को उसके प्रयास खटकने लगे और वे उसके विरोधी हो गए। उन्होंने उसे नवाब के पद से हटा दिया। मीर कासिम क्रोधित हो गया एवं अंग्रेजों से युद्ध करने के लिए तत्पर हो गया।

ईस्ट इंडिया कम्पनी व्यापार के उद्देश्य भारत आयी थी। व्यापार की सुविधा के लिए कम्पनी ने 1717 में मुगल सम्राट फर्रुखसियर से चुंगी में रियायत प्राप्त की किन्तु बाद में अंग्रेजों ने दस्तक का दुरुपयोग व्यापक रूप से प्रारंभ कर दिया। वे अन्य व्यापारियों से भी रिश्वत लेकर उन्हें दस्तक उपयोग करने की सुविधा देने लगे। इससे बंगाल की आय में भारी मात्रा में कमी आई। मीर कासिम ने अंग्रेजों को रोकने की कोशिश की। अतः अंग्रेज उसे गद्दी से हटाने की साज़िश करने लगे।

घटनाएँ– मीर कासिम अंग्रेजों के इरादों को भांप गया तथा उसे कम्पनी की पटना जा रही नावों को मुंगेर के पास रोक लिया। कम्पनी ने उस पर पटना पर अधिकार करने का दोषारोपण कर युद्ध प्रारंभ कर दिया। मीर कासिम अंग्रेजों का सामना करने में असफल रहा। क्रोध में उसने अंग्रेज बंदियों की हत्या कर दी। इस घटना को पटना हत्याकांड के नाम से जाना जाता है। मीर कासिम का कहना था, **''यदि मैं शत्रुओं के हाथों में पड़ जाता हूँ तो वे मुझे जीवित नहीं छोड़ेंगे। मैं अपनी सत्ता से वंचित हो रहा हूँ, किन्तु फिर भी मुझे इस बात से कुछ न कुछ संतोष है कि मेरे पतन से मेरे शत्रुओं को संतोष न होगा क्योंकि पहले मैं इन सबका वध कर दूंगा''।** इसके बाद मीर कासिम ने अवध के नवाब सिराजुउ्दौला का सहयोग प्राप्त किया ताकि वह अंग्रेजों से मुकाबला कर सके। अंग्रेजों ने पुनः मीर जाफर को बंगाल का नवाब बना दिया था।

परिणाम– मीर कासिम, अवध के नवाब शुजाउद्दौला एवं मुगल सम्राट शाह आलम की संयुक्त सेना ने अंग्रेजों के विरुद्ध 22 अक्टूबर 1764 ई. को बक्सर के मैदान में परचम लहराया। संयुक्त सेना 40,000 सिपाही से सुसज्जित थी जबकि अंग्रेजी सेना की संख्या 8,000 थी और 22 तोपें सम्मिलित थी। मीर कासिम की सेना अंग्रेजी सेना का मुकाबला नहीं कर पाई तथा पराजित हुई। मीर कासिम, शुजाउद्दौला को भागना पड़ा। शाह आलम अंग्रेजों से मिल गया।

बक्सर का युद्ध सैनिक तथा राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण था। इस युद्ध के द्वारा अंग्रेजों ने अपनी सामरिक कुशलता का प्रमाण दिया।

1.7 बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दिवानी (Civil Order of Bengal, Bihar and Orissa)

बंगाल की अव्यवस्था समाप्त करने के लिए लॉर्ड क्लाइव को 1765 ई. में पुनः भारत गवर्नर बनाकर भेजा गया। वह इस पद पर 1767 ई. तक रहा। क्लाइव ने मीर जाफर के पुत्र को कलकता का नवाब बना कर सत्ता पर नियंत्रण कर लिया।

क्लाइव के प्रशासनिक कार्य

1. **भ्रष्टाचार में कमी**– भ्रष्टाचार कम करने के लिए कम्पनी के कर्मचारियों को भेंट व उपहार लेना निषेध कर दिया गया। उनके वेतन में वृद्धि की गई।

2. **सैनिक सुधार**– युद्ध में अपाहिज हुए अथवा बीमार सैनिकों की सहायता हेतु क्लाइव कोष की स्थापना की गई। सेना को तीन भागों में विभाजित कर मुंगेर, बाकीपुर और इलाहाबाद में रखा गया।

3. **व्यापारिक सुधार**– कम्पनी के कर्मचारी कम्पनी के हितों की अवेहलना कर स्वयं लाभ कराने में संलग्न थे। क्लाइव ने उनके व्यक्तिगत व्यापार पर प्रतिबंध लगा दिया। बिना चुंगी दिए माल को ले जाने का अधिकार सीमित कर दिया। व्यापारिक संघ की स्थापना की जिसे नमक, सुपारी और तम्बाकू के व्यापार का एकाधिकार दिया गया।

4. **इलाहाबाद की सन्धि**– 1765 ई. बक्सर के युद्ध में अंग्रेजों ने मीर कासिम शुजाउद्दौला और मुगल सम्राट शाह आलम को पराजित किया था। किन्तु उनके मध्य कोई समझौता नही हुआ था। क्लाइव ने सर्वप्रथम अवध के नवाब शुजाउद्दौला के साथ इलाहाबाद की सन्धि की। सन्धि की प्रमुख शर्ते थी–

शर्तें

1. अंग्रेज शुजाउद्दौला को अवध लौटा देंगे। इसके बदले में वे 50 लाख रुपये लेंगे।

2. चुनार का दुर्ग एवं नवाब को सीमा के भीतर बिना शुल्क व्यापार की सुविधा। अंग्रेजों ने नवाब को सुरक्षा प्रदान की जिसका खर्च स्वयं नवाब को उठाना था। यह सन्धि स्थायी रही और अवध 1857 ई. क्रांति तक अंग्रेजों का मित्र बना रहा।

चित्र क्र. 1.3: लॉर्ड क्लाइव

https://www.telegraphindia.com/west-bengal/the-house-clive-did-not-build/cid/1411033

5. **मुगल सम्राट शाह आलम के साथ सन्धि–** बक्सर के युद्ध में शाह आलम पराजित होने के बाद अपनी प्रतिष्ठा खो चुके थे। क्लाइव इस दुर्बलता का लाभ उठाना चाहता था। क्लाइव की सम्राट के साथ भी इलाहाबाद की सन्धि की शर्ते निम्नलिखित थी।

   1. अवध से कड़ा, इलाहाबाद और आस पास के क्षेत्र लेकर मुगल बादशाह को दे दिए।
   2. क्लाइव द्वारा बंगाल, बिहार उड़ीसा की दिवानी प्राप्त करना था। अंग्रेजों ने मुगल बादशाह को 26 लाख रुपये वार्षिक देना स्वीकार किया। इस सहायता के लिए मुगल बादशाह ने अंग्रेजों को बंगाल, बिहार, उड़ीसा की दिवानी का अधिकार प्रदान किया। कम्पनी ने निज़ामत के व्यय के लिए सम्राट को 53 लाख रुपये देना स्वीकार किया।

यह समझौता क्लाइव की कूटनीतिक एवं प्रशासनिक कुशलता दर्शाता है। दिवानी प्राप्त होने के बाद अंग्रेजों को प्रांत का राजस्व इकठ्ठा करने का तथा उसका प्रशासन चलाने का अधिकार प्राप्त हो गया। दीवान की नियुक्ति का अधिकार भी अंग्रेजों को प्राप्त हो गया। नवाब को मात्र 53 लाख रुपया वार्षिक देने के बाद शेष सम्पूर्ण आय कम्पनी के पास रहने लगी। क्लाइव ने इस सफलता के बाद अंग्रेजों का स्थान हिन्दुस्तान में स्थायी कर दिया। उसने स्वयं संचालकों को लिखा, ''**भविष्य में न तो किसी नवाब के पास इतनी सम्पत्ति रह जाएगी और न इतनी शक्ति रह जाएगी की वह आपको उलटने का प्रयत्न कर सके''।**

1.8 द्वैध शासन (Diarchy)

1.8.1 द्वैध शासन प्रणाली (Diarchy System)

बंगाल में बक्सर के युद्ध के बाद ब्रिटिश साम्राज्य का नियंत्रण स्थापित करने का कार्य रॉबर्ट क्लाइव ने किया। 1765 ई. में लॉर्ड क्लाइव द्वारा बंगाल प्रांत में द्वैध शासन प्रणाली स्थापित की गई। वह दूसरी बार बंगाल का गवर्नर बनकर आया। तब तक बंगाल के नवाब मीर जाफर की मृत्यु हो चुकी थी। कम्पनी ने उसके पुत्र नजमुद्दौला को बंगाल की मसनद पर बैठा दिया था तथा उसके बदले भारी रकम वसूल कर ली थी। क्लाइव को प्रशासनिक समस्याएँ सुलझाना था। उसने द्वैध शासन की स्थापना की।

क्लाइव ने अवध के नवाब शुजाउद्दौला के साथ इलाहाबाद की सन्धि कर ली जिसके अनुसार–

- नवाब ने 50 लाख रुपये कम्पनी को क्षतिपूर्ति के रूप में दिए।
- इलाहाबाद एवं कड़ा के दो जिले कम्पनी को मिले।
- कम्पनी ने शत्रुओं से नवाब की रक्षा का वचन दिया जिसका खर्च उसे स्वयं उठाना पड़ेगा।
- कम्पनी को निःशुल्क व्यापार की अनुमति प्राप्त हुई।

टिप्पणी

क्लाइव ने मुगल सम्राट शाह आलम से भी सन्धि कर ली जिसके अनुसार–

1. कम्पनी को बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दिवानी प्राप्त हुई
2. कम्पनी ने अवध से प्राप्त जिलों को सम्राट को दे दिया।

दिवानी प्राप्त हो जाने से कम्पनी को 3,00,33,000 पौण्ड वार्षिक राजस्व मिलने लगा। इस तरह कम्पनी ने राजस्व संबंधी कार्य अपने हाथों में ले लिया और प्रशासन का कार्य नवाब के हिस्से में ही रहने दिया। इसे द्वैध शासन प्रणाली कहा गया। आंतरिक मामले जैसे शांति व्यवस्था की स्थापना, आत्मरक्षार्थ सेना रखना नवाब के हाथों में था और इसके लिए नवाब 53 लाख रुपये वार्षिक देना कम्पनी ने स्वीकार किया। दो वर्ष बाद इस राशि को घटाकर 32 लाख रुपये कर दिया गया। नवाब अल्पायु थे इसलिए शासन के कार्य के लिए कम्पनी ने दो नायब नियुक्त किए –सिताबरॉय तथा मोहम्मद रजा खाँ। नवाब को 32 लाख और सम्राट शाह आलम को 26 लाख रुपये वार्षिक देकर शेष सारा राजस्व कम्पनी हड़प कर जाती थी। इस प्रकार द्वैध शासन प्रणाली द्वारा कम्पनी सारी शक्ति अपने हाथें में ले ली किन्तु जिम्मेदारी नहीं। यह व्यवस्था 1772 तक चलती रही।

क्लाइव द्वारा स्थापित यह प्रणाली दोषपूर्ण थी। बंगाल के इतिहास में भारी समस्या का काल प्रारंभ हुआ। कम्पनी के लूट से जनता को भारी कष्ट उठाने पड़े। अंग्रेजों के अत्याचार बढ़ने लगे। समस्त शक्ति उनके हाथों में थी और नवाब के पास उन्हें रोकने का अधिकार नहीं था। 1769–70 ई. के भयंकर अकाल में करों की वसूली में कोई रियायत नहीं की गई। कर एकत्रित करने वाले अधिकारी बीच में धन हड़प जाते थे जिससे कम्पनी के कोष तक कुछ नहीं पहुँच पाता था। इस तरह कम्पनी को भी घाटा हुआ। इन सारे दोषों के कारण 1772 ई. में वारेन हेस्टिंग्स ने इसे समाप्त कर दिया।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. कर्नाटक की राजधानी थी–

   (अ) तंजौर (ब) अर्काट

   (स) मदुरै (द) मद्रास

2. प्रथम कर्नाटक युद्ध कब हुआ?

   (अ) 1744 ई. (ब) 1745 ई.

   (स) 1746 ई. (द) 1747 ई.

3. पानीपत का तृतीय युद्ध कब हुआ?

   (अ) 1760 ई. (ब) 1761 ई

   (स) 1762 ई. (द) 1765 ई.

4. प्लासी का युद्ध कब हुआ?
   (अ) 23 जून 1758 ई. (ब) 23 जून 1757 ई.
   (स) 30 जुलाई 1758 ई. (द) 26 मई 1756 ई.
5. बक्सर का युद्ध कब हुआ?
   (अ) 1764 ई. (ब) 1766 ई.
   (स) 1770 ई. (द) 1768 ई.
6. इलाहाबाद की सन्धि कब हुई?
   (अ) 1765 ई. (ब) 1767 ई.
   (स) 1790 ई. (द) 1760 ई.
7. क्लाइव इंग्लैण्ड कब लौटा?
   (अ) 1765 ई. (ब) 1766 ई.
   (स) 1767 ई. (द) 1768 ई.

1.9 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर (Answers to Check Your Progress)

1. (ब)
2. (अ)
3. (ब)
4. (ब)
5. (अ)
6. (अ)
7. (स)

1.10 सारांश (Summary)

18वीं शताब्दी से पूर्व युरोपीय जातियों ने भारत में व्यापारियों के रुप में प्रवेश कर अनेक स्थानों पर व्यापारिक केन्द्र स्थापित किए। प्रारंभ में उनका उद्देश्य व्यापार द्वारा लाभ कराना था जो बाद में बदलकर राजनीतिक सत्ता स्थापित करना हो गया। इसका मुख्य कारण भारत की कमजोर राजनीतिक दशा थी। 1708 ई. में औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल साम्राज्य छिन्न भिन्न होने लगा। दरबार षडयन्त्रों से ऐसे घिर गया की सम्राट भी इसका शिकार होने लगे। 1739 ई. में नादिरशाह के दिल्ली आक्रमण ने अधिक स्थिति खराब कर दी।

केंद्र शक्ति के अभाव में प्रांत स्वतंत्र होने लगे। मालवा, गुजरात तथा बुंदेलखण्ड पर मराठा, पंजाब पर सिक्ख, काबुल बलूचिस्तान और सिंध पर पारसियों, रुहेलखण्ड पर रुहेला, बंगाल, बिहार और उड़ीसा पर अलीवर्दी खाँ और भरतपुर पर जाने का अधिकार हो गया। दक्षिण भारत में मुगल सुबेदार चिनकिलिच खां ने स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर निज़ामुल्लुक की उपाधि धारण की दी। इस प्रकार औरंगजेब के शासनकाल में बिगड़ती हुई राज्य व्यवस्था उग्र रुप धारण करती गई। अंग्रेज इसी दशा का लाभ उठाकर अपनी सत्ता स्थापित करने का स्वप्न देखने लगे किन्तु सत्ता के इस संघर्ष में उन्हें अन्य यूरोपीय शक्ति फ्रांसीसियों का सामना करना पड़ा। परिणामस्वरुप दोनों के मध्य तीन कर्नाटक युद्ध हुए।

अन्ततः अंग्रेज विजयी हुए और उन्हें सम्पूर्ण भारत पर राज्य स्थापना का अवसर प्राप्त हुआ। मराठा शक्ति उनकी महत्वाकांक्षा पूर्ति में बाधा बन सकती थी किन्तु 1761 ई. में अफगान शासक अहमदशाह अब्दाली के साथ हुए पानीपत के तृतीय युद्ध में हुई पराजय ने मराठा शक्ति का सर्वनाश कर दिया था और अंग्रेजों के मन से उनका भय समाप्त कर दिया था। प्लासी और बक्सर के युद्धों के बाद उन्होंने बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दिवानी प्राप्त कर स्वयं को मालिक के रुप में स्थापित कर दिया। क्लाइव के अनुसार, आप केवल नवाब के राज्य के कर वसूलने वाले ही नहीं रह गयें, अब आप एक तरह के नवाब के राज्य के मालिक भी बन गए है। दिवानी का अधिकार प्राप्त करने के बाद क्लाइव ने बंगाल में दोहरी शासन व्यवस्था स्थापित की जिसके अनुसार निज़ामत का प्रबन्ध नवाब के हाथों में और दिवानी का अधिकार कम्पनी के हाथों में आ गया। इस द्वैध शासन प्रणाली ने कम्पनी को बंगाल का मालिक और नवाब को नाममात्र का शासक बना दिया।

1.11 मुख्य शब्दावली (Key Terminology)

- **दिवानीः** प्रान्त का राजस्व
- **निज़ामतः** सेना का पुलिस प्रबन्ध
- **दस्तकः** निशुल्क व्यापार पत्र (Free Pass) अंग्रेजों को मुगल सम्राट फर्रुखासियर द्वारा प्रदान बिना कर दिए व्यापार का अधिकार।

1.12 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास (Self Assessment Questions and Exercises)

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. नादिरशाह के आक्रमण के कारण लिखिए।
2. आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष में डूप्ले की भूमिका बताइए।
3. पानीपत के युद्ध का तात्कालिक कारण लिखिए।

4. क्लाइव की द्वैध शासन प्रणाली समझाइए।
5. बक्सर के युद्ध के महत्व पर प्रकाश डालिए।
6. इलाहाबाद की सन्धि की व्याख्या किजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. 18वीं शताब्दी में कर्नाटक की राजनीतिक दशा समझाइए।
2. मुगल साम्राज्य के पतन के कारण लिखिए।
3. कर्नाटक युद्धों में फ्रांसीसियों की पराजय के कारण बताइये।
4. पानीपत के तृतीय युद्ध के कारण एवं परिणाम बताइये।
5. पानीपत के तृतीय युद्ध में मराठों की पराजय के कारण लिखिए।
6. प्लासी के युद्ध के कारण तथा परिणाम लिखिए।
7. बक्सर के युद्ध के कारण तथा परिणाम बताइये।
8. क्लाइव द्वारा दोहरी शासन व्यवस्था का विस्तार से वर्णन कीजिए।

1.13 सहायक पाठ्य सामग्री (Suggested Readings)

1. आधुनिक भारत का इतिहास– बिपिन चन्द्र –Orient Blackswan 2009.
2. आधुनिक भारतीय ऐतिहासिक शासक– इला नागौरी– राजा पब्लिशिंग हाउस–2005.
3. भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद का उद्भव और विकास– बिपिन चन्द्र (1880–1907).

इकाई 2 औपनिवेशिक प्रशासन का विकास– वारेन हेस्टिंग्ज तथा लॉर्ड कॉर्नवॉलिस रेग्युलेटिंग एक्ट, पिट्स इंडिया एक्ट, आंग्ल–मराठा सम्बन्ध, आंग्ल–मैसूर सम्बन्ध, लॉर्ड वेलेजली और सहायक सन्धियाँ

संरचना (Structure)

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 औपनिवेशिक प्रशासन–लॉर्ड वारेन हेस्टिंग्ज तथा लॉर्ड कॉर्नवॉलिस
    2.2.1 वारेन हेस्टिंग्ज
    2.2.2 वारेन हेस्टिंग्ज के इन समस्याओं को दूर करने के लिए प्रयास
    2.2.3 व्यापारिक सुधार
    2.2.4 न्याय संबंधी सुधार
    2.2.5 लॉर्ड कॉर्नवॉलिस (1786–1793 ई.)
    2.2.6 कॉर्नवॉलिस के व्यापारिक सुधार
    2.2.7 स्थायी बन्दोबस्त : लॉर्ड कॉर्नवॉलिस
    2.2.8 रैयतवारी प्रथा
    2.2.9 कॉर्नवॉलिस के न्यायसंबंधी सुधार
2.3 रेग्युलेटिंग एक्ट
    2.3.1 कम्पनी की संरचना
    2.3.2 रेग्यूलेटिंग एक्ट पारित होने के कारण
    2.3.3 रेग्यूलेटिंग एक्ट के गुण
    2.3.4 रेग्यूलेटिंग एक्ट के दोष
2.4 पिट्स इंडिया एक्ट
    2.4.1 अधिनियम पारित होने के कारण
    2.4.2 अधिनियम के प्रावधान
    2.4.3 महत्व
2.5 आंग्ल–मराठा सम्बन्ध (1775–1782 ई.)
    2.5.1 प्रथम आंग्ल–मराठा युद्ध (1775–1782 ई.)
    2.5.2 द्वितीय आंग्ल–मराठा युद्ध (1802–1805 ई.)
    2.5.3 तृतीय आंग्ल–मराठा युद्ध (1804–1806 ई.)
    2.5.4 चतुर्थ आंग्ल–मराठा युद्ध (1817–1818 ई.)
2.6 आंग्ल–मैसूर सम्बन्ध
    2.6.1 प्रथम आंग्ल–मैसूर युद्ध (1767–1769 ई.)
    2.6.2 द्वितीय आंग्ल–मैसूर युद्ध (1780–1784 ई.)
    2.6.3 तृतीय आंग्ल–मैसूर युद्ध (1790–1792 ई.)
    2.6.4 चतुर्थ आंग्ल–मैसूर युद्ध (1799 ई.) के कारण
2.7 लॉर्ड वेलेजली और सहायक सन्धि
    2.7.1 लॉर्ड वेलेजली के आगमन के समय भारत का राजनीतिक वातावरण
    2.7.2 सहायक सन्धि का उद्देश्य
    2.7.3 सहायक सन्धि की विशेषताएँ
2.8 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर

2.9 सारांश
2.10 मुख्य शब्दावली
2.11 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.12 सहायक पाठ्य सामग्री

2.0 परिचय (Introduction)

बक्सर के युद्ध के बाद ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने बंगाल में अपना प्रभाव स्थापित कर लिया था। क्लाइव द्वारा स्थापित द्वैध शासन प्रणाली से कम्पनी को राजस्व प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त हो गया था। अंग्रेजों की महत्वकाक्षाएं बढ़ने लगी और वे सम्पूर्ण भारत पर ही अपना वर्चस्व स्थापित करने के प्रयास करने लगे। मराठा तथा मैसूर भी साम्राज्यवादी नीति के चपेट में आए। कुछ राज्यों को सहायक सन्धि द्वारा और कुछ को डरा–धमकाकर कम्पनी के राज्यों में मिला लिया गया।

2.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई में घटनाओं के सम्बन्ध में चर्चा की गई है, तथा कुछ घटनाओं का विस्तृत वर्णन निम्नांकित रुप से किया गया है।

- औपनिवेशिक प्रशासन का भारत में विकास
- रेग्यूलेटिंग एक्ट तथा पिट्स इण्डिया एक्ट द्वारा प्रशासनिक निर्णयों का वर्णन किया गया है।
- प्रशासनिक सुधारों में वारेन हेस्टिंग्ज एवं लॉर्ड कॉर्नवॉलिस के कार्यों का अध्ययन किया जाएगा।
- साथ ही अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति से मराठा एवं मैसूर किस तरह प्रभावित थे इस बारे में जानकारी दी जाएगी।
- अन्य राज्यों को लॉर्ड वेलेजली की सहायक सन्धि से क्या लाभ–हानि हुई इस सम्बन्ध में भी चर्चा की जाएगी।

2.2 औपनिवेशिक प्रशासन–लॉर्ड वारेन हेस्टिंग्ज तथा लॉर्ड कॉर्नवॉलिस (Colonial Administration-Lord Waren Hastings and Lord Cornwallis)

2.2.1 वारेन हेस्टिंग्ज (Warren Hastings) 1772-85

1772 ई. में वारेन हेस्टिंग्ज बंगाल का गवर्नर बना। इसके पूर्व 18 वर्ष की आयु में वह क्लर्क के रूप में भारत आया था। अपनी योग्यता से गवर्नर बना। 1774 में

टिप्पणी

उसे गवर्नर जनरल बनाया गया। इस पद पर वे 1785 ई. तक कार्य करते रहे। वारेन हेस्टिंग्ज के समक्ष प्रमुख कठिनाइयाँ थी–

1. क्लाइव द्वारा स्थापित द्वैध शासन प्रणाली से जनता की दुर्दशा हो रही थी। राजस्व वसूल करने के लिए लूट एवं अत्याचार की नीति से कृषक तंग हो चुके थे। वे अपनी भूमि छोड़ने के लिए मजबूर हो रहे थे।
2. लगान एकत्र करने की व्यवस्था दोषपूर्ण थी। इसे कृषक तो पीड़ित थे ही, कम्पनी के राजकोष तक भी राजस्व नहीं पहुँच पाता था।
3. कम्पनी का राजकोष लगभग रिक्त था। कम्पनी पर सरकार को 10 लाख पौण्ड ऋण चुकाना था।
4. मराठे तथा मैसूर राज्य अंग्रेज विरोधी थे।

2.2.2 वारेन हेस्टिंग्ज के इन समस्याओं को दूर करने के लिए प्रयास (Attempts by Warren Hastings for Solving the Problems)

प्रशासनिक सुधार–(Administrative Reforms)

1. सर्वप्रथम वारेन हेस्टिंग्ज ने बंगाल में स्थापित द्वैध शासन प्रणाली को समाप्त कर अराजकता को दूर करने का प्रयास किया।

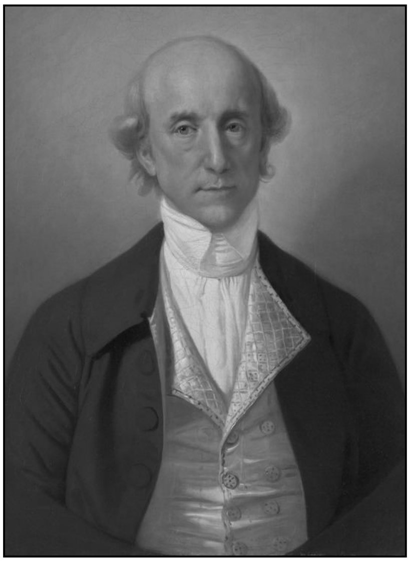

चित्र क्र. 2.1ः वारेन हेस्टिंग्ज
https://www.hindustantimes.com/books/review-hicky-s-bengal-gazette-the-untold-story-of-india-s-first-newspaper-by-andrew-otis/story-wxRjvgcptQeIT95B93XH5O.html

2. बंगाल के नबाब निज़ामउद्दौला की पेंशन जो 32 लाख वार्षिक थी, उसे घटाकर 16 लाख वार्षिक कर दिया गया। साथ ही उसे शासन के

उत्तरदायित्व से भी मुक्त कर दिया गया। उसके अल्पव्यस्क होने के कारण दो उप–नवाबों की नियुक्ति की गई।

3. राजकीय कोष को मुर्शिदाबाद से कोलकाता स्थानान्तरित किया। भ्रष्टाचार खत्म करने के लिए कर्मचारियों पर रिश्वत/उपहार लेने पर प्रतिबंध लगया गया। डाकुओं का दमन किया गया जिससे जनता को राहत पहुँची।

राजस्व–संबंधी सुधार (Revenue Reforms)

1. **राजस्व परिषद का गठन–** लगान व्यवस्था दोषपूर्ण थी। उसे सुधारने के लिए राजस्व परिषद का गठन किया गया। यह गवर्नर तथा उसकी परिषद (Board of Revenue) का ही परिवर्तित रूप था।
2. **लगान एकत्र करने की व्यवस्था–** लगान वसूल करने का काम जमिंदारों को सौंपा गया। इसका आधार नीलाम को बनाया गया। जो भी सबसे ऊँची बोली लगाता पाँच वर्ष तक लगान वसूल करने का ठेका उसे दे दिया जाता था।
3. **अंग्रेज कलेक्टर एवं भारतीय दीवान की नियुक्ति–** जमींदारों द्वारा एकत्रित लगान को कम्पनी के राजकोष तक पहुँचाने के लिए हर जिले में एक अंग्रेज कलेक्टर और एक भारतीय दीवान की नियुक्ति की गई।

इस व्यवस्था से भी कृषकों की दशा में कोई सुधार नहीं हुआ। ठेका प्राप्त करने वाला व्यक्ति जनता को लूटा करते थे। जो जमींदार निश्चित रकम नहीं चुका पाए उन्हें बंदी बना लिया गया। कम्पनी तक भी राजस्व पहुँचने में दिक्कते आई। इस तरह कृषक, जमींदार और कम्पनी को हानि हुई।

2.2.3 व्यापारिक सुधार (Economic Reforms)

1. राजकोष रिक्त था। इसकी पूर्ति के लिए वारेन हेस्टिंग्ज ने 'दस्तक' अथवा 'फ्री पास' की व्यवस्था समाप्त कर दी। सभी से समान रूप से चुंगी ली जाने लगी।
2. केवल पाँच के अतिरिक्त सभी चुंगी नाका समाप्त कर दिये गए। ये चौकियां कलकत्ता, हुगली, मुर्शिदाबाद, पटना और ढाका में थी।
3. सभी व्यापारिक वस्तुओं पर 2.5 प्रतिशत चुंगी की छूट दी गई। नमक, तम्बाकू, सुपारी इस छूट में सम्मिलित नहीं थे।
4. 'व्यापारिक परिषद' (Board of Trade) का गठन किया गया। इसे कम्पनी के लिए माल खरीदने का कार्य सौंपा गया।
5. व्यापार विकास के सुझाव प्राप्त करने के लिए दूतों को मिस्त्र, भूटान और तिब्बत भेजा गया।

2.2.4 न्याय संबंधी सुधार (Judicial Reforms)

टिप्पणी

दिवानी न्यायालय की स्थापना

हर जिलें में एक दिवानी अदालत स्थापित की गई। यह अंग्रेज कलेक्टर के अधीन थी। उसकी सहायता के लिए भारतीय न्यायाधीश भी बैठते थे। उत्तराधिकार, व्यवहारिक विवाद, ऋण, विवाह मामले की सुनवाई होती थी। 1774 ई. में इसे भारतीय अधिकारी के अधीन दिया गया जिसे 'आमिल' कहा गया।

सदर दिवानी न्यायालय

दिवानी न्यायालय की अपील के लिए कलकत्ता में सदर दिवानी न्यायालय स्थापित किया गया। गवर्नर तथा उसकी परिषद के दो सदस्य मुकदमें की सुनवाई में बैठते थे। 1775 ई. में इसे मुर्शिदाबाद स्थानान्तरित कर दिया गया।

फौजदारी न्यायालय

प्रत्येक जिले में फौजदारी अदालत स्थापित की गई। इसमें जिले के काजी न्याय करते थे। इस न्यायालय को भी कलेक्टर के अधीन रखा गया। इसकी अपील कलकत्ता स्थित 'सदर निज़ामत अदालत' में की जा सकती थी। 1775 में फौजदारी अदालत समाप्त कर जिला अदालतों में मिला दिया गया। 1780 ई. में दिवानी अदालतों की संख्या बढ़ाकर 18 कर दी गयी।

सर्वोच्च न्यायालय 1774 ई.

रेग्यूलेटिंग एक्ट द्वारा कलकत्ता में एक सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गई। इसमें एक मुख्य न्यायाधीश और तीन कनिष्ठ न्यायाधीश होते थे। इनकी नियुक्ति ब्रिटिश सरकार स्वयं करती थी। इस कार्यक्षेत्र में केवल ब्रिटिश प्रजा ही आती थी। 1781 में राजस्व संबंधी मामले सर्वोच्च न्यायालय से लेकर उसका पूर्ण अधिकार गवर्नर जनरल एवं उसकी परिषद को दे दिया गया। उत्तराधिकार के मामले भी सर्वोच्च न्यायालय के अधीन नहीं थे। उसका क्षेत्राधिकार कलकत्ता तक सीमित किया गया। न्यायालय में भारतीय परम्पराओं को ध्यान में रखते हुए निर्णय देने को कहा गया।

1784 ई. में वारेन हेस्टिंग्ज इग्लैण्ड वापस चला गया। उसके ऊपर 20 अभियोग लगाये गये जैसे अवध से धन वसूलना, आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप, मनमाने ढंग से लगान वसूल करना, रिश्वत लेना, ठेकों में बेइमानी आदि, किन्तु अंत में उसे रिहा कर दिया गया।

अंगेजी शासन के इतिहास में वारेन हेस्टिंग्ज का उच्च स्थान आसाधारण योग्यता से उसने क्लर्क से गवर्नर जनरल का पद हासिल किया था। उसने शासन व्यवस्था की नींव डाली, जिस पर कम्पनी का राज्य लम्बे समय तक टिका रहा।

2.2.5 लॉर्ड कॉर्नवॉलिस (1786–1793 ई.) (Lord Cornwallis (1786-1793 AD))

1786 में लॉर्ड कॉर्नवॉलिस गवर्नर जनरल के पद पर नियुक्त हुआ। उसके पूर्व वारेन हेस्टिंग्ज ने 1785 तक कार्यभार संभाला था। उसके बाद एक वर्ष तक जॉन मैकफर्सन ने पद संभाला किन्तु भ्रष्टाचार बढ़ जाने के कारण निदेशकों ने लॉड कॉर्नवॉलिस को भारत भेजा।

2.2.6 कॉर्नवॉलिस के व्यापारिक सुधार (Trade Reforms of Cornwallis)

पूर्व व्यवस्था

(i) व्यापार की पूँजी का प्रबन्ध करने के लिए व्यापारिक परिषद थी। इसमें 21 सदस्य थे।

(ii) माल खरीदने के लिए ठेके दिये जाते थे। इस प्रणाली से भ्रष्टाचार बढ़ गया था।

(iii) भारतीय जुलाहों से कम कीमत पर माल खरीद लिया जाता था।

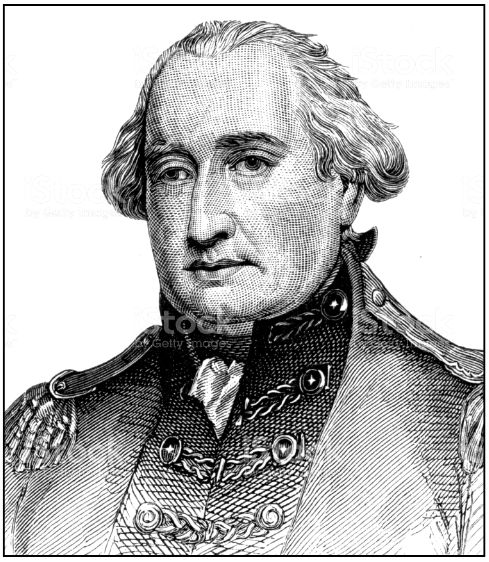

चित्र क्र. 2.2: लॉर्ड कॉर्नवॉलिस
https://www.istockphoto.com/vector/lord-cornwallis-gm658185524-120009697

सुधार

(i) बोर्ड ऑफ ट्रेड के सदस्यों की संख्या 5 कर दी गई और उसे परिषद के नियंत्रण में रख दिया गया।

(ii) ठेके की प्रथा बंद कर दी गयी। अब माल खरीदने के लिए एजेण्ट बना दिए गए जो भारतीय व्यापारियों से माल खरीद कर कमीशन के बदले कम्पनी को देते थे। इससे पूर्व व्यवस्था के दोष दूर हो गए।

(iii) कॉर्नवॉलिस ने नियम बनाया कि जुलाहों को पहले अग्रिम राशि दी जाए और उतना ही माल लिया जाए। इससे जुलाहों की स्थिति में सुधार आया। इन सुधारों से व्यापार को लाभ पहुँचा।

स्थायी बन्दोबस्त से पूर्व व्यवस्थाएँ

1. भू–राजस्व व्यवस्था एवं लॉर्ड क्लाइव– ईस्ट इंडिया कम्पनी ने बक्सर के युद्ध में मीर कासिम, (बंगाल के नवाब), शुजाउद्दौला (अवध के नवाब) एवं मुगल सम्राट शाह आलम की संयुक्त सेना को पराजित कर इलाहाबाद की सन्धि के द्वारा द्वैध शासन प्रणाली के अनुसार कम्पनी को

(i) बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा की दिवानी प्राप्त हुई।

(ii) कम्पनी को इन प्रान्तों का भूमि राजस्व इकट्ठा करने का कानूनी अधिकार मिला।

(iii) कम्पनी इन प्रान्तों का निरीक्षण कर सकती थी।

(iv) कम्पनी राजस्व एकत्र करने के लिए दीवान की नियुक्ति कर सकती थी।

कम्पनी ने बंगाल में राजस्व वसूल करने के लिए दो दीवान नियुक्त किये– मुहम्मद रजा खाँ एवं सिताबराय। कम्पनी चाहती थी कि दीवान अधिक से अधिक राजस्व जमा करें। इस प्रकार धन को वसूल करने का कार्य कर्मचारियों के हाथ में था और धन को उपयोग करने का अधिकार कम्पनी के पास था। किसानों की दुर्दशा पर न ही कम्पनी न ही नायब दीवान का ध्यान था। नायब दीवान अंग्रेजों के निर्देशों का पालन करते थे। नवाब के अधीन होने पर भी नवाब का उन पर कोई नियंत्रण नहीं था। वे मनमानी लूट करते थे। दूसरी तरफ कम्पनी भी एकत्र धन को इंग्लैण्ड भेजती थी। उस धन का एक पैसा भी किसानों एवं कृषि के विकास में खर्च नहीं किया जाता था। राजस्व वसूली में कोई रियायत नहीं की जाती थी। यहाँ तक कि भीषण अकाल के समय भी (1770) सरकार ने निर्दयता से वसूली की।

2. भू–राजस्व व्यवस्था एवं वॉरेन हेस्टिंग्ज– पंचवर्षीय भूमि बन्दोबस्त–1772 ई. में वॉरेन हेस्टिंग्ज बंगाल का गवर्नर बनकर आया। उसने क्लाइव की द्वैध शासन प्रणाली को समाप्त कर दिया। दीवान द्वारा लगान वसूली के स्थान पर कम्पनी ने यह उत्तरदायित्व स्वयं ले लिया। वॉरेन हेस्टिंग्ज ने निम्नलिखित कार्य किए–

(i) राजस्व प्रशासन को सुचारू गति से चलाने के लिए उसने गवर्नर तथा उसकी परिषद् को राजस्व परिषद् (Board of Revenue) के रूप में स्थापित किया।

(ii) नीलामी की प्रथा लागू की। इसके अनुसार सार्वजनिक नीलामी में सबसे ऊँची बोली बोलने वाले ठेकेदार को पाँच वर्ष के लिए जमीन दे दी जाती थी। ठेकेदार किसानों से लगान जमा करते थे।

(iii) लगान कम्पनी के पास तक पहुँचाने के लिए हर जिले में एक कलेक्टर (अंग्रेज) और एक दीवान (भारतीय) को नियुक्त किया गया। अधिकारी जमींदारों से लगान जमा करते थे। इस प्रथा के निम्नलिखित दुष्परिणाम निकले–

(अ) ऊँची कीमत देकर जमीन पाने वाले ठेकेदार किसानों से अधिक से अधिक कर वसूल कर लेना चाहते थे।

(ब) जमींदारों/ठेकेदारों का भूमि से सीधा सम्बन्ध नहीं था। वे कृषकों का शोषण करते थे।

(क) कम्पनी के कर्मचारियों के पास अनुभव की कमी थी। पाँच वर्ष के अन्त में जब हिसाब किया गया तो जमींदारों के पास भारी मात्रा में बकाया राशि का पता चला। अतः उन्हें जेल भेज दिया गया।

इस प्रकार इससे जनता तथा जमींदारों दोनों को कष्टों का सामना करना पड़ा। कम्पनी को भी हानि हुई 1781 में इस व्यवस्था को सुधार की दृष्टि से वार्षिक कर दिया गया किन्तु यह प्रणाली भी दोषपूर्ण निकली और कृषकों के शोषण में किसी प्रकार की कमी नहीं हुई।

2.2.7 स्थायी बन्दोबस्त – लॉर्ड कॉर्नवॉलिस (The Permanent Settlement-Lord Cornwallis)

1784 में कम्पनी ने लॉर्ड कॉर्नवॉलिस को भारत का गवर्नर जनरल नियुक्त किया। कम्पनी के निर्देश पर उसने सर्वप्रथम भू–व्यवस्था का अध्ययन किया। उसने संचालकों को अवगत किया, 'कृषि एवं व्यापार की स्थिति बहुत खराब है, रैयतवारी एवं जमींदार दरिद्रता में पिस रहे हैं, समाज में केवल साहूकार वर्ग समृद्ध हैं।' विचार–विमर्श के बाद संचालकों ने निश्चित किया राजस्व प्रशासन में सुधार किए जाएँ ताकि भूमि विषयों का स्थायी समाधान मिले और किसानों को भी राहत पहुँचे। इस कार्य में लॉर्ड कॉर्नवॉलिस का सहयोग राजस्व बोर्ड के प्रधान सर जॉन शोर एवं अभिलेखपाल जेम्स ग्रांट ने किया। तीनों ने प्रमुख प्रश्नों पर 1789 में रिपोर्ट प्रस्तुत की–

(i) भू–व्यवस्था जमींदारों के साथ की जाए या कृषकों के साथ?

(ii) शासन को लगान के रूप में उपज का कितना भाग प्राप्त हो।

(iii) व्यवस्था स्थायी हो या अस्थायी।

इन प्रश्नों के संदर्भ में समिति का मानना था–

1. भू–व्यवस्था जमींदारों के साथ की जाय। सर जॉन शोर का मत था कि जमींदार भूमि के स्वामी है और कम्पनी भी इस स्थिति में नहीं थी कि

कृषकों से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर सकें। अतः शोर का मत स्वीकार कर जमींदारों के साथ व्यवस्था स्थापित करना निश्चित किया गया।

2. कम्पनी को लगान का 8/9 भाग मिले।
3. 1790 ई. में निदेशकों ने कॉर्नवॉलिस को 10 वर्ष के लिए व्यवस्था स्थापित करने के लिए कहा किन्तु 1793 ई. में संतोषजनक पाये जाने पर इसे स्थायी कर दिया गया।

स्थायी व्यवस्था की विशेषताएँ

1. जमींदारों को निश्चित मालगुज़ारी पर सदैव के लिए भूमि दे दी गई।
2. कम्पनी को लगान का 8/9 भाग और जमींदारों को 1/9 भाग मिलेगा।
3. यदि लगान चुकाने में जमींदार असमर्थ होंगे तो कम्पनी को जमीन कुर्क करने का अधिकार होगा।
4. जमींदार भू–स्वामी होंगे और उनके बाद उनके बच्चों को यह अधिकार प्राप्त हो जाएगा।
5. पैतृक स्वामी होने के नाते वे भूमि को बेचने, गिरवी रखने या दूसरे के नाम करने के अधिकारी होंगे।

स्थायी व्यवस्था के लाभ

1. **कम्पनी को लाभ**– कम्पनी राजस्व की ओर से चिंतामुक्त हो गई। उसे पता था कि उसे कितना लगान प्राप्त होगा अब व्यवस्था स्थायी होने से कम्पनी को बार–बार भूमि प्रबंधन एवं उसमें होने वाले खर्च से छुटकारा मिल गया। उसे एक ऐसा वर्ग मिला जो उसका स्वामिभक्त था।
2. **जमींदारों को लाभ**– जमींदार भूमि के पैतृक स्वामी बन गए। उन्हें पता था उन्हें कितना लगान चुकाना है। उनकी आय में वृद्धि हुई और वे धनवान बन गए।
3. **कृषकों का लाभ**– कृषक को निश्चित लगान देना था। न्यायालय की आज्ञा के बिना उसमें कोई वृद्धि नहीं कर सकता था।
4. **कृषि में लाभ**– जमींदार जानते थे कि यदि वे कृषि में धन लगाएंगे, उसमें सुधार करेंगे, या भूमि को उर्वरक बनाएंगे तो उनकी आय में वृद्धि होगी इसलिए उन्होंने कृषि सुधार में विशेष ध्यान दिया।
5. **व्यापार में लाभ**– कृषि से प्राप्त सम्पत्ति को जमींदारों ने व्यापार में उपयोग किया।

स्थायी बन्दोबस्त के दोष

1. सरकार भूमि की जिम्मेदारी से मुक्त हो गई। उसे केवल राजस्व में रुचि थी।
2. जमींदारों ने लगान एकत्र करने के लिए कृषकों के साथ अन्याय किया।

3. लगान राशि की दरें इतनी ज्यादा थी कि जमींदार उसे चुकाने में असमर्थ थे और अपनी जमीनें बेचने के लिए विवश थे।
4. अधिकांश जमींदार नगरों में जाकर बस गये और लगान बसूलने का कार्य बिचौलियों के हाथों में सौंप दिया, जिन्होंने कृषि विकास पर कोई ध्यान नहीं दिया।
5. कृषक अपने परिश्रम से अन्न उत्पन्न करते थे। इसके लिए उनके पास साधन भी सीमित थे। किन्तु इतनी मेहनत का कोई लाभ उन्हें नहीं होता था क्योंकि जितनी ज्यादा उपज होती थी उन्हें उतना ज्यादा लगान का भाग चुकाना होता था।
6. आपदा के समय भी कृषकों से लगान वसूल करने में कठोरता का पालन किया जाता था। कभी–कभी तो उनकी सारी उपज ही लगान के लिए छीन ली जाती थी।
7. कृषक गरीब एवं अनपढ़ थे। अतः वे अदालतों का लाभ नहीं उठा सके।

स्थायी बंदोबस्त की असफलता को देखते हुए कम्पनी ने इसे सारे प्रदेशों में लागू नहीं किया। 1955 ई. में “West Bengal Acquisition of Estates Act” पारित कर इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया।

2.2.8 रैयतवारी प्रथा (Ryotwari Settlement)

लॉर्ड विलियम बैंटिक– ब्रिटिश सरकार ने रैयतवारी व्यवस्था मद्रास तथा बम्बई में लागू की। इस व्यवस्था को टामस मुनरो ने व्यापक रूप प्रदान किया। इस व्यवस्था को लागू करने के प्रमुख कारण थे–

1. उपज का अधिकतम भाग लगान के रूप में प्राप्त करना।
2. मद्रास में कोई बड़ा जमींदार नहीं था, जिसके साथ सरकार स्थायी बन्दोबस्त कर सकती।
3. स्थायी बन्दोबस्त से सरकार को नुकसान हो रहा था क्योंकि जमींदार अधिकांश लगान हड़प लेते थे।
4. जमींदार लगान वसूल करने के लिए जनता पर अत्याचार करते थे। इस व्यवस्था से सरकार रैयत को राहत देना चाहती थी।

टिप्पणी

चित्र क्र. 2.3: लॉर्ड विल्यम बेंटिक
https://www.istockphoto.com/vector/lord-William Baintik-gm658185524-120009697

विशेषताएँ

1. इस व्यवस्था में कृषक एवं सरकार के मध्य सीधा सम्बन्ध था किसान सीधे सरकारी कोष में लगान दे सकते थे। वे बिचौलियों पर निर्भर नहीं थे।
2. कृषकों को भू–स्वामी माना गया। भूमि से सम्बंधित समस्त अधिकार उन्हें दिये गये।
3. गाँवों का सर्वेक्षण कर उसका विस्तृत विवरण तैयार कर उसमें कृषि योग्य भूमि दर्ज की जाती थी।
4. भूमि की उर्वरता के अनुसार लगान निर्धारित किया गया।
5. लगान चुकाने में असमर्थ होने पर कृषक की भूमि पर सरकार का अधिकार हो जायेगा। यह व्यवस्था 30 वर्षों तक स्थापित रही।

प्रभाव

इस व्यवस्था के कृषकों पर निम्नलिखित प्रभाव पड़े–

1. कृषक प्रभावित हुए क्योंकि लगान की दर ऊँची थी।
2. लगान न चुकाने पर सरकार उनकी जमींने छीन लेती थी।
3. कम्पनी के अधिकारी अधिक लगान वसूलने के लिए कृषकों पर अत्याचार करते थे।
4. अधिकारियों के अत्याचारों के विरुद्ध कोई सुनवाई नहीं थी।
5. अत्याचारों के भय से कृषक दूसरे क्षेत्रों में चले जाते थे। फलस्वरूप बहुत सी भूमि बंजर रह जाती थी।

6. लगान चुकाने के लिए उन्हें ऋण लेना पड़ता था। वे साहूकारों पर निर्भर रहने लगे। साहूकार अनेक बहानों से उनकी ज़मीन हड़पने लगे।

1855 में हुये एक अध्ययन में मद्रास सरकार ने स्वीकार किया कि कृषक इस व्यवस्था से असंतुष्ट हैं। इससे न वे भरपेट भोजन जुटा पा रहे हैं न लगान चुका पा रहे हैं। भूमि उनकी आय का एकमात्र साधन थी जिसे साहूकार गिरवी रखकर किसानों के साथ गुलामों की तरह व्यवहार करते हैं।

रैयतवारी व्यवस्था में परिवर्तन कर बम्बई प्रेसीडेंसी में लागू की गई किन्तु समस्याएँ यथावत् बनी रहीं।

2.2.9 कॉर्नवॉलिस के न्यायसंबंधी सुधार (Judicial Reforms of Lord Cornwallis)

1. जिला अदालतों को 1787 में कलेक्टरों के अधीन कर दिया।
2. मजिस्ट्रेट कर शक्तियाँ कलेक्टरों को दी गई।
3. वे कुछ सीमा तक अपराधिक मामलों का भी निपटारा करते थे किंतु राजस्व मामला राजस्व परिषद के पास था। फौजदारी और सदा निज़ामत अदालत पूर्ववत थे। 1790 में उसके न्यायाधीश मुस्लिम वर्ग से होते थे बाद में भारती विधि विशेषज्ञ नियुक्त किया गया।
4. कॉर्नवॉलिस संहिता यह 1793 में लागू किया गया। कॉर्नवॉलिस संहिता के अनुसार कलेक्टर को सभी न्यायालय से संबंधित मामलों से मुक्त कर दिया गया। न्यायाधीश नियुक्त किए गए, उन्हें राजस्व मामले भी दीए गए। पटना, ढाका, मुर्शिदाबाद में नगर न्यायालय तथा जिला न्यायालय थे।

दो के स्थान पर दौरा न्यायालय में अब तीन न्यायाधीश नियुक्त किए, वे जिला न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपील सुनाते।

इस प्रकार जिले में न्यायिक प्रशासन दो भागों में विभाजित किया गया। एक कलेक्टर जो राजस्व देखरेख करता था और दूसरे न्यायाधिश न्यायिक निर्णय करता था। भारतियों को इस प्रक्रिया में कोई उत्तरदायित्व नही दिया गया।

2.3 रेग्युलेटिंग एक्ट (Regulating Act)

2.3.1 कम्पनी की संरचना (Structure of Company)

1600 ई. में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना हुई। यह एक व्यापारिक संस्था थी। महारानी एलिजाबेथ ने इसे पूर्व देशों में व्यापार के लिए अधिकार पत्र (charter) प्रदान किया। कम्पनी के अधिकार–पत्र में सरकार द्वारा समय–समय पर बदलाव किए जाते थे परंतु अपने आंतरिक संचालन के लिए कम्पनी को स्वतंत्रता हासिल थी।

कम्पनी व्यापारिक नीति का निर्धारण कर सकती थी। वह अपने अधिकारियों एवं कर्मचारियों की नियुक्ति कर सकती थी। व्यापारिक रक्षार्थ सेना रखती थी।

2.3.2 रेग्यूलेटिंग एक्ट पारित होने के कारण (Reasons for Passing the Regulating Act)

1. 1757 ई. तक कम्पनी का कार्यक्षेत्र विस्तृत हो गया। प्लासी और बक्सर के युद्ध के बाद उसकी राजनीतिक सत्ता स्थापित हो चुकी थी जिससे बंगाल, बिहार और उड़ीसा के बड़े प्रांत से राजस्व प्राप्त करने का अधिकार मिल गया था।
2. बंगाल में कम्पनी के कर्मचारियों के अत्याचार बढ़ रहे थे। जनता लगान एकत्रित करने के तरीकों से त्रस्त हो गई थी।
3. कम्पनी के अधिकारी इस लूट के धन को इग्लैण्ड ले जाकर नवाबों की तरह रहने लगे।
4. कम्पनी पर 60 लाख पौण्ड का कर्ज था जो उसने इग्लैण्ड की सरकार से लिया था।

उपर्युक्त कारणों से सरकार का ध्यान कम्पनी की ओर गया। स्पष्ट था कि राजस्व का धन अधिकारियों को मिलता था इसलिए वह धनी हो रहे थे किन्तु कम्पनी का राजकोष रिक्त था। इन्ही गतिविधियों और भ्रष्टाचार की जांच के लिए ब्रिटिश सरकार ने एक समिति नियुक्त की। उसकी रिपोर्ट के अनुसार 1773 ई. में रेग्यूलेटिंग एक्ट संसद में पारित किया गया।

रेग्यूलेटिंग एक्ट के प्रावधान

इस अधिनियम के मुख्य प्रावधान है।

गृह सरकार

इंग्लैण्ड में रहकर (इंग्लैण्ड में स्थित) कम्पनी के अधिकारी भारत में कम्पनी का संचालन करते थे। इसे गृह सरकार कहा गया। इन अधिकारियों के दो भाग थे–

(i) स्वामी मण्डल (कोर्ट ऑफ प्रोप्राइटर्स) इसके हिस्सेदार (शेयर होल्डर) के पास 500 पौण्ड के शेयर होते थे।

(ii) निदेशक मण्डल (Board of Directors)– इसके सदस्यों की संख्या 24 होती थी। इन्हें स्वामी मण्डल ही निर्वाचित करता था।

रेग्यूलेटिंग एक्ट द्वारा परिवर्तन

1. अब हिस्सेदार वही होगा जिसके पास 1000 पौण्ड के शेयर होंगे।
2. निदेशकों का निर्वाचन चार वर्ष के लिए होगा।

3. भारत स्थित अधिकारियों से जो सैनिक और असैनिक विषय पर पत्र व्यवहार किया जायेगा वह सरकारी मंत्री के समक्ष होगा। इसी तरह राजस्व संबंधी पत्र व्यवहार वित्त मंत्रालय के समक्ष होगा।

केन्द्रीय सरकार

(भारत में स्थित)– भारत में कम्पनी की तीन सरकारें थीं– बम्बई, मद्रास, कलकत्ता। तीनों के अलग गवर्नर थे जो अध्यक्ष होते थे। इन्हें निदेशकों से संपर्क रखना पड़ता था। इन सरकारों को एक करने की दिशा में कदम उठाए गए।

गवर्नर–जनरल के अधिकार

1. बंगाल के गवर्नर को अब गवर्नर–जनरल कहा जाएगा।
2. उसकी सहायता के लिये परिषद होगी जिसमें चार सदस्य होंगे।
3. दोनों का कार्यकाल पाँच वर्ष होगा।
4. निर्णय बहुमत से होगा। यदि दोनो पक्ष बराबर हुए तो गवर्नर जनरल का निर्णय अंतिम होगा। गवर्नर–जनरल एवं उसकी परिषद को निम्नलिखित अधिकार दिए गए–
    - उन्हें कम्पनी द्वारा विजित प्रदेशों पर शासन करने, राजस्व का प्रबन्ध, तथा बंगाल के सैनिक एवं असैनिक मामलों को संचालित करने का अधिकार होगा।
    - व्यापारिक कोठियों जैसे फोर्ट विलियम एवं अन्य के लिए नियम बनाना एवं अध्यादेश जारी करना। सर्वोच्च न्यायालय की स्वीकृति आवश्यक होगी।
    - सभी प्रेसीडेन्सियों को युद्ध तथा सन्धि के लिए गवर्नर जनरल की स्वीकृति लेनी होगी किन्तु आपात काल में वे स्वयं निर्णय ले सकेंगे। या निदेशकों से सलाह लेंगे।

वारेन हेस्टिंग्ज प्रथम गवर्नर जनरल बने। उनकी परिषद के चार सदस्य थे–

1. रिचर्ड बारेवेल
2. जनरल क्लेवरिंग
3. फिलिप फ्रांसिस और
4. कर्नल जानसन।

बम्बई और मद्रास प्रेसिडेन्सी को युद्ध एवं सन्धि, नियम एवं विनियम को गवर्नर जनरल की स्वीकृति लेनी होगी।

सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court)

रेग्यूलेटिंग एक्ट द्वारा 1774 ई. में कलकत्ता में सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गयी। इसमें एक मुख्य न्यायाधीश एवं तीन कनिष्ठ न्यायाधीश नियुक्त किए गये।

गवर्नर जनरल एवं उसकी परिषद न्यायालय के क्षेत्राधिकार से मुक्त थे। उन पर इग्लैण्ड में ही मुकदमा चलाया जा सकता था।

टिप्पणी

2.3.3 रेग्यूलेटिंग एक्ट के गुण (Merits of Regulating Act)

इस अधिनियम द्वारा प्रथम बार लिखित संविधान की स्थापना हुई। गृह सरकार के दोषों को दूर करने के लिए स्वामी मण्डल के शेयरों में वृद्धि की गयी ताकि संचालन अनुभवी व्यक्तियों के हाथों में ही हो। निदेशकों के कार्यकाल में वृद्धि होने से वे दूरदर्शी निर्णय लेने में सक्षम हुए।

संसद का नियंत्रण स्थापित होने से कम्पनी से भ्रष्टाचार खत्म होने की संभावना बढ़ी। गवर्नर–जनरल एवं अन्य बड़े अधिकारियों पर भी संसद का नियंत्रण स्थापित हुआ। गवर्नर–जनरल के सहयोग एवं उसकी स्वेच्छाचारिता को रोकने के लिये उसे परिषद दी गयी।

गवर्नर–जनरल के हाथों में युद्ध तथा सन्धि के मामले देकर शासन को केन्द्रीयकृत किया गया। कम्पनी के विजित प्रदेशों के मामलों में इग्लैण्ड की संसद द्वारा प्रशासनिक मामले नियंत्रित किए जाएंगे।

2.3.4 रेग्यूलेटिंग एक्ट के दोष (Demerits of Regulating Act)

कम्पनी पर संसद का पूर्ण नियंत्रण नहीं था। निदेशकों को रिपोर्ट प्रस्तुत करने को कहा गया था किन्तु रिपोर्ट की जाँच के लिये कोई समिति नहीं थी।

गवर्नर–जनरल को निदेशकों से संपर्क में रहना पड़ता था। परिषद उसका विरोध करती रहती थी। इस प्रकार गवर्नर–जनरल लगभग शक्तिहीन था। इस व्यवस्था से तंग आकर वारेन हेस्टिंग्ज 1776 ई. में इस पद को त्याग देना चाहते थे।

मुम्बई एवं मद्रास प्रेसीडेंसी को आपातकाल में निर्णय लेने का अधिकार था। यही कारण था कम्पनी आंग्ल–मराठा युद्ध में उलझी और पैसे जन–धन की हानि हुई।

सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में गवर्नर–जनरल और उसकी परिषद नहीं थे। अतः दोनों के बीच तनाव की स्थिति बनी रहती थी। न्यायालय केवल ब्रिटिश विधि की जानकारी रखता था। हिन्दू एवं मुस्लिम विधि से उसका परिचय नहीं था।

2.4 पिट्स इंडिया एक्ट (Pitt's India Act)

2.4.1 अधिनियम पारित होने के कारण (Reasons for Passing the Act)

1. **दोषपूर्ण रेग्यूलेटिंग एक्ट–** रेग्यूलेटिंग एक्ट के क्रियान्वयन के बाद उसके अनेक दोष प्रकट हुए। उन दोषों को दूर करने के 1784 ई. में पिट्स इंडिया एक्ट पारित किया गया।

2. **कम्पनी की आर्थिक तंगी**— 1782 ई. में कम्पनी की आर्थिक स्थिति खराब हो गई। ऐसे में कम्पनी ने सरकार से सहायता मांगी। सरकार ने निर्णय लिया कि आर्थिक सहायता के साथ कम्पनी के प्रशासन में भी सुधार करेगी।
3. **समितियों की रिपोर्ट**— कम्पनी की जांच के लिए सरकार ने दो समितियां भारत भेजी। पहली, प्रवर समिति जिसने बंगाल परिषद की सर्वोच्च न्यायालय से अनबन की जांच की। दूसरी गुप्त समिति जिसने हैदर अली के साथ युद्ध के कारणों की जांच की। दोनों समितियों ने रिपोर्ट संसद मे प्रस्तुत की। स्पष्ट था कि सरकार को कम्पनी के प्रशासन को सुधारने के लिए कदम उठाने पड़ेंगे।
4. **कम्पनी के आलोचक**— कम्पनी के आलोचक सरकार पर दवाब डाल रहे थे। उनका मानना था कि कम्पनी अपना कार्य कुशलता से नहीं कर रही है।

उपरोक्त परिस्थितियों में ब्रिटिश प्रधानमंत्री पिट ने 1784 ई. में एक अधिनियम इग्लैण्ड की संसद में पारित किया जिसे पिट्स का भारत अधिनियम कहा गया।

2.4.2 अधिनियम के प्रावधान (Provisions of the Act)

1. नियंत्रण–मण्डल— इसका गठन भारत से संबंधित मामलों की देख–रेख के लिए किया गया। इसमें 6 सदस्य थे एक राज्य सचिव, एक राजस्व मंत्री और चार वे सदस्य जिन्हें प्रीवी काउंसिल मनोनीत करती थी।

- बैठकों में कम से कम तीन सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक होगी।
- सदस्यों की नियुक्ति क्राउन (ताज) द्वारा होगी।
- उनका वेतन ब्रिटिश संसद द्वारा दिया जाएगा, जिसे वह भारतीय राजस्व से प्राप्त करेगी।
- वे इस पद के साथ अन्य पदों पर भी कार्य कर सकते हैं।
- सरकारी मंत्री (राज्य–सचिव) इस बोर्ड का अध्यक्ष होगा एवं उसका निर्णय अंतिम माना जाए।
- बोर्ड को भारत की प्रान्तीय सरकारों को आदेश देने, पत्र व्यवहार पर नियन्त्रण रखने, राजस्व को नियन्त्रित करने और सैनिक कार्यवाहियों को संचालित करने का अधिकार था।
- कोर्ट ऑफ प्रॉपराइटर (स्वामी मण्डल) अब नियंत्रण–परिषद के अधीन था एवं उसके निर्देशों का पालन करता था।
- निदेशक मण्डल सभी प्रस्तावों, आदेशों, नियमों से बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल (नियंत्रण परिषद) को अवगत कराएगें। परिषद इन आदेशों को परिवर्तित कर सकती है अथवा पूर्णतः निरस्त कर सकती है।

2. निदेशक–मण्डल

- इसका गठन पूर्ववत रहा।
- कम्पनी के अधिकारियों एवं कर्मचारियों की नियुक्ति का अधिकार होगा।
- सैनिक मामलों में भी उनके अधिकार पूर्ववत रहे।
- परिषद अपने आदेश निदेशकों द्वारा भारत भेज सकते थे।

3. केन्द्रीय सरकार (भारत स्थित)

- गवर्नर–जनरल के परिषद के सदस्य चार से घटाकर तीन किए गए। इनमें से एक प्रधान सेनापति होगा।
- गवर्नर जनरल की नियुक्ति क्राउन द्वारा होगी। गवर्नर जनरल का पद रिक्त होने पर प्रधान सेनापति इसका अधिकारी नहीं होगा। किन्तु उसका पद गवर्नर जनरल के बाद सर्वप्रथम होगा। गवर्नर जनरल के रिक्त स्थानपर अन्य दो सदस्यों में से ही एक मनोनीत होगा।
- परिषद के अन्य सदस्यों एवं प्रान्तीय गवर्नरों की नियुक्ति निदेशक स्वयं कर सकते थे।
- गवर्नर जनरल को निदेशक–मण्डल की आज्ञा के बिना किसी भारतीय राज्य के विरुद्ध युद्ध की घोषणा का प्रावधान नहीं था।
- बम्बई तथा मद्रास प्रेसीडेन्सी को राजस्व, युद्ध एवं सन्धि के लिए गवर्नर जनरल के निर्देश लेने होंगे।

2.4.3 महत्व (Importance)

इस सन्धि द्वारा कम्पनी के संविधान में सुधार किए गए। कम्पनी को सरकार के प्रति उत्तरदायी बनाया गया। इस अधिवेशन का सबसे महत्वपूर्ण कार्य भारत में होने वाले अनावश्यक युद्ध एवं बेमतलब व्यय को समाप्त करना था। दोहरी शासन व्यवस्था आरंभ होने से कम्पनी पर नियन्त्रण स्थापित किया जा सकता था।

2.5 आंग्ल–मराठा सम्बन्ध (1775–1782 ई.) (Anglo-Maratha Relations (1775-1782 AD))

आंग्ल–मराठा सम्बन्ध (Anglo-Maratha Relations)

मराठा साम्राज्य की स्थापना छत्रपति शिवाजी ने की। पेशवा का प्रधानमंत्री उनके मंत्रिमण्डल, का अष्टप्रधान कहलाता था, मंत्रिमंडल में वह सर्वोच्च होता था। 1680 में उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके अधिकारी शम्भाजी को औरंगजेब ने बंदी बना लिया। उसकी मृत्यु के बाद उसका अनुज राजाराम (1680–1700) और उसकी पत्नि ताराबाई ने अंग्रेजों के विरुद्ध स्वराज स्थापना के लिए संघर्ष किया।

औरंगज़ेब की मृत्यु (1707 ई.) मे हुई। उसने शम्भाजी के पुत्र शाहू को भी बंदी बना लिया था। औरंगजेब की मृत्यु के बाद उसे रिहा कर दिया गया। वह छत्रपति बना और (1740) तक शासन किया। उसमें शासन की क्षमता थी परन्तु सैनिक कार्यों के लिए उसने बालाजी विश्वनाथ को पेशवा के पद पर नियुक्त किया, और इस पद को वंशानुगत कर दिया। कालांतर मे छत्रपतियों के शासन में न रुचि और न ही कुशलता दिखी अतः पेशवा सर्वशक्तिशाली बन गए।

बालाजी विश्वनाथ (1713–1720), बाजीराव (1720–40), बालाजी बाजीराव (1740–61) क्रमशः पेशवा बने। इनके शासन में मराठा साम्राज्य में महाराष्ट्र, गुजरात, मालवा, बुन्देलखण्ड, उड़ीसा, पंजाब, सहारनपुर सम्मिलित कर लिए गए।

1761 ई. पानीपत के मैदान मे अफगान आक्रमणकारी शाह अब्दाली का सामना मराठों ने किया। यह युद्ध इतिहास में पानीपत का तृतीय युद्ध कहलाता है। उसी वर्ष बालाजी बाजीराव पुत्र माधवराव पेशवा बना। वह शक्तिशाली शासक उसने, मथुरा, आगरा, उत्तर भारत अपने अधीन कर लिया। भारत के जाटों ने मराठों अधीनता, तथा मुगल सम्राट शाह आलम II को उनका सरंक्षण स्वीकार कर लिया। 1772 ई. में माधवराव की मृत्यु हुई, इसी समय वारेन हेस्टिग्ज भारत का गवर्नर–जनरल बना। मराठा शक्ति छिन्न–भिन्न हो गई थी। छत्रपति मराठा कमज़ोर थे जो सतारा में रहते थे, पेशवा पूना में रहते थे। सरदारों ने अपने राज्य स्थापित कर लिए थे। चार बड़े राज्य थे– होल्कर, सिंधिया, भोसले तथा गायकवाड़। वारेन इस फूट का लाभ उठाना चाहते थे। अतः अंग्रेज–मराठा युद्ध होना स्वाभाविक था।

2.5.1 प्रथम आंग्ल–मराठा युद्ध (1775–1782 ई.) (First Anglo-Maratha War (1775-1782 AD))

युद्ध के कारण

पेशवा माधवराव की मृत्यु के बाद 1772 ई. उसका भाई नारायणराव पेशवा बना, वह अनुभवहीन था। उसका चाचा रघुनाथ राव (राघोबा) स्वंय पेशवा बनना चाहता था। 1773 ई. में उसने षड़यन्त्र द्वारा नारायणराव की हत्या कर दी। नाना फड़नवीस, जो की मराठा सरदार के प्रमुख थे और राघोबा के स्वभाव से परिचित थे, नारायणराव के नवजात शिशु जिसका जन्म उसकी हत्या के कुछ समय बाद हुआ, को पेशवा घोषित किया। उन्होने पेशवा के लिए संरक्षक समिति भी नियुक्ति कर दी। यह समिति बारह भाई समिति के नाम से जानी गई। नए पेशवा का नाम माधवराव द्वितीय रखा गया। राघोबा को बंदी बनाने का आदेश दिया गया तो राघोबा तुरंत बम्बई पहुँचे और अंग्रेजों की शरण ली। दोनो के बीच सूरत की सन्धि हुई।

चित्र क्र. 2.4: प्रथम आंग्ल–मराठा युद्ध
https://www.indiaolddays.com/first-anglo-maratha-war/

अंग्रेजों ने राघोबा के ही खर्च पर उसे 25 हजार सैनिक दिए। इसके बदले राघोबा ने कम्पनी को सालसट, बसीन, भडौच प्रदेश के साथ सूरत की आय का कुछ भाग देने का वचन दिया। साथ ही यह भी कि कम्पनी के शत्रु से मित्रता नही करेगा। राघोबा ने 6 लाख रुपये अग्रिम राशि भी कम्पनी को दे दी। इस प्रकार उसने स्वंय ही अंग्रेजों को अपने घर में हस्तक्षेप करने का अवसर दे दिया।

युद्ध की घटनाएँ (Events of the War)

आरा का युद्ध– 1775 ई. मे आरा के मैदान मे बम्बई सरकार की सेना एवं पूना दरबार की सेना के बीच युद्ध हुआ। पूना की सेना पराजित हुई। बम्बई सरकार ने राघोबा से सूरत की सन्धि बिना गवर्नर जनरल (वारेन हेस्टिंग्ज) की अनुमति की थी। उसने सन्धि की आलोचना करते हुए उसे 'अबुद्धियतापूर्ण, खतरनाक, अनधिकृत एवं अन्यायपूर्ण' कहा। उसने बम्बई सरकार से सेना वापस लेने को कहा। अपने प्रतिनिधि को पूना दरबार में नाना फड़नविस के पास भेजा और बातचीत के बाद दोनो पक्षों के बीच पुरंदर की सन्धि हुई।

पुरंदर की सन्धि (1776 ई.)– सालसिट अंग्रेजों के पास ही रहेगा क्योंकि राघोबा ने उसको 25000 रु. पेंशन दे कर गुजरात के कोपरगांव में रहने की व्यवस्था कर दी थी।

2.5.2 द्वितीय आंग्ल–मराठा युद्ध (1802–1805 ई.) (Second Anglo-Maratha War (1802-1805 AD))

कारण

1. लॉर्ड वेलेजली की नीति– 1798 ई. में लॉर्ड वेलेजली का आगमन हुआ, उसने साम्राज्यवादी नीति अपनाई। सहायक सन्धि के द्वारा सबसे पहले

निज़ाम, उसके बाद मैसूर, कर्नाटक, सूरत, अवध कम्पनी के प्रभाव में ले लिया। इस प्रकार उसने कम्पनी की प्रतिष्ठा में वृद्धि की। अब उसकी योजना मराठा साम्राज्य को हड़पने की थी।

2. मराठा साम्राज्य की जर्जर स्थिति— मराठा साम्राज्य पतन की तरफ जा रहा था। सभी योग्य मराठा सरदारों की मृत्यु हो चुकी थी। माधवराव नारायण ने आत्महत्या कर ली। नया पेशवा बाजीराव द्वितीय जो कुचक्री राघोबा का पुत्र था। वह भी पिता की भाँति महत्वकांक्षी था।

अहिल्याबाई होल्कर की 1795 ई. मे मृत्यु हो चुकी थी। उसके, बाद जसवन्तराव होल्कर इन्दौर का शासक बना जो अयोग्य था। अब तक मराठा साम्राज्य को वफादारी से संभालने वाले व्यक्ति नाना फडनवीस की मृत्यु भी 1800 ई. मे हो गई थी।

3. पेशवा द्वारा अंग्रेजों से शरण की मांग— सभी मराठा सरदार महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए पूना दरबार मे हस्तक्षेप कर रहे थे। दौलतराव सिंधिया ने पेशवा से मित्रता कर ली। जसवंतराव होल्कर उसका शत्रु था। उसने भी सेना सहित पूना में प्रवेश किया। पेशवा और सिंधिया की संयुक्त सेना होल्कर को परास्त न कर सकी, और पेशवा बाजीराव द्वितीय को भागकर शरण लेनी पड़ीं। होल्कर ने गद्दी पर अक्टूबर 1802 ई. में विनायकराव (राघोबा) को बैठा दिया।

वेलेजली को मराठा साम्राज्य हस्तक्षेप करने को मिल गया। उसने तुरंत पेशवा के साथ सन्धि कर ली।

वसीन की सन्धि (दिसम्बर 1802 ई.)

पेशवा बाजीराव द्वितीय तथा लॉर्ड वेलेजली के बीच हुई सन्धि की शर्तें थीं—

1. पेशवा अपनी रक्षा के लिए एक अंग्रेजी सहायक सेना अपने राज्य में जिसमें 6000 पैदल सेना होंगी। साथ ही स्थायी रूप से रह रहे यूरोपीय तोपचियों वाला परवाना भी होंगा।
2. इस सहायक सेना के बदले 26 लाख रूपये की आय वाला एक सूबा पेशवा द्वारा कम्पनी को दिया जाएगा।
3. सेना के लिए आयात सामग्री पर चुंगी नहीं लगेगी।
4. पेशवा किसी अन्य यूरोपीय को अपने राज्य में नहीं रखेगा।
5. पेशवा किसी अन्य राज्य से कम्पनी की अनुमती के बिना युद्ध, सन्धि अथवा पत्र—व्यवहार नहीं करेगा।
6. मराठा सरदारों एवं निज़ाम के साथ सुलह की बातचीत मध्यस्तता अंग्रेजों द्वारा की जाएगी।
7. सूरत पर पेशवा ने अपना दावा त्याग दिया।

पेशवा वसीन की सन्धि से संतुष्ट नहीं था। अतः उसने सिन्धिया तथा भोंसले से अंग्रेजों से संघर्ष की बातचीत प्रारंभ कर दी थी। वेलेजली

ने भी युद्ध की तैयारी प्रारंभ कर दी थी। होल्कर ने साथ नहीं दिया क्योंकि वे अंग्रेजों की शरण प्राप्त कर चुके थे। गायकवाड तटस्थ थे।

2.5.3 तृतीय आंग्ल–मराठा युद्ध (Third Anglo-Maratha War) (1804–1806 ई.)

होल्कर और कम्पनी के बीच संघर्ष

जसवंतराव होल्कर द्वितीय मराठा युद्ध के समय भाग गया था। भोसले और सिंधिया के साथ अंग्रेज सन्धि कर चुके थे। होल्कर से उन्होंने सहायक सन्धि स्वीकार करने को कहा, किन्तु वह तैयार नहीं था। वेलेजली पहले ही योजना कर चुका था, उसने युद्ध की घोषणा कर दी। जनरल लेक ने, आर्थर वेलेजली ने दक्षिण और कर्नल मरे ने गुजरात से होल्कर पर आक्रमण किए। होल्कर ने छापामार युद्ध का उपयोग कर अंग्रेजों को बुरी तरह परास्त किया। पाँच बटालियन और छः कम्पनियाँ नष्ट हो गई। होल्कर ने दिल्ली पर आक्रमण किया। इसी बीच अंग्रेजों ने राजधानी इंदौर पर अधिकार कर लिया। लम्बे युद्ध से कम्पनी भारी ऋण तले दब गई। उन्होंने वेलेजली को साथ लिया और कॉर्नवॉलिस (1805) को गवर्नर–जनरल नियुक्त किया। उनको विजयी होता देख सिंधिया एवं भरतपुर के राजा सहायता के लिए पहुँच गए थे।

होल्कर के साथ सन्धि

जसवन्तराव होल्कर की मृत्यु के बाद राज्य के शासन की बागडोर तुलसीबाई के हाथों में आ गई। इस वजह से मराठा सरदार, स्वयं को अपमानित महसूस करने लगे और विद्रोह कर दिया। तुलसीबाई ने अपने पुत्र के साथ अंग्रेजों की शरण ली। सिंहासन रिक्त हो गया। अंग्रेजों ने तुलसीबाई के साथ सन्धि कर ली जिससे होल्कर राज्य के सैनिकों में अंग्रेजों के प्रति घृणा भर गयी।

घटनाएँ

वेलेजली ने युद्ध की तैयारी कर ली। उसने निज़ाम, मैसूर, बडौदा को भी सम्मिलित किया। मराठों की सेना मे 2,50,000 सैनिक थे, इसके अतिरिक्त 40,000 ऐसे सैनिक थे जिन्हे फ्रांसीसी अधिकारी ने प्रशिक्षण दिया था। कम्पनी के पास विभिन्न देशों के 55,000 सिपाही थे तथा अनेक देशी राज्य की सेना थी। मराठों के पास कोई देशी मित्र राज्य नहीं था।

वेलेजली ने अपने भाई आर्थर वेलेजली तथा जनरल लेक के नेतृत्व में सेना भेजी। उन्होंने चारों और से आक्रमण किया। भोंसले और सिंधिया की सेना को असाई के युद्ध में परास्त किया और अहमदनगर पर अधिकार कर लिया। 17 दिसम्बर 1803 ई. को भोंसले ने अंग्रेजों से देवगाँव की सन्धि कर ली। 30 दिसम्बर 1803 ई को सिंधिया ने सुर्जी अर्जुनगांव की सन्धि कर ली।

देवगाँव की सन्धि (17 दिसम्बर 1803 ई.)

भोंसले के साथ अंग्रेजों की सन्धि की शर्तें थी –

1. कटक, बालसौर और वर्जी नदी अंग्रजों को मिले।
2. निज़ाम तथा पेशवा से सुलह के कार्य की मध्यस्थता अंग्रेज करेंगे।
3. किसी अन्य यूरोपीय को सेवा में नही रखेंगे।
4. नागपुर में ब्रिटिश रेजीडेण्ट रखेंगे।

सुर्जी अर्जुनगाँव की सन्धि (30 दिसम्बर 1803 ई.)

सिंधिया के साथ अंग्रेजों की सन्धि की शर्तें थी–

1. जयपुर, जोधपुर, उत्तर मे स्थित उसके समस्त प्रदेश कम्पनी को दिये गए।
2. अहमदनगर, भडौच एवं अजन्ता के पश्चिम के समस्त प्रांत कम्पनी को देंगे।
3. किसी अन्य यूरोपीय को नौकर नहीं रखेंगे।
4. दरबार में अंग्रेज रेसीडेण्ट रहेगा।

सभी सन्धियाँ अपमानजनक थीं और मराठा सरदारों के लिए असहनीय थी। पेशवा मन ही मन अंग्रेजों से रूष्ट थे। अब सहन सीमा पार होने पर उसने हथियार उठाने की ठानी और पूना की ब्रिटिश रेसीडेंसी में आग लगा दी और कुछ दूरी पर ब्रिटिश खेमों पर आक्रमण किया। अंग्रेजों की सेना के मुकाबले उसके पास सेना कम थी। वो परास्त हुआ और 1818 ई. मे सर्मपण कर दिया किन्तु इससे अन्य सरदारों को भी प्रेरणा प्राप्त हुई और वे अंग्रेजों से अपमान का बदला लेने के लिए तत्पर हो गए। योजना एवं एकजुटता के अभाव में एक एक करके उन्हें पराजित करना अंग्रेजों के लिए आसान काम था। पहले पेशवा, फिर भोसले और होल्कर भी पराजित हो गए। नवम्बर 1817 में प्रारंभ हुआ युद्ध दिसम्बर 1817 ई. में समाप्त हो गया।

1. सबसे अधिक हानि पेशवा को हुई। उसका समस्त राज्य अंग्रेजों ने छीन कर उसे 8 लाख पेन्शन देकर कानपुर में विठूर मे रहने के लिए भेज दिया गया।
2. अप्पा साहब को हटाकर नागपुर की गद्दी पर अल्पवयस्क शासक को बिठा दिया गया और नर्मदा के उत्तर मे स्थित उसके राज्य को हड़प कर उसे नर्मदासागर क्षेत्र का नाम दिया गया।
3. होल्कर ने सहायक सन्धि स्वीकार कर ली।
4. सिंधिया और गायकवाड ने युद्ध में भाग नहीं लिया था किन्तु सिंधिया से अजमेर कम्पनी ने हड़प लिया। गायकवाड को सहायक सन्धि स्वीकार करनी पडी।
5. पिण्डारियों का पूर्णत दमन कर दिया गया।
6. इस प्रकार मराठा साम्राज्य का पतन हो गया।

2.5.4 चतुर्थ आंग्ल–मराठा युद्ध (1817–1818 ई.) (Fourth Anglo-Maratha War (1817-1818 AD))

लॉर्ड हेस्टिंग्ज जिसके ब्रिटिश कम्पनी की सत्ता की सर्वोच्च शासन काल में चतुर्थ आंग्ल–मराठा युद्ध हुआ, उसके गवर्नर जनरल जॉर्ज बार्लो (1805–1807) तथा लॉर्ड मिण्टो ने तटस्थता की नीति अपनाई और युद्ध नहीं किए।

इस प्रकार मराठों को दस वर्ष का शांतिकाल प्राप्त हुआ किन्तु उन्होंने इसका लाभ नहीं उठाया और उनकी राजनीतिक, तथा आर्थिक स्थिति नहीं सुधर सकी।

होल्कर– जसवन्तराव होल्कर अपना विवेक खो बैठा और 1811 ई. मे उसका स्वर्गवास हो गया।

सिंधिया– दौलतराव सिंधिया की स्थिति और भी खराब थी। उसके पास आय के साधन इतने कम थे उसकी सेना का खर्च नहीं निकल पाता था। सेना अपना खर्च स्वयं वसूलती थी जिससे जनता परेशान थी। सेनापतियों पर भी नियंत्रण नहीं था।

भोसले– भोसले पिण्डारियों एवं पठानों के आक्रमणों से तंग रहते थे।

गायकवाड– गायकवाड पहले से ही कम्पनी के मामले में तटस्थता का पालन कर रहा था। पेशवा अंग्रेजों की सहायता से गद्दी पर बैठा था वो अपना सम्मान पूर्णतः गवां चुका था। मन ही मन वह इस बात का जिम्मेदार कम्पनी को मानता था।

लॉर्ड कॉर्नवॉलिस हस्तक्षेप न करने की नीति अपनाना चाहता था ताकि स्थायी हल तय हो सके किन्तु 1805 में उसकी मृत्यु हो गई। उसके उत्तराधिकारी लॉर्ड जॉर्ज बार्लो थे।(1805–1807)

पिण्डारियों की समस्या

ये औरंगजेब के काल से ही सक्रिय थे। ये मराठों से जुड़े हुए थे। मुगलों को लूटा करते थे। 19वीं शताब्दी तक इनकी संख्या 15–20 हजार तक हो गई थी। इनमें सभी धर्म के लोगों को सम्मिलित लूटा करते थे। उनके नेता चीतू, वासिल मुहम्मद, करीम खाँ थे।

पठानों की समस्या

इनके नेता अमीरखाँ और मुहम्मद शाह खाँ थे। ये हथियारबंद झुण्ड था। जो राजा इन्हे अधिक धन देता था उसके पक्ष की ओर से ये युद्ध करते थे। इनका कार्यक्षेत्र राजस्थान था।

हेस्टिंग्ज ने इनके विरुद्ध युद्ध की तैयारियाँ आरम्भ कर दी। उसने प्रयास किया कि मराठे पिण्डारियों के साथ संयुक्त सेना न बना सके।

1 भोसले के साथ सन्धि– हेस्टिंग्ज ने कूटनीति का भी प्रयोग किया। उसने रघुजी भोसले की मृत्यु का लाभ उठाया और गद्दी पर अपने व्यक्ति को

बैठाकर उसके साथ सहायक सन्धि कर ली। अब उसे सिंधिया के राज्य पर आक्रमण करने के लिए नर्मदा के निकट ठिकाना मिल गया। अंग्रेजों के साथ मराठा परिसंघ में सर्वप्रथम पेशवा ने सहायक सन्धि स्वीकार की थी। हेस्टिंग्ज ने उसको धमकाकर नई सन्धि स्वीकार करवा ली जिसके अनुसार :

- पेशवा ने मराठा परिसंघ की प्रमुखता का परित्याग कर दिया।
- पेशवा किसी विदेशी शक्ति से पत्र–व्यवहार नहीं करेगा।
- सहायक सेना के खर्च के लिए 35 लाख की आय वाला क्षेत्र कम्पनी को दे दिया।
- अहमदनगर का किला, बुदेलखण्ड, मालवा कम्पनी को दे दिए।

2. सिंधिया के साथ सन्धि (ग्वालियर की संधी 1819 ई.)– सिंधिया पिण्डारियों को अपने राज्य मे प्रवेश करने नहीं देगा और उनके विरूद्ध अंग्रेजों की सहायता करेगा। राजपूत राज्यों को कम्पनी के राज्यों की सन्धि की शर्तें स्वीकार करने पर वेलेजली की अंग्रेजी सेना पेशवा के साथ पूना पहुँची और उसे गद्दी पर बैठा दिया। इसी कारण होल्करों को भागना पड़ा।

पेशवा तथा अंग्रेंजों के बीच हुई बसीन की सन्धि को पेशवा ने अपना अपमान समझा। इस तरह पेशवा ने अंग्रेजों के हाथों में मराठा साम्राज्य की स्वतंत्रता दे दी। सिंधिया तथा भोसले इसे राष्ट्रीय प्रश्न बना के लड़ने को तैयार हो गए। गायकवाड तटस्थ थे और होल्कर मालवा चला गया।

2.6 आंग्ल–मैसूर सम्बन्ध (Anglo-Mysore Relations)

मैसूर राज्य विजयनगर का राज्य था। स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद मैसूर राज्य में कृष्णराय नाम के शासक का राज्य था जो कि **वाडियार** वंश से था। मैसूर में **कृष्णराय** के समय में दो अधिकारी **नन्दराज व देवराज** थे। इन्होंने राजा को अपने वश में कर रखा था और प्रशासन को अपने तरीके से चलाते थे।

हैदर अली– इसी समय हैदर अली ने वाडयार राजवंश का अंत कर दिया और शासन अपने हाथों में ले लिया। **1721 ई. में हैदर अली** का जन्म हुआ। 16 वर्ष की आयु में वह मैसूर के सेना के **घुड़साल में काम करने के लिए भर्ती हुआ**। वहाँ पर रहते हुये उसने युद्ध के गुण सीखे जैसे– घुड़सवारी करना, तलवार चलाना आदि सीखा और फिर एक **सैनिक के रुप में भर्ती हुआ।** वह एक योग्य और ऊर्जावान सेनापति बना और कुछ ही समय में वह **सेना का प्रधान सेनापति बन गया।** सारी सेनाएँ उसके नियन्त्रण में आ गयी। उसने नन्दराज से सारी शक्तियाँ ले ली तथा राजा को नाममात्र का शासक बने रहने दिया। उस समय मैसूर के शासक को एक योग्य ऊर्जावान व अनुभवी व्यक्ति की आवश्यकता थी जो हैदर अली में दिखायी दीं तब **राजा ने हैदर अली को मैसूर का शासक घोषित कर दिया।** और तब हैदर अली ने वहाँ का विकास करना शुरू किया।

2.6.1 प्रथम आंग्ल–मैसूर युद्ध (1767–1769 ई.) (First Anglo-Mysore War (1767-1769 AD))

टिप्पणी

1766 ई. में जब हैदर अली मराठों से एक युद्ध में उलझा हुआ था, तब मद्रास के अंग्रेज अधिकारियों ने निज़ाम की सेवा में एक ब्रिटिश सैनिक टुकड़ी भेज दी थी, और हैदर अली के विरुद्ध निज़ाम से गठबंधन कर लिया था क्योंकि अंग्रेज हैदर अली की बढ़ती हुई शक्ति से भयभीत होने लगे थे। अंग्रेजों की सहायता से निज़ाम ने मैसूर के भू–भागों पर आक्रमण कर दिया था। अंग्रेजों की इस अकारण शत्रुता से हैदर अली को बड़ा क्रोध आया। उसने मराठों से सन्धि कर ली, अस्थिर बुद्धि निज़ाम को अपनी ओर मिला लिया और निज़ाम की सहायता से कर्नाटक पर, जो उस समय अंग्रेजों के नियंत्रण में था, आक्रमण कर दिया।

1768 ई. में निज़ाम युद्ध से हट गया और उसने अकेले हैदर अली को अंग्रेजों का सामना करने के लिए छोड़ दिया। इस प्रकार प्रथम मैसूर युद्ध का सूत्रपात हुआ। यह युद्ध दो वर्षों तक चलता रहा और 1769 ई. युद्ध में जब हैदर अली का अचानक धावा मद्रास के किले की दीवारों तक पहुँच गया, तब युद्ध का अंत हुआ। अंग्रेजों ने हैदर अली द्वारा सुलह की शर्तें स्वीकार कर लीं।

मद्रास की सन्धि– अंग्रेजों ने विवशता में हैदर अली की शर्तों पर 4 अप्रैल, 1769 को मद्रास की सन्धि कर ली। सन्धि की शर्तों के अनुसार यह एक प्रतिरक्षात्मक सन्धि थी। दोनों पक्षों ने एक दूसरे के जीते हुए क्षेत्रों को वापस किया। अंग्रेजों ने हैदर अली पर किसी और के आक्रमण के समय रक्षा करने का वायदा किया। इस सन्धि से हैदर की प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई।

2.6.2 द्वितीय आंग्ल–मैसूर युद्ध (1780–1784 ई.) (Second Anglo-Mysore War (1780-1784 AD))

द्वितीय मैसूर युद्ध 1780 से 1784 ई. तक चला। अंग्रेजों ने 1769 ई. की मद्रास की सन्धि की शर्तों के अनुसार आचरण नहीं किया और 1770 ई. में हैदर अली को, समझौते के अनुसार उस समय सहायता नहीं दी, जब मराठों ने उस पर आक्रमण किया।

चित्र क्र. 2.5: द्वितीय आंग्ल–मैसूर युद्ध
https://m.dailyhunt.in/news/india/hindi/gs+junction-epaper-gsjun/aangl+maratha+pratham+dvitiy+aur+tritiy+yuddh-newsid-dh1c36ef7faaea4e4cb0f2b15c3c1b072d_b03ccdc6c0e4340d9b4b1c8a80a828c2

अंग्रेजों के इस विश्वासघात से हैदर अली को अत्यधिक क्षोभ हुआ था। जिससे द्वितीय मैसूर युद्ध प्रारंभ हो गया।

हैदर के अनुरोध करने पर भी अंग्रेजी सेना ने उसका साथ नहीं दिया। 19 मार्च, 1779 को अंग्रेजों ने माही पर अधिकार कर लिया। माही हैदर अली के अधिकार क्षेत्र में स्थित एक छोटी फ्रांसीसी बस्ती थी। माही पर अंग्रेजों के अधिकार ने हैदर की सहन शक्ति को तोड़ दिया। हैदर अली का अब अंग्रेजों से लड़ना अनिवार्य हो गया था। फरवरी, 1780 में हैदर अली अंग्रेज विरोधी गुट में शामिल होकर जुलाई, 1780 ई में लगभग 80,000 आदमियों एवं बन्दूक धारियों से युक्त सेना को लेकर कर्नाटक के मैदान में पहुँचा और साधारण सी झड़प में कर्नल बेली के नेतृत्व में अंग्रेजी सेना को हराते हुए अर्काट पर अधिकार कर लिया।

हैदर अली की पराजय और मृत्यु

गवर्नर–जनरल वारेन हेस्टिंग्ज ने **हैदर अली** के मुकाबले के लिए आयरकूट को दक्षिण भेजा, जिसने अपनी सफल कूटनीति से महादजी सिंधिया और निज़ाम को अंग्रेज विरोधी गुट से अलग करने में सफलता प्राप्त की। गुट के बिखर जाने पर भी हैदर अली के उत्साह में कोई कमी नहीं आयी, वह डट कर अंग्रेजों का मुकाबला करता रहा। परन्तु 1781 ई. में सर आयरकूट द्वारा हैदर अली पोर्टोनोवो में पराजित कर दिया गया। युद्ध में मिली पराजय के कारण मिली मानसिक क्षति के कारण 7 दिसम्बर, 1782 को हैदर अली की मृत्यु हो गई।

इस युद्ध के बीच ही हैदर अली की मृत्यु हो गई थी, किंतु उसके पुत्र और उत्तराधिकारी टीपू सुल्तान ने युद्ध जारी रखा और बेदनूर पर अंग्रेजों के आक्रमण को असफल करके मंगलोर जा घेरा। अब मद्रास की सरकार ने समझ लिया कि आगे युद्ध बढ़ाना उसकी सामर्थ्य के बाहर है। अतः उसने 1784 ई. में सन्धि कर ली, जो मंगलोर की सन्धि कहलाती है, और जिसके आधार पर दोनों पक्षों ने एक दूसरे के भू–भाग वापस कर दिए।

2.6.3 तृतीय आंग्ल–मैसूर युध्द (1790–1792 ई.) (Third Anglo-Mysore War (1790-1792 AD))

तृतीय अंग्ल मैसूर युध्द 1790 से 1792 तक चला। गवर्नर जनरल लॉर्ड कॉर्नवॉलिस ने निज़ाम तथा मराठों के साथ 1790 ई. में टीपू के विरुद्ध त्रिदलीय संगठन की रचना की। टीपू ने भी 1784 से 1785 में तुर्कों का सहयोग हासिल करने के लिए कुस्तुंतुनिया में एक राजदूत भेजा। टीपू ने 1787 में एक दूत मण्डल फ्रांस भेजा।

टीपू का त्रावणकोर पर आक्रमण

त्रावणकोर के राजा ने डचों से कोचीन रियासत जिसे टीपू अपने अधिकार क्षेत्र में समझता था में स्थित जयगोट और क्रगालूर खरीदने का प्रयास किया। इसे अपने राज्य में हस्तक्षेप मानते हुए अप्रैल 1790 ई. में टीपू ने त्रावणकोर पर आक्रमण कर दिया। त्रावणकोर के राजा की ओर से लड़ते हुए कॉर्नवॉलिस ने मार्च 1791 ई. में बंगलौर जीत लिया और श्रीरंगपट्टनम तक पहुँच गया।

श्रीरंगपट्टनम की सन्धि

टीपू ने अंग्रेजों के साथ मार्च 1792 ई. में श्रीरंगपट्टनम की सन्धि की। यह सन्धि टीपू के लिए बहुत अपमानजनक सन्धि थी। इसके तहत टीपू को अपना आधा राज्य अंग्रेजों और उसके मित्रों को देना पड़ा। उपरोक्त सन्धि के तहत टीपू को जमानत के तौर पर प्रबंधक के रूप में अपने दो पुत्रों को भी कॉर्नवॉलिस के पास भेजे। टीपू ने तीस लाख पौण्ड कम्पनी को क्षतिपूर्ति के रूप में दिये।

तृतीय आंग्ल मैसूर युद्ध में टीपू की शक्ति क्षीण हो गयी। उसका राज्य चारों ओर से कम्पनी के राज्य से घिर गया।

2.6.4 चतुर्थ आंग्ल–मैसूर युद्ध (1799 ई.) के कारण (Fourth Anglo-Mysore War (1799 AD))

टीपू की कार्यवाही– अंग्रेजों ने मराठों तथा निज़ाम से मिलकर तृतीय मैसूर युद्ध में टीपू को पराजित कर उसके श्रीरंगपट्टनम की सन्धि की। टीपू इस अपमान को भूल नहीं सका और अपनी शक्ति को एकत्र करने के फिर से प्रयास करने लगा।

- युद्ध की तैयारियाँ शुरु कर दी।
- सर्वप्रथम उसने युद्ध हर्जाना समय अवधि में चुकाकर मुक्ति प्राप्त की।
- राजधानी की किलेबन्दी की।
- सेना का पुर्नगठन किया।
- पैदल सेना और अश्व सेना को प्रशिक्षण दिया।
- विरोधी सामन्तों को दण्ड दिया।
- व्यापार के विकास के लिए प्रयत्न किए।

अंग्रेजों के विरुद्ध सहायता पाने के लिए अपने दूत अरब, काबुल, तुर्की और मारीशस के फ्रांसीसी गवर्नर के पास भेजे।

सभी से उसे सकारात्मक उत्तर प्राप्त हुए और शीघ्र ही फ्रांसीसी राज्य में एकत्र होने लगे।

लॉर्ड वेलेजली की कार्यवाही

टीपू की कार्यवाहियों को देखकर लॉर्ड वेलेजली को बहाना मिल गया। उसने भी युद्ध की तैयारियाँ आरंभ की। 1799 ई. मे उसने चारो ओर से मैसूर पर आक्रमण कर दिया तथा मराठे भी उसके साथ थे। 6 मार्च 1799 ई. में युद्ध शुरु हो गया। टीपू ने साहसपूर्वक अंग्रेजी सेना का सामना किया परन्तु अंत में वीरगति को प्राप्त हुआ।

परिणाम

- मैसूर को अंग्रेजों तथा निज़ाम ने आपस में बाँट लिया।
- पेशवा को कुछ प्राप्त नहीं हुआ क्योंकि उसने वेलेजली की शर्ते स्वीकार नहीं की।
- अन्य किसी यूरोपीय तथा फ्रांसीसियों से कोई समझौता नहीं करने से उसको दिया हुआ राज्य भी उन्होंने 1800 ई. में छीन लिया।
- मैसूर भाग उसके प्राचीन हिन्दू राजवंश को दे दिया। राजा अल्पवयस्क था, उसके लिए टीपू के मंत्री पूर्निया को नियुक्त किया गया। उसके पास सात पगोडा प्रति वर्ष की राशी के बदले अंग्रेजी सेना रखी गई।

2.7 लॉर्ड वेलेजली और सहायक सन्धि (Lord Wellesley and Subsidiary Alliance)

लॉर्ड वेलेजली 1798 ई. में सर जॉन शोर के उत्तराधिकारी के रुप में भारत का गवर्नर जनरल बनकर आया। उस समय भारत की राजनीतिक परिस्थितियाँ इस प्रकार थीं।

टिप्पणी

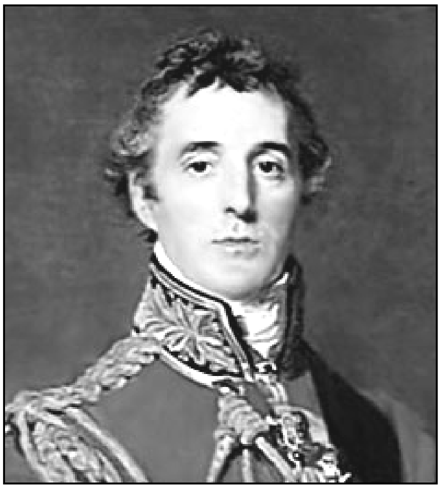

चित्र क्र. 2.6: लॉर्ड वेलेजली

http://navrangindia.blogspot.com/2015/11/lord-wellesley-1798-1805-and-his-indian.html

2.7.1 लॉर्ड वेलेजली के आगमन के समय भारत का राजनीतिक वातावरण (Political Atmosphere of India at the time of Lord Wellesley's Arrival)

1. **ईस्ट इंडिया कम्पनी**– कम्पनी का अधिकार बंगाल, बिहार और उड़ीसा के साथ मद्रास और बम्बई पर था। ये तीनों क्षेत्र एक दूसरे से पृथक थे।
2. **मुगल सम्राट**– मुगल सम्राट शाहआलम ने मराठों से संरक्षण प्राप्त कर लिया था।
3. **मराठों की स्थिति**– मराठा सरदारों–पेशवा बाजीराव द्वितीय, दौलतराव सिंधिया, यशवन्तराव होलकर में पारस्परिक मनमुटाव था।
4. **मैसूर राज्य**– मैसूर का शासक टीपू सुल्तान अंग्रेजों का कट्टर शत्रु था। उसने फ्रांस से मैत्री का प्रयास करना प्रारंभ कर दिया था।
5. **हैदराबाद की स्थिति**– हैदराबाद के निज़ाम ने मराठों के आक्रमण के समय अंग्रेजों से सहायता मांगी थी किन्तु सर जॉन शोर ने इस पर ध्यान नहीं दिया, अतः उसने फ्रांसीसियों को अपनी सेना को प्रशिक्षण देने के लिए तैयार कर लिया। यह अंग्रेजों के लिए खतरनाक सिद्ध हो सकता था।
6. **अवध**– अवध का नवाब अंग्रेजों का मित्र था किन्तु अंग्रेज व्यापारियों ने अवध में लूट मचा रखी थी और अवध की आर्थिक तथा प्रशासनिक व्यवस्था को नष्ट कर दिया था।
7. **कर्नाटक**– नवाब की अंग्रेजों से मित्रता थी किन्तु कम्पनी के हस्तक्षेप के फलस्वरुप नवाब की शासन व्यवस्था चौपट हो गई थी।
8. **बाह्य खतरा**– फ्रांस और इंग्लैण्ड में कुछ चल रहा था। नेपोलियन बोनापार्ट द्वारा भारत पर आक्रमण का खतरा था।

2.7.2 सहायक सन्धि का उद्देश्य (Objectives of Subsidiary Alliance)

लॉर्ड वेलेजली की सहायक सन्धि नीति के उद्देश्य निम्नलिखित थे–

1. ब्रिटिश अधिकृत भारतीयों को संगठित करना और कम्पनी की सत्ता को सुदृढ़ करना।
2. फ्रांसीसी खतरे से निपटने के लिए भारतीय राज्यों में उन्ही के व्यय पर ब्रिटिश सेना रखना।
3. भारतीय राज्यों मे सहायक सेना रखना ताकि ब्रिटिश व्यापार के विकास में बाधा न उत्पन्न हो।

2.7.3 सहायक सन्धि की विशेषताएँ (Features of Subsidiary Alliance)

लॉर्ड वेलेजली द्वारा लागू की गई सहायक सन्धि की निम्नलिखित विशेषताएँ थी–

1. सहायक सन्धि स्वीकार करने वाले भारतीय राज्य को एक निश्चित संख्या में ब्रिटिश सैनिक रखने पड़ते थे जिनका नियंत्रण ब्रिटिश अधिकारी के हाथों में होता था।
2. यह सेना उन राज्यों को आंतरिक एवं बाह्य सुरक्षा प्रदान करने के लिए रखी गई थी।
3. इन सैनिकों का खर्च स्वयं राज्यों को वहन करना पड़ता था।
4. सेना के खर्च के लिए देशी राज्य को कम्पनी को इतना बडा भू–भाग देना पड़ता था ताकि वो सेना के खर्च के लिए पर्याप्त रहे।
5. जो राज्य सहायक सन्धि स्वीकार करते थे उन्हें कम्पनी की सर्वोच्च सत्ता स्वीकार करनी पड़ती थी। वे ब्रिटिश सरकार की अनुमति के बिना अन्य किसी राज्य से न युद्ध कर सकता था न सन्धि।
6. संरक्षित राज्य किसी अन्य युरोपीय को नौकर नहीं रख सकता था।
7. प्रत्येक संरक्षित राज्यों को एक ब्रिटिश रेसीडेन्ट प्रतिनिधी अपने दरबार में रखना था कि सहायक सन्धि का पालन पूर्णरुप से हो रहा है।

सहायक सन्धि स्वीकार करने वाले राज्य

वेलेजली ने निम्नलिखित राज्यों को सहायक सन्धि स्वीकार करने के लिए बाध्य किया–

1. हैदराबाद– सहायक सन्धि पर सर्वप्रथम 1798 ई. में हैदराबाद के निज़ाम ने हस्ताक्षर किये। इसका मुख्य कारण निज़ाम को फ्रांसीसियों से दूर रखना था। निज़ाम मराठों के विरुद्ध फ्रांसीसियों से मदद प्राप्त कर रहे थे। अतः वेलेजली ने निज़ाम को सहायक सन्धि का प्रस्ताव दिया। सन्धि की शर्तें इस प्रकार थीं–

- स्थायी सेना बटालियन हैदराबाद मे रख दी गई।

टिप्पणी

- सहायक सेना का खर्च 2,41,710 पौण्ड प्रति वर्ष निज़ाम को उठाना होगा।
- फ्रांसीसी सेना हटा दी गई। इस प्रकार फ्रांसीसी प्रभाव समाप्त हो गया।
- कम्पनी सरकार मराठों और निज़ामों के बीच समझौता न करा पाने पर मराठों से निज़ाम की रक्षा करेंगी।

1800 ई. में निज़ाम को पुनः सन्धि पर हस्ताक्षर करने पड़े। इस सन्धि की शर्ते थी–

- सहायक सेना की संख्या बढ़ा दी गई।
- सेना के खर्च के लिए निज़ाम को मैसूर युद्धों में जीते हुए समस्त प्रदेश कम्पनी को देने पड़े।
- निज़ाम ने अन्य युरोपियों के साथ सम्बध न रखने का वचन दिया।
- अंग्रेजों ने विदेशी आक्रमणों से निज़ाम की रक्षा का आश्वासन दिया।

2. **मैसूर**– टीपू को पराजित करने के बाद वेलेजली ने मैसूर राज्य का एक भाग पुराने हिन्दुवंश को वापस लौटाकर उसके साथ सन्धि कर ली। सन्धि की शर्तें थीं–

- सहायक सेना रखी गई जिसका व्यय सात लाख पगोडा (21 लाख रुपये) प्रतिवर्ष राजा को देना होगा।
- युद्ध काल में यह व्यय अधिक भी हो सकता है।
- राजा को अन्य किसी यूरोपीय से सम्बन्ध रखने की मनाई थी।

3. **पेशवा**– पेशवा बाजीराव द्वितीय ने 1802 ई. में अंग्रेजों के साथ बसीन की सन्धि कर ली। सन्धि की शर्ते थी–

- सहायक सेना जिससे 6000 पैदल तथा तोपखाना होगा पेशवा की रक्षा करेगा।
- इस सेना का व्यय 27 लाख रुपये नकद न देकर उसे उतनी आय का एक क्षेत्र देना होगा।
- कम्पनी की आज्ञा के बिना वह किसी यूरोपीय को नौकर नही रखेगा।
- वह किसी अन्य राज्य से पत्रव्यवहार सन्धि या युद्ध तब तक नही करेगा जब तक अंग्रेज अनुमति न दे।

4. **सिंधिया**– 1803 ई. में सिंधिया को सुर्जी अर्जुनगाँव की सन्धि पर हस्ताक्षर करने पड़े। सन्धि के अनुसार सहायक सेना उसके राज्य के अन्दर नहीं बल्कि सीमा पर तैनात की गई।

5. **भोसले**– बाजीराव ने अंग्रेजों की मदद से पेशवा पर विजय प्राप्त किया। दोनों ही पराजित हुए। सिंधिया को सुर्जी अर्जुनगाँव एवं भोसले को देवगाँव की सन्धि स्वीकार करनी पडी।

6. **अन्य सन्धियाँ**

अवध– बक्सर के युद्ध में अवध पराजित हुआ था। नवाब को भारी मात्रा में राशि चुकानी पड़ रही थी। वेलेजली इस राशी को बढ़ाना चाहता था। अतः 1801 ई. में उसने नवाब को सन्धि के लिए बाध्य किया। सन्धि की शर्तें थीं–

- नवाब को कम्पनी को रोहिलखण्ड और दोआब के उपजाऊ प्रदेश दिये।
- अवध के आंतरिक मामले में कम्पनी को हस्तक्षेप का अधिकार प्राप्त हुआ।

7. कर्नाटक (अर्काट)– कर्नाटक का नवाब अजीमुद्दौला दुर्बल शासक था। वह अंग्रेजों के हाथों की कठपुतली था। अतः वेलेजली के लिए कर्नाटक में हस्तक्षेप करना आसान था। उसने 1801 ई. में नवाब से सन्धि कर ली। सन्धि की शर्तें थीं–

- सम्पूर्ण कर्नाटक का सैनिक एवं असैनिक प्रशासनिक अधिकार कम्पनी के हाथों में आ गया।
- इसके चलते नवाब को राज्य की आय का 1/5 हिस्सा दिया जाना तय हुआ।

8. तंजौर– तंजौर में उत्तराधिकारी के संघर्ष ने वेलेजली को हस्तक्षेप का अवसर दिया। उसने तंजौर को 1799 ई. में सन्धि के लिए राजी कर लिया। सन्धि की शर्तें थीं–

- सम्पूर्ण तंजौर का सैनिक एवं असैनिक प्रशासन का अधिकार कम्पनी के हाथों में।
- इसके बदले शासक सरफोजी की वार्षिक 4 लाख रुपये पेंशन तय कर दी गई।

9. सूरत– सूरत का सैनिक प्रशासन पहले ही अंग्रेजों के हाथों में था किन्तु असैनिक प्रशासन नवाब के हाथों में था। वेलेजली ने हस्तक्षेप कर सन्धि कर ली। सन्धि की शर्ते निम्नलिखित थी–

- सम्पूर्ण सैनिक तथा असैनिक प्रशासन अंग्रेजों ने अपने हाथों मे ले लिया।
- इसके बदले नवाब को 1 लाख रुपये पेंशन तथा राजस्व का 1/5 भाग दिया जाना निश्चित हुआ।

सहायक सन्धि के गुण

1. आंतरिक विद्रोह एवं बाहरी आक्रमणकारी से देशी राज्यों को सुरक्षा प्राप्त हुई।
2. कम्पनी में पूरी मध्यस्थता की जिम्मेदारी ले लेने से दो राज्यों के बीच की पारस्पारिक प्रतिद्वंदिता समाप्त हो गई।
3. आपसी युद्ध समाप्त होने से शांति की स्थापना हुई। जिससे व्यापार में उन्नति हुई।
4. सहायक सन्धि से कम्पनी को अत्याधिक लाभ हुआ।
   (i) कम्पनी ने विशाल सेना स्थापित कर दी।
   (ii) इस सेना का खर्च कम्पनी को उठाना नहीं पड़ता था।

(iii) अन्य विदेशी शक्तियों के प्रभाव को अंग्रेजों ने खत्म कर दिया था। फ्रांस के आक्रमण का भय नही।

(iv) कम्पनी का साम्राज्य विस्तार आसान हो गया।

(iii) संरक्षित राज्य पूर्णतः अंग्रेजों के हाथों की कठपुतली थे।

सहायक सन्धि के दोष

1. संरक्षित राज्यों को दरबार में अंग्रेज रेसीडेण्ट रखना पड़ता था। इससे राज्यों के आंतरिक माामलों में हस्तक्षेप करने का कम्पनी को अधिकार था।
2. संरक्षित राज्यों को ब्रिटिशों को धन चुकाने के लिए राज्य के उपजाऊ क्षेत्र देने पड़ते थे। इस व्यय का भार जनता से कर के रुप में वसूल किया जाता था।
3. संरक्षित राज्यों को सुरक्षा की चिंता नही थी। अतः उन्होंने प्रशासन में रुचि लेना बंद कर दिया। ब्रिटिश अधिकारियों ने इस स्थिति का फायदा उठाया। वे जनता से मनमानी करने लगे।
4. भारतीय सैनिक वर्ग स्थापित हुआ।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. वॉरेन हेस्टिंग्ज भारत में गवर्नर जनरल कब बना?
   (अ) 1772 ई. (ब) 1773 ई.
   (स) 1774 ई. (द) 1775 ई.
2. रेग्युलेटिंग एक्ट कब पारित हुआ?
   (अ) 1772 ई. (ब) 1773 ई.
   (स) 1774 ई. (द) 1775 ई.
3. चतुर्थ आंग्ल–मैसूर युद्ध के समय गवर्नर जनरल था–
   (अ) क्लाइव (ब) वॉरेन हेस्टिंग्ज
   (स) कॉर्नवॉलिस (द) वेलेजली
4. पुरन्दर की सन्धि हुई–
   (अ) 1780 ई. (ब) 1781 ई.
   (स) 1776 ई. (द) 1783 ई.
5. सहायक सन्धि पर सर्वप्रथम हस्ताक्षर किये–
   (अ) मराठा ने (ब) अवध ने
   (स) फ्रांसीसी ने (द) निज़ाम ने

2.8 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर (Answers to Check Your Progress)

1. (अ)
2. (ब)
3. (द)
4. (स)
5. (द)

2.9 सारांश (Summary)

क्लाइव 1767 ई. में इंग्लैण्ड चला गया। उसके द्वारा स्थापित द्वैध शासन प्रणाली ने बंगाल को भ्रष्ट तथा जनता की दशा को शोचनिय बना दिया था। हालात ये हुए 1769–70 ई. में भयंकर अकाल पड़ा। 1772 ई. में वारेन हेस्टिंग्ज गवर्नर जनरल बनकर आया। उसने स्थिति में सुधार लाने के लिए अनेक प्रशासनिक सुधार किए। अधिक स्थिति सुधार हेतु उसने दस्तक एवं फ्री पास की प्रथा बंद कर दी। एवं राजस्व परिषद का गठन किया। 1773 ई. में रेग्युलेटिंग एक्ट पारित किया गया। जिसके अनुसार 1774 ई. में कलकत्ता में सर्वोच्च न्यायलय की स्थापना की गई। अंग्रेजी शासन के इतिहास में वॉरेन हेस्टिंग्ज का उच्च स्थान है। 1786 ई. में लॉर्ड कॉर्नवॉलिस को गवर्नर जनरल बनाकर भेजा गया। वसूली लगान की समस्या को दूर करने के लिए उसने स्थायी बन्दोबस्त लागू किया। इस व्यवस्था से कम्पनी को लाभ हुआ। किन्तु किसानों को जमीदारों की दया पर छोड़ दिया गया जो उनसे मनमाना कर वसूल करके उनपर अत्याचार करते थे। वे मराठा थे किन्तु उन्होंने अपनी कूटनीतिक चालों से मराठा सन्धि पर हस्ताक्षर करवा लिए। पेशवा, भोसले, एवं सिंधिया लॉर्ड वेलेजली की सहायक सन्धि के चंगुल में उलझ गये। मैसूर के शासक हैदरअली एवं उसके पुत्र टीपू ने अंग्रेजों का सामना किया किन्तु वीरगति को प्राप्त हुए और अंग्रेजों ने मैसूर राज्य को हड़प लिया।

2.10 मुख्य शब्दावली (Key Terminology)

- **बोर्ड ऑफ रेवेन्यू:** राजस्व परिषद जिसका गठन लॉर्ड वॉरेन हेस्टिंग्ज ने राजस्व नियंत्रण के लिए किया था।
- **ठेका प्रणाली:** लगान वसून करने के काम जिसे जमींदारों को ठेके पर दिया गया।
- **दिवानी न्यायालय:** इस अदालत में उत्तराधिकारी, विवाह आदि व्यापारिक विवादों का निपटारा किया जाता था।

टिप्पणी

- **फौजदारी अदालतः** यह भारतीय न्यायाधीशों के अधिन थी। जिसमें काजी मुफ्ती आदि बैठते थे। यहाँ डकैती, हत्या, चोरी आदि अपराधों का निर्णय किया जाता था।
- **आमिलः** दिवानी अदालत के भारतीय न्यायाधीश।
- **सर्वोच्च न्यायलयः** 1773 ई. रेग्युलेटिंग एक्ट द्वारा कलकत्ता में स्थापित किया गया।
- **निज़ामः** हैदराबाद के शासक।
- **पेशवाः** मराठा संघ के प्रमुख छत्रपति शाहू द्वारा नियुक्त प्रधानमंत्री प्रथम पेशवा बालाजी, विश्वनाथ के समय ही यह पद वंशानुगत हो गया। उनकी राजधानी पूना थी।

2.11 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास (Self Assessment Questions and Exercises)

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. वॉरेन हेस्टिंग्ज ने शासन में क्या सुधार किए?
2. रेग्युलेटिंग एक्ट के गुण लिखिए।
3. पिट्स इंडिया एक्ट की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
4. स्थायी बन्दोबस्त के दोष लिखिए।
5. टीपू की उपलपब्धियों की व्याख्या कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. आंग्ल–मैसूर युद्धों के कारण एवं परिणाम लिखिए।
2. आंग्ल–मराठा सम्बन्ध पर प्रकाश डालिए।
3. वेलेजली की सहायक सन्धि का वर्णन कीजिए।
4. स्थायी बन्दोबस्त के मुख्य प्रावधान लिखिए।
5. वॉरेन हेस्टिंग्ज के प्रशासनिक सुधारों का वर्णन कीजिए।

2.12 सहायक पाठ्य सामग्री (Suggested Readings)

1. भारत का इतिहास (1740 ई. से 1857 ई.) सत्यनारायण दुबे।
2. भारत का इतिहास (1740 ई. से 1950 ई.) ए. सी. दहिभाते।

टिप्पणी

इकाई 3 महाराजा रणजीत सिंह और आंग्ल—सिख सम्बन्ध, लॉर्ड हेस्टिंग्स और ब्रिटिश सार्वभौम शासन की स्थापना, मराठाओं का पतन, आंग्ल—बर्मा सम्बन्ध, आंग्ल—अफगान सम्बन्ध, डलहौजी का व्यपगत सिद्धांत, उसका प्रशासन एवं सुधार, प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857— कारण, प्रकृति और परिणाम, 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका

संरचना (Structure)

3.0 परिचय

3.1 उद्देश्य

3.2 महाराजा रणजीत सिंह और आंग्ल—सिख सम्बन्ध

- 3.2.1 रणजीत सिंह और अंग्रेजों के बीच सम्बन्ध
- 3.2.2 मेटकाफ तथा रणजीत सिंह के बीच सन्धि
- 3.2.3 अमृतसर की सन्धि (1809 ई.)
- 3.2.4 सिंध और विलियम बैंटिक की कूटनीति
- 3.2.5 रणजीत सिंह की शासन व्यवस्था
- 3.2.6 प्रथम सिख युद्ध (1845—46 ई.)
- 3.2.7 युद्ध की घटनाएँ
- 3.2.8 द्वितीय सिख युद्ध (1848—49 ई.)

3.3 लॉर्ड हेस्टिंग्स और ब्रिटिश सार्वभौम शासन की स्थापना

- 3.3.1 आंग्ल—नेपाल युद्ध (1814—1816 ई.)
- 3.3.2 लॉर्ड हेस्टिंग्स के समक्ष समस्याएँ
- 3.3.3 लॉर्ड हेस्टिंग्स के कार्य

3.4 मराठों के पतन के कारण

3.5 आंग्ल—बर्मा सम्बन्ध

- 3.5.1 प्रथम बर्मा युद्ध (1824—26 ई.) के कारण
- 3.5.2 युद्ध की घटनाएँ
- 3.5.3 द्वितीय बर्मा युद्ध (1825 ई.) के कारण
- 3.5.4 तृतीय बर्मा युद्ध (1885 ई.)

3.6 आंग्ल—अफगान सम्बन्ध

- 3.6.1 प्रथम अफगान युद्ध (1839—1842 ई.) के कारण
- 3.6.2 युद्ध की घटनाएँ
- 3.6.3 1844—76 तक आंग्ल—अफगान सम्बन्ध
- 3.6.4 द्वितीय अफगान युद्ध (1878—90 ई.)
- 3.6.5 युद्ध की घटनाएँ एवं परिणाम
- 3.6.6 तृतीय अफ़गान युद्ध (1919 ई.)

टिप्पणी

3.7 डलहौजी का व्यपगत सिद्धांत उसका प्रशासन एवं सुधार
3.7.1 व्यपगत (उत्तराधिकारहरण) सिद्धांत का क्रियान्वयन
3.7.2 लॉर्ड डलहौजी का प्रशासन एवं सुधार
3.8 प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857—कारण, प्रकृति और परिणाम
3.8.1 1857 ई. के विद्रोह के कारण
3.8.2 क्रान्ति का संगठन
3.8.3 क्रान्ति की घटनाएँ
3.8.4 क्रान्ति का दमन
3.8.5 1857 ई. की क्रान्ति के असफलता के कारण
3.8.6 1857 ई. की क्रान्ति के प्रभाव
3.8.7 क्रान्ति का स्वरूप
3.9 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका
3.9.1 रानी लक्ष्मीबाई
3.9.2 रानी अवंतीबाई
3.9.3 झलकारीबाई
3.10 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
3.11 सारांश
3.12 मुख्य शब्दावली
3.13 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.14 सहायक पाठ्य सामग्री

3.0 परिचय (Introduction)

प्लासी तथा बक्सर के युद्धों के बाद बंगाल प्रांत की जीत एवं वहां प्राप्त दिवानी ने अंग्रेजों की महत्वाकांक्षा को हवा दी और उन्होने धीरे–धीरे पंजाब पर अपना अधिकार कर लिया। पंजाब पर रणजीतसिंह का शासन था। वह एक प्रतिभाशाली कूटनीतिज्ञ था। उसने अंग्रेजों को सतलज पार रोके रखा किन्तु अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति के कारण उसकी मृत्यु के उपरांत सिखों को अंग्रेजों के साथ संघर्ष करना पड़ा और अंग्रेजों ने पंजाब को हड़प लिया। 1813 ई. में लॉर्ड हेस्टिंग्स भारत का गवर्नर जनरल बना। अनेकों युद्धों में विजय प्राप्त कर उसने भारत में ब्रिटिशों की राजनितिक सर्वश्रेष्ठता स्थापित की। मराठों का पतन हो गया। अब अंग्रेजों की नजर बर्मा पर थी, अतः आंग्ल–बर्मा युद्ध स्वाभाविक हो गया। लॉर्ड लिटन ने अफगानिस्तान के प्रति आक्रामक नीति अपनाई कालांतर में अफगानों को अंग्रेजों के साथ समझौता करना पड़ा। लॉर्ड डलहौजी (1848–1856 ई.) का शासन उसकी हड़पनीति के लिए जाना जाता है। डलहौजी की नीति से तंग आकर अनेक राज्यों ने 1857 ई के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में हिस्सा लिया। झांसी का नेतृत्व महारानी लक्ष्मीबाई ने किया। रानी अवंतिबाई, झलकारी बाई ने भी इस संग्राम के लिए प्राणों का बलिदान दिया।

टिप्पणी

3.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढने के बाद आप निम्न सभी घटनाओं का विस्तृत रुप से अध्ययन कर सकते है–

- महाराजा रणजीत सिंह और आंग्ल–सिख सम्बन्ध।
- लॉर्ड हेस्टिंग्स और ब्रिटिश सार्वभौम शासन की स्थापना।
- डलहौजी का व्यपगत सिद्धांत उसका प्रशासन एवं सुधार।
- 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका।
- प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857 ई. आदि।

3.2 महाराजा रणजीत सिंह और आंग्ल–सिख सम्बन्ध (Maharaja Ranjeet Singh and Anglo-Sikh Relations)

गुरुनानक देव ने सिख धर्म की स्थापना की। सिखों को सैन्य रूप देने में सिखों के दसवें और अन्तिम गुरु गोबिन्द सिंह का योगदान था। पानीपत के तृतीय युद्ध के बाद अहमद शाह अब्दाली अफ़गानिस्तान लौट गया। सिखों ने पंजाब पर अधिकार स्थापित कर लिया। उस समय सिख 12 'मिस्ल' में विभाजित थे। इनके अलग झण्डे, नाम तथा निशान थे।

चित्र क्र. 3.1: महाराजा रणजीत सिंह
https://www.dailyexcelsior.com/maharaja-ranjit-singh-greatest-leader-in-world-history/

टिप्पणी

रणजीतसिंह का जन्म 2 नवम्बर 1780 ई. सूकरचकिया मिस्ल में हुआ। उनके पिता सरदार महासिंह की मृत्यु के पश्चात् 12 वर्ष की अल्पायु में 1792 में रणजीत सिंह मिस्ल के सरदार बने। उनके संरक्षक के तौर पर राज्य के संचालन की जिम्मेदारी उनकी माँ राजकौर ने निभाई। रणजीत सिंह घुड़सवारी एवं शस्त्र विद्या में बाल्यकाल से ही निपुण थे। अपने पिता से उन्हें विरासत में नेतृत्व एवं प्रशासन की क्षमता भी मिली थी।

पंजाब में विभिन्न राज्यों में विभिन्न मिस्लों का प्रभुत्व था। मुल्तान, लाहौर और अमृतसर में भंगी मिस्ल, अमृतसर में कनहिया मिस्ल, पटियाला में फुल्कियाँ मिस्ल। 1798 ई. में अफ़गानिस्तान के शासक जमानशाह ने लाहौर पर अधिकार किया। परन्तु अफगानिस्तान में हुई अचानक उथल–पुथल के कारण उसे वापस लौटना पड़ा। झेलम नदी में उसकी तोप फंस गई। इससे वह संकट में आ गया। रणजीत सिंह ने उन तोपों को निकलवाकर जमानशाह तक पहुँचवा दिया। इससे प्रसन्न होकर जमानशाह ने उसे लाहौर भेंट किया। लाहौर पर अधिकार होने से उसकी शक्ति एवं प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई। उसने राजा की उपाधि धारण कर ली। लाहौर को अपना केन्द्र बनाकर उसने अन्य मिस्लों पर अपना आधिपत्य स्थापित किया एवं पंजाब को एकता के सूत्र में बाँधा। 1805 ई. में उसने अमृतसर जीता। पटियाला, जिन्द, नाभा पर फुल्कियाँ मिस्ल का अधिकार था। यह राज्य शक्तिशाली था किन्तु विलासिता के प्रभाव में राजनीतिक अस्थिरता व्याप्त होने लगी थी। नाभा और जिन्द के राजाओं ने उसे आमंत्रित किया। वह 20 हज़ार सैनिकों के साथ पहुँचा। पटियाला, नाभा तथा जिन्द ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली।

3.2.1 रणजीत सिंह और अंग्रेजों के बीच सम्बन्ध (Relations between Ranjeet Singh and Britisher)

1. अंग्रेजों द्वारा अफगानों का आक्रमण एवं सम्पर्क– रणजीत सिंह द्वारा 1799 ई. में लाहौर पर अधिकार कर लिया था। उन्हीं दिनों अफ़गानिस्तान का शासक जमानशाह भारत पर आक्रमण की योजना बना रहा। अंग्रेजों को भय था कि रणजीत सिंह उसके पक्ष में न हो जाए। तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड वेलेजली (1798–1805 ई.) ने रणजीत सिंह के दरबार में (1800 ई.) बहुमूल्य भेट के साथ दूत मुंशी यूसुफ अली को भेजा। दूत के द्वारा निवेदन भेजा गया कि जमानशाह द्वारा आक्रमण होने की स्थिति में रणजीत उसे सहायता न दे। यद्यपि जमानशाह के आक्रमण का खतरा टल गया। किन्तु इस प्रस्ताव ने रणजीत सिंह की शक्ति को दर्शाया।

2. अंग्रेजों द्वारा समझौता (1805 ई.)– मराठा सरदार जसवन्त राव होल्कर अंग्रेजों से पराजित होकर रणजीत सिंह की शरण में पहुँचा। वह रणजीत सिंह के सहयोग से अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध करने की योजना बनाना चाहता था। सिख सरदारों ने परामर्श किया कि अपने सीमित साधनों से युद्ध में भाग नहीं लिया जा सकता है। 1806 ई. में ब्रिटिश सेनानायक जनरल लेक और रणजीत सिंह के बीच समझौता हुआ। समझौते में निम्नलिखित बातों की चर्चा की गई–

(i) रणजीत सिंह द्वारा होल्कर को कोई सहायता नहीं दी जाएगी। वह उसे पंजाब से जाने के लिए बाध्य करेगा।

(ii) अंग्रेजों ने सिखों के राज्य तथा उनके मामले में कभी भी हस्तक्षेप न करने का वचन दिया। साथ ही ये भी कि वे मराठों से भी पंजाब की रक्षा करेंगे।

इस मैत्री समझौते से रणजीत सिंह को सतलज के उत्तर में अपना अधिकार स्थापित करने में आसानी हुई। 1806 ई. में ही रणजीत को नाभा के राजा ने पटियाला से हो रहे विवादों को निपटाने के लिए आमंत्रण दिया। रणजीत सिंह बड़ी सेना के साथ पहुँचकर उन स्थानों के साथ लुधियाना, रायकोट और जगराँव को भी हस्तगत कर लिया।

1807 ई. में एक बार फिर उसे ऐसा ही अवसर प्राप्त हुआ जब पटियाला की रानी ओस कौर ने उसे विवाद निबटाने का निवेदन किया। इस बार रणजीत सिंह ने अम्बाला, कैथल, काल्सिया तथा अनेक स्थानों पर अधिकार प्राप्त कर लिया। सिंह की आक्रामक कार्यवाहियों से घबराकर कुछ सिख सरदार मिलकर दिल्ली स्थित अंग्रेजी रेजीडेण्ट के पास गए। लॉर्ड मिण्टों ने उन्हें आश्वासन दिया कि उन्हें सुरक्षा प्रदान की जाएगी। अंग्रेज रणजीत सिंह की सामरिक एवं साम्राज्य विजय की गतिविधियों को रोकना तो चाहते थे किन्तु वे ऐसा करने से पीछे हट रहे थे क्योंकि इस समय फ्रांसीसी सम्राट नेपोलियन पूर्व की तरफ बढ़ रहा था और अंग्रेजों को भय था कि उनसे क्रुद्ध होकर रणजीत सिंह फ्रांसीसियों का साथी न बन जाए।

3.2.2 मेटकाफ तथा रणजीत सिंह के बीच सन्धि (Treaty Between Metcalfe and Ranjeet Singh)

नेपोलियन के आक्रमण के भय से लॉर्ड मिण्टो ने रणजीत सिंह को अपने पक्ष में करने के लिए मेटकाफ को लाहौर भेजा। 1807 ई. में मेटकाफ तथा रणजीत सिंह में सन्धि हुई। सन्धि की निम्नलिखित शर्तें थीं–

(i) रणजीत सिंह और अंग्रेज मिलकर फ्रांस से अपनी रक्षा करेंगे और यदि नेपोलियन ने ब्रिटिश भारत पर आक्रमण करना चाहा, तो रणजीतसिंह उसे पंजाब से होकर नहीं जाने देगा। अंग्रेज पंजाब से होकर जा सकते हैं।

(ii) उसके राज्य से निकलने वाले संदेशवाहकों की रक्षा का दायित्व रणजीत सिंह पर होगा। बदले में रणजीतसिंह ने भी अपनी शर्ते रखी–

- अफ़गानिस्तान के अमीर से उसके झगड़े में अंग्रेज हस्तक्षेप नहीं करेंगे, न ही अमीर से मित्रता करेंगे।
- अंग्रेज उसे सिखों का राजा स्वीकार करेंगे।

मेटकाफ ने गवर्नर जनरल की आज्ञा के बिना इन शर्तों पर हस्ताक्षर करने से मना कर दिया। इस प्रकार वार्ता असफल हो गई।

रणजीत सिंह ने युद्ध अभियान प्रारंभ किया और फरीदकोट, मलेर–कोटला, अम्बाला और शाहाबाद को जीत लिया।

अंग्रेज विरोध नहीं कर सके क्योंकि अभी भी नेपोलियन का खतरा था। शीघ्र ही यह खतरा टल गया क्योंकि नेपोलियन स्पेन के विद्रोह में उलझ गया। अब फायदा उठाकर अंग्रेजों ने तुरन्त रणजीत सिंह को सन्धि के लिए बाध्य किया।

3.2.3 अमृतसर की सन्धि (1809 ई.) (Treaty of Amritsar (1809 AD))

(i) दोनों मैत्री सम्बन्ध बनाए रखेंगे।

(ii) सतलज के पार रणजीत सिंह के क्षेत्रों में अंग्रेज दखल नहीं देंगे न ही सतलज के इस पार के अंग्रेजों के क्षेत्रों में रणजीत सिंह का दखल होगा।

(iii) अंग्रेजों ने महाराजा रणजीत सिंह को स्वतंत्र शासक स्वीकार कर लिया।

सन्धि का मूल्यांकन

इस सन्धि के बारे में दो मत हैं–

(i) डॉ. एन. के. सिन्हा के अनुसार, ''यह सन्धि रणजीत सिंह की कूटनीतिक पराजय थी। सिखों को राजनीतिक सूत्र में बाँधना उसकी महत्वकांक्षा थी, जो पूरी न हो सकी।

(ii) कुछ इतिहासकारों का मानना है कि सन्धि करना उचित था क्योंकि रणजीत सिंह के साधन, सैनिक हों या आर्थिक, कम्पनी की तुलना में बहुत कम थे। ऐसे में वह कम्पनी से संघर्ष करने की योजना बनाता तो उसे हानि उठानी पड़ती जैसे अनेक बड़े राज्यों को हुई। अतः अमृतसर की सन्धि करके उसने अपने राज्य को सुरक्षित कर लिया।

3.2.4 सिंध और विलियम बैंटिक की कूटनीति (Sindh and Diplomacy of William Bentinck)

रणजीत सिंह सिंध जीतना चाहता था। अक्टूबर 1831 ई. में रोपण में एक दरबार लगाया गया जहाँ महाराजा रणजीत सिंह ने लॉर्ड विलियम बैंटिक से भेंट की और आपसी सहयोग से सिंध पर अधिकार करने का प्रस्ताव रखा। बैंटिक ने अपने उत्तर से रणजीत सिंह को धोखे में रखा कि उसकी सरकार को सिन्ध में रुचि नहीं है। वास्तविकता यह थी कि कम्पनी चार साल पहले ही अमीर से समझौता कर व्यापारिक सुविधाएँ प्राप्त कर चुकी थी। जब तक यह समाचार रणजीत सिंह तक पहुँचा, स्थिति बदल चुकी थी।

सीमाओं पर लुटेरों की समस्या

पंजाब एवं सिंध की सीमाओं के बीच लुटेरों की संख्या में वृद्धि हो रही थी। ये राज्य में लूट मार करते रहते थे। रणजीत सिंह ने अमीर से कहा कि शिकारपुर उसके हवाले कर दे। उसने अंग्रेजों से सहायता मांगी। अंग्रेजो ने रणजीत सिंह को उनके साथ की गई अमृतसर की सन्धि का हवाला देकर रोक लिया जिसके अनुसार रणजीत सिंह सतलज पर क्षेत्रों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता था। इस प्रकार अंग्रेजों ने सिंध को रणजीत सिंह से बचाया और कुछ समय बाद स्वयं उसे

टिप्पणी

हस्तगत कर लिया। अमृतसर की सन्धि के बाद यह दूसरी बार अंग्रेजों की रणजीत सिंह पर कूटनीतिक विजय थी।

अफगानिस्तान और लॉर्ड ऑकलैण्ड की कूटनीति– शाहशुजा, अफगानिस्तान के शासक ने 1814 ई. में गोरखों द्वारा अधिकार करने पर, रणजीत सिंह की शरण ली। रणजीत सिंह को उससे कोहिनुर हीरा प्राप्त हुआ। 1815 में शाहशुजा अंग्रेजों की शरण में चला गया। गवर्नर जनरल लॉर्ड ऑकलैण्ड ने रणजीत सिंह को शाहशुजा को गद्दी पर बैठाने के लिए सहयोग देने के लिए राजी कर लिया। 1838 में शाहशुजा कम्पनी तथा रणजीत सिंह के बीच त्रिपक्षीय सन्धि हो गई। इस प्रकार रणजीत सिंह की एक बार फिर कूटनीतिक पराजय हुई। यदि वह स्वयं शाहशुजा को गद्दी पर बैठाने के लिए कार्य करता तो उसे पश्चिम सीमाओं पर मित्र प्राप्त हो जाता।

मृत्यु

1839 ई. में जब अंग्रेज सेना अफगानिस्तान की ओर जाने वाली थी तो रणजीत सिंह ने उसे राज्य में होकर जाने नहीं दिया। उसे सिंध के रास्ते जाना पड़ा। इसी बीच जून 1839 में रणजीत सिंह की मृत्यु हो गई।

3.2.5 रणजीत सिंह की शासन व्यवस्था (Administration of Ranjeet Singh)

1. **केन्द्रीय शासन–** रणजीत सिंह का प्रशासन केन्द्रीकृत था। सम्राट ही सर्वोच्च होता था। सभी को उसकी आज्ञा का पालन करना अनिवार्य था। प्रशासन के विधायी, कार्यकारी और सैनिक विभाग उसकी निगरानी में थे।
2. **मंत्रिमण्डल–** प्रशासन का कार्य सुचारू रूप से संचालित करने के लिए पाँच मंत्रियों की नियुक्ति की जाती थी– प्रधानमंत्री, विदेशमंत्री, रक्षा मंत्री, वित्त मंत्री तथा सदर–ए–डयोढ़ी।
3. **विभाग–** केन्द्र में 12 विभाग थे। भू–राजस्व विभाग, आय–व्यय विभाग, कर्मचारी वेतन लेखा विभाग प्रमुख थे।
4. **प्रांतीय शासन–** राज्य में चार प्रान्त थे– कश्मीर, मुल्तान, पेशावर और लाहौर। शासन की सुविधा के लिए प्रान्तों को परगानों, परगना को तालुकों और तालुका को मौजों में बाँटा गया था। प्रान्त (सूबे) का सबसे बड़ा अधिकारी नाज़िम होता था। सूबे के कई भाग थे। एक भाग का सबसे बड़ा अधिकारी कारदार होता था। उसका स्थान नाजिम से नीचे होता था। उसके पास बड़ी शक्तियाँ होती थीं। क्षेत्र के भू–राजस्व अधिकारी, लेखाधिकारी, कोषाधिकारी, न्यायाधीश, दण्डाधिकारी की समस्त जिम्मेदारियाँ उसे सौंपी गई थीं।
5. **स्थानीय शासन–** ग्राम पंचायत इसकी सबसे महत्वपूर्ण इकाई थी। स्थानीय जनता पर इसका पूरा नियंत्रण था।

6. **राजस्व व्यवस्था–** राज्य की मुख्य आय भूमि कर था। भू–कर भूमि की उर्वरता पर आधारित थी। उसके अनुसार 1/2 से लेकर 1/4 तक होता जो वर्ष में दो बार फसल कटने के बाद लिया जाता था। कारदार मुख्य अधिकारी होता था। उसका सहयोग करने के लिए मुकद्दम, चौधरी, पटवारी, कानूनगो आदि होते थे।
7. **आय के साधन–** भूमि कर आय का मुख्य साधन था। इसके अतिरिक्त सीमा शुल्क, व्यवसायिक कर से जो जुलाहों, लुहारों, चर्मकारों और व्यापारियों से वसूल किया जाता था वह भी आय के स्रोत थे।
8. **न्याय एवं दण्ड व्यवस्था–** दण्ड कठोर नहीं होते थे। मृत्यु दण्ड का प्रावधान नहीं था। जुर्माना लगाना ही सामान्य प्रचलन में था। कानून समाज की प्रथाओं पर आधारित था। लिखित कानून नहीं था। अंतिम निर्णय राजा का होता था। प्रान्तों में अपराधों पर निर्णय का अधिकार नाजिम को होता था। वह कारदारों के विरुद्ध अपील सुन सकता था। हर प्रान्त में कारदार होते थे। नाज़िम के विरुद्ध अपील लाहौर स्थित अदालत–ए–आला में की जा सकती थी। इन सबसे ऊपर राजा का स्थान था। ग्रामीण न्यायालय ग्राम पंचायत थी। नगरीय न्यायालय अमृतसर एवं पेशावर में स्थित थे।
9. **सैन्य व्यवस्था–** सैनिक संगठन तीन भागों में किया गया था।
   (i) फौज–ए–आम– पैदल, आश्वारोही और तोपखाना मिलाकर इसकी संख्या 34,000 थीं।
   (ii) फौज–ए–ख़ास– इसका प्रशिक्षण फ्रांसीसियों द्वारा किया जाता था। इसकी संख्या 6,000 थी।
   (iii) फौज–ए–कवायद–जागीरदारी प्रथा प्रचलित थी। यह सेना जागीरदारों के पास रखी जाती थी।

सेना का वेतन नकद दिया जाता था। रणजीत सिंह ने सेना के प्रशिक्षण पर भरपूर ध्यान दिया। प्रशिक्षण का कार्य फ्रांसीसी सेनानायक को सौंपा गया किन्तु सेना का नियंत्रण उसने अपने ही हाथों में रखा। जैसे ही एक बटालियन अपना प्रशिक्षण पूर्ण कर लेती, उन्हें राज्य के सेनानायकों के पास कार्य के लिए भेज दिया जाता था।

रणजीत सिंह का मूल्यांकन

रणजीत सिंह न केवल कुशल सेनानायक थे बल्कि एक योग्य प्रशासक भी थे। इतिहास में उनका उच्च स्थान है। केवल 19 वर्ष की उम्र से ही उन्होंने अनेक विजय अभियानों को पूर्ण किया। बचपन में चेचक की वजह से उनकी एक आँख खराब हो चुकी थी, फिर भी अपने साहस एवं बाहुबल से उसने पंजाब, कश्मीर और पेशावर पर विजय प्राप्त की। प्रशासक के रूप में इतिहासकार बर्न ने उसकी प्रशंसा की है, ''अपने राज्य के संगठित क्षेत्र में उसने वे सुधार किये जो ऊँचे दिमागों से निकलते हैं, और हम यहाँ देखते हैं कि उदार निरंकुशता, क्रूरताहीन,

निरंकुशतंत्र और ऐसा शासनतंत्र सामने आया जो पूर्व में दुर्लभ था और यूरोप के निकट भी नहीं था।''

टिप्पणी

वह एक प्रतिभाशाली कूटनीतिज्ञ था। उसने अफगानों, फ्रांसीसियों एवं अंग्रेजों के साथ समय एवं परिस्थितियों के अनुकूल उपाय किए। अपने जीवनकाल तक उसने अंग्रेजों को सतलज पार रोके रखा किन्तु अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति के कारण उसकी मृत्यु उपरांत सिखों को अंग्रेजों के साथ संघर्ष करना पड़ा और अंग्रेजों ने पंजाब को हड़प लिया।

3.2.6 प्रथम सिख युद्ध (1845–1846 ई.) (First Sikh War (1845-1846 AD))

1. रणजीत सिंह की मृत्यु एवं दरबार में परिवर्तन– 1839 ई. में रणजीत सिंह की मृत्यु हो गई। इसका प्रभाव लाहौर दरबार पर पड़ा। दरबार में गुटबंदी एवं षड़यन्त्र प्रारंभ हो गए, हत्याएँ आम बात हो गई। प्रशासन व्यवस्था पर किसी का ध्यान नहीं था। अंग्रेजों के लिए यह परिस्थिति लाभदायी थी क्योंकि वह पहले से ही पंजाब को अपने साम्राज्य में मिलाने को तत्पर थे। शीघ्र ही उन्होंने दरबारी कुचक्रों में स्वयं को सम्मिलित कर लिया और युद्ध की स्थिति निर्मित की।

चित्र क्र. 3.2: प्रथम सिख युद्ध

https://satyodaya.com/ सत्योदय-विशेष/ first-anglo-sikh-war-started-on-11-december/

2. योग्य शासक का अभाव– रणजीत सिंह की मृत्यु के बाद उसका बेटा खड़गसिंह गद्दी पर बैठा किन्तु एक वर्ष बाद ही 1840 ई. में उसकी मृत्यु हो गई। दूसरे दिन उसका पुत्र नौनिहाल सिंह भी किले के फाटक से गिर जाने से मर गया। उसके बाद रणजीत सिंह का तीसरा पुत्र शेरसिंह गद्दी पर बैठा। 1843 ई. में उसे भी मार दिया गया। कुछ समय के लिए सेना ने सत्ता संभाली और रणजीत सिंह के छोटे पुत्र दिलीप सिंह को सिंहासन पर बैठाया। रणजीत सिंह की विधवा

रानी झिन्दन कौर को संरक्षक बनाया गया और उसके भाई जवाहर सिंह को वज़ीर का पद दिया गया। जवाहरसिंह सत्ता प्राप्त करना चाहता था, वह अंग्रेजों से मिल गया। सेना को जब यह खबर मिली तो जवाहर सिंह को मृत्यु दण्ड दे दिया गया और उसके स्थान पर लालसिंह को वजीर बनाया गया। सेना का इतना शक्तिशाली होना झिन्दन और लालसिंह के लिए भी खतरा था, अतः वे अंग्रेजों से मिल गए।

3. लॉर्ड हार्डिंग की कूटनीति– 1844 ई. में लॉर्ड हार्डिंग भारत का गवर्नर जनरल बना। इसी समय शेरसिंह की हत्या कर दी गई थी और दरबार अस्त–व्यस्त था। हार्डिंग इस स्थिति का लाभ उठाकर पंजाब को हड़पना चाहता था। उसने युद्ध की तैयारी प्रारंभ कर दी। सतलज के पूर्व में स्थित चार चौकियों, फीरोजपुर, लुधियाना, अम्बाला तथा मेरठ में हजारों की संख्या में सैनिक एकत्र किए गये। सतलज पार करने के लिए पुल बनाया गया। सिख अंग्रेजों की तैयारी देखकर उत्तेजित हो उठे।

रानी झिन्दन और लाल सिंह सेना की बढ़ती हुई शक्ति से डर गए थे। उन्होंने अंग्रेजों से मिलकर सेना से मुक्ति प्राप्त करने की योजना को कार्यान्वित करने के लिए सेना को अंग्रेजों के विरुद्ध उकसाया। उनका मानना था कि यदि सेना हारी तो वह दरबार में हस्तक्षेप करना छोड़ देगी और अगर जीती तो श्रेय दरबार को ही मिलेगा।

3.2.7 युद्ध की घटनाएँ (Events of the War)

1. मुदकी का युद्ध– अंग्रेजों की कार्यवाही देखते हुए सिख सेना ने 11 दिसम्बर 1845 ई. को सतलज पार की। लॉर्ड हॉर्डिंग के लिए यह युद्ध जीतना आसान था। एक तो वह पहले ही युद्ध के लिए तैयार था और दूसरा सिख सेना का नेतृत्व लाल सिंह के हाथों में था जो अंग्रेजों से मिला हुआ था। लाल सिंह अंग्रेजों को हरा सकता था किन्तु अंग्रेजों के निर्देशानुसार उसने तब तक सिख सेना को रोके रखा जब तक अंग्रेजी सेना एकत्रित नहीं हुई। पहला युद्ध मुदकी नामक स्थान पर लड़ा गया। लालसिंह योजनानुसार मैदान छोड़ चुका था। सैनिक बिना नेतृत्व के युद्ध करते रहे किन्तु पराजित हुए।

2. फीरोजपुर का युद्ध– 21 दिसम्बर को फिरोज़पुर में युद्ध हुआ। यहाँ भी लालसिंह ने पुनः वैसा ही व्यवहार किया जैसा मुदकी के युद्ध में किया था। सिख सेना के 8,000 सैनिक मारे गये।

3. आलीवाल का युद्ध– फीरोजपुर के युद्ध के बाद एक महीने तक युद्ध की संभावना नज़र नहीं आई क्योंकि अंग्रेज थक गए थे और सिख सेना का नेतृत्व करने वाला कोई नहीं था। जनवरी 1846 में सिखों ने रंजूरसिंह मजीठिया को अपना नेता चुन लिया। उसने सतलज पार कर जनरल स्मिथ को हराया किन्तु शीघ्र ही अंग्रेज की सेना की एक और टुकड़ी आ पहुँची और आलीवाल में रंजूरसिंह को हरा कर भगा दिया। सेना तितर–बितर हो गई।

4. सुबरॉव का युद्ध– 1846 ई. में सरदार गुलाब सिंह ने लाहौर दरबार में अपना प्रभाव स्थापित कर लिया। उसने अंग्रेजों से सन्धि कर ली। सन्धि के

अनुसार उसने खालसा को नष्ट करने की अनुमति अंग्रेजों को दे दी। साथ ही सतलज पार करने एवं राजधानी जाने के लिए मार्ग की सुविधा भी दी। लालसिंह ने युद्ध की सारी योजना अंग्रेजों को बता दी। सिख सैनिकों ने पराक्रम से युद्ध किया किन्तु सरदारों के विश्वासघात के सामने उनका बलिदान व्यर्थ हो गया। कनिंघम के अनुसार, ''अंग्रेजों की विवेकपूर्ण नीति और गुलाबसिंह के निर्लज्जतापूर्ण राजद्रोह की परिस्थिति के मध्य 10 फरवरी 1846 ई. को सुबराँव का युद्ध लड़ा गया था।''

लाहौर की सन्धि

लॉर्ड हार्डिंग ने सिखों पर विजय प्राप्त कर ली थी किन्तु वह इस समय पूरे पंजाब पर अधिकार नहीं करना चाहता था। इसके निम्नलिखित स्पष्टीकरण थे–

(i) उसने जिन राज्यद्रोहियों के साथ मिलकर विजय प्राप्त की थी, वे विरोध करने लगते।

(ii) इस समय कम्पनी की सेना उतनी बड़ी नहीं थी जितनी की इस कार्य के लिए आवश्यक थी।

(iii) पूरा पंजाब आर्थिक दृष्टि से लाभदायी नहीं था।

(iv) वह अफगानिस्तान एवं कम्पनी के बीच एक हिन्दू राज्य को फँसाना चाहता था।

(v) सिखों से उसे कोई भय नहीं था क्योंकि एक भी योग्य शासक/सरदार नहीं था जो भविष्य में उसके लिये खतरा बन सके।

9 मार्च 1846 ई. को हुई लाहौर की सन्धि की मुख्य धाराएँ थी–

1. सिखों ने सतलज नदी के दक्षिण में स्थित सारे प्रदेश एवं जालन्धर कम्पनी को दे दिया।
2. लाहौर दरबार ने कम्पनी को डेढ़ करोड़ रुपये क्षतिपूर्ति देना स्वीकार किया। 50 लाख रुपये नकद दिया गया और शेष एक करोड़ के लिए कश्मीर एवं हजारा दे दिए गए।
3. सिख सेना की संख्या घटा दी गई।
4. दिलीप सिंह को शासक, रानी झिन्दन को उसकी संरक्षिका और लालसिंह को वजीर रहने दिया गया।
5. लाहौर में ब्रिटिश रेजीडेण्ट रहेगा।

गुलाब सिंह के साथ अमृतसर की सन्धि

गुलाब सिंह ने लॉर्ड हार्डिंग को विजय प्राप्त करने में सहयोग दिया इसलिए उसे पुरस्कृत करने के लिए उसके साथ अमृतसर की सन्धि हुई। इस सन्धि के अनुसार–

1. उसे कश्मीर दे कर उसका शासक घोषित किया गया। इसके बदले गुलाबसिंह ने एक करोड़ की बड़ी धनराशि दी।

टिप्पणी

2. विवादों की स्थिति में अंग्रेज मध्यस्थता करेंगे।
3. वह अंग्रेजों की सैनिक सहायता देगा।
4. बिना अनुमति अन्य यूरोपीय शक्ति से कोई सम्बन्ध नहीं रखेगा।

लॉर्ड हार्डिंग द्वारा की गई यह सन्धि इतिहास की आलोचनात्मक सन्धियों में से एक है क्योंकि–

1. गुलाब सिंह महाराजा दिलीप सिंह का सामन्त था। उसे स्वतंत्र शासक घोषित करना धूर्ततापूर्ण था।
2. जो राशि गुलाबसिंह ने कम्पनी को दी, उसे महाराजा दिलीप सिंह को देनी चाहिए थी ताकि राज्य युद्ध हर्जाना चुका सके।
3. यह राशि गुलाबसिंह ने कश्मीर प्रान्त से कम्पनी को दी जो महाराजा दिलीप सिंह का था।

भैंरोवाल की सन्धि

लाहौर की सन्धि के अनुसार तय किया गया कि कम्पनी की सेना दिसम्बर 1846 ई. तक पंजाब में रहेगी। जैसे ही सेना वापस बुलाने का समय आया लॉर्ड हार्डिंग ने कुचक्र आरंभ कर दिये। उसने गुलाब सिंह के विरोध करने वाले सरदारों के विरुद्ध सेना भेज कर गुलाब सिंह की सहायता करने का दिखावा किया। रानी झिन्दन और लाल सिंह पर विद्रोहियों का साथ देने का आरोप लगा कर उनसे उनके पदों से निष्कासित कर दिया गया। लाहौर दरबार पर सन्धि की शर्तें थोप दी गई–

(i) लाहौर में ब्रिटिश सेना सितम्बर 1854 तक रहेगी।
(ii) सेना का खर्च 22 लाख रुपये वार्षिक लाहौर दरबार देगा।
(iii) दिलीप सिंह के वयस्क होने तक ब्रिटिश रेसीडेण्ट उसके बदले शासन करेगा।
(iv) रेजीडेण्ट की सहायता के लिए आठ सरदार नियुक्त किए गए उनकी नियुक्ति या पद से हटाने का अधिकार अंग्रेजों को होगा।

इस प्रकार पंजाब पर अंग्रेजों की वास्तविक सत्ता स्थापित हो गई।

3.2.8 द्वितीय सिख युद्ध (1848–1849 ई.) (Second Sikh War (1848-1849 AD))

1848 ई. में लॉर्ड डलहौजी भारत का गवर्नर जनरल बनकर आया। उसके शासनकाल में कम्पनी का साम्राज्य–विस्तार तेजी से हुआ। पंजाब भी उसकी विस्तारवादी नीति का शिकार हुआ। और उसने द्वितीय सिख युद्ध के बाद शेष पंजाब भी कम्पनी में मिला लिया।

1. **अंग्रेजों का व्यवहार**– अंग्रेजों ने प्रथम सिख युद्ध में सरदारों को अपने षड़यंत्र के लिए उपयोग किया किन्तु उन्हें इसके बदले उचित पुरस्कार नहीं

दिए थे। वे गुलाब सिंह को कश्मीर दिये जाने से भी क्रोधित थे। रानी झिन्दन पर देशद्रोह का आरोप लगाकर उसे चुनार भेज दिया गया था। उसकी पेन्शन मात्र 12 हजार थी। उसके हीरे–जवाहरात भी छीन लिए गए थे। इस सबको सिखों ने अपने राजवंश का अपमान समझा।

2. **अंग्रेजों की पंजाब में मनमानी**– प्रशासन के बहाने अंग्रेजों ने समस्त उच्च पदों पर अंग्रेजों की नियुक्ति प्रारंभ कर दी थी। अंग्रेज रेजीडेण्ट को प्रशासन का अधिकार था अतः वह मनमाने निर्णय करने लगा।

3. **मुल्तान की समस्या में अंग्रेजों का हस्तक्षेप**– 1844 ई. में मुल्तान के सूबेदार की मृत्यु हो गई। नया सूबेदार उसका पुत्र मूलराज बना। लाहौर दरबार खानसिंह को सूबेदार बनाना चाहती थी। उन्होंने अंग्रेजों का सहयोग लिया। मुल्तान की जनता ने अंग्रेजों को देखकर मूलराज के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया जिसमें कुछ अंग्रेज सैनिक मारे गये। लॉर्ड डलहौजी विद्रोह को पूरे पंजाब में फैलने तक रुका रहा।

युद्ध की घटनाएँ

1848 ई. में ब्रिटिश सेना की एक टुकड़ी मूलराज को परास्त करने के लिए निकली। इस युद्ध में अंग्रेजों को इतनी हानि हुई जितनी किसी भारतीय युद्ध में नहीं हुई। अटक के सिख सरदार शेर सिंह भी मूलराज की सहायता के लिए आ पहुँचा। अन्ततः 1849 में मूलराज को बंदी बना कर उसे निर्वासन कर दिया गया। मुल्तान पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। इस हानि की खबर ब्रिटिश बर्दाश्त नहीं कर पाए और उन्होंने चार्ल्स नेपियर के नेतृत्व में एक सेना भारत भेजी। सिखों ने एक बार 1849 ई. में अंग्रेजों का मुकाबला किया किन्तु पराजित हुए। शेरसिंह एवं सभी सिख सरदारों को हथियार डालना पड़ा।

परिणाम

30 मार्च 1849 ई. को लॉर्ड डलहौजी ने पंजाब को कम्पनी के राज्य में मिलाने की घोषणा कर दी। महाराजा दिलीप सिंह को अपदस्थ कर दिया गया। कोहिनूर हीरा उससे छीन लिया गया और इंग्लैण्ड भेज दिया गया। जहाँ वह सम्राट के मुकुट पर सुशोभित हो गया। पंजाब को हड़पने से कम्पनी को समृद्ध प्रान्त एवं बहादुर सैनिकों की प्राप्ति हुई। इस प्रकार भैंरोवाल की सन्धि जिसके अनुसार दिलीप सिंह के वयस्क हो जाने तक अंग्रेज रेजीडेण्ट प्रशासक रहेंगे को पूरी तरह झुठला कर अंग्रेजों ने उसके वयस्क होने तक पूरा पंजाब हड़प लिया। उसे केवल पेंशन दे दी गई।

3.3 लॉर्ड हेस्टिंग्स और ब्रिटिश सार्वभौम शासन की स्थापना (Lord Hastings and British Paramountcy)

लॉर्ड हेस्टिंग्स (1813 ई.–1823 ई.)– 1813 ई. में लॉर्ड मिण्टो के बाद भारत का गवर्नर जनरल बन कर आया। अनेकों युद्धों में विजय प्राप्त कर उसने भारत में अपनी राजनीतिक सर्वश्रेष्ठता का प्रदर्शन किया। हेस्टिंग्स ने एक प्रशासक के रूप में भूमि, न्याय तथा शिक्षा के क्षेत्रों में सुधार कर ब्रिटिश साम्राज्य की नींव रखी।

3.3.1 आंग्ल–नेपाल युद्ध (1814–1816 ई.) (Anglo-Nepal War (1814-1816 AD))

1768 ई. में गोरखों ने नेपाल पर अधिकार कर उसे एक शक्तिशाली राज्य में परिवर्तित कर दिया था। राज्य विस्तार की लालसा से उत्तर की तरफ बढ़ना चाहते थे किन्तु चीनियों के आगे वह असफल रहे। तभी उनका ध्यान दक्षिण (भारत) की तरफ गया जहाँ बंगाल तथा अवध की अनिश्चित सीमाएँ थीं। कम्पनी और नेपाल की सीमाएँ मिलती थीं क्योंकि अंग्रेजों ने 1801 ई. में गोरखपुर पर अधिकार कर लिया था। नेपालियों के विरुद्ध हेस्टिंग्स ने युद्ध की घोषणा 1814 ई. में की जब उन्होंने अंग्रेजों की तीन पुलिस चौकियों पर आक्रमण कर दिया। हेस्टिंग्स ने स्वयं युद्ध का नेतृत्व किया अंग्रेजों के 34,000 सैनिक थे जबकि गोरखा सैनिकों की संख्या 12,000 थी। कुछ प्रारंभिक विजयों के बाद गोरखा सैनिक हार गए और शांति वार्ता की अपील की। अंग्रेंजों की कठिन मांगों पर यह वार्ता का कोई नतीजा नहीं निकल पाया।

1816 ई. में युद्ध पुनः आरंभ हो गया और गोरखों को पराजय का मुँह देखना पड़ा। अंग्रेज भी उनकी शक्ति से परिचित हो गए थे। अतः दोनों पक्षों के बीच सन्धि हो गई।

संगौली की सन्धि (1816 ई.)

1. कम्पनी को गढ़वाल तथा कुमाऊँ जिले प्राप्त हुए।
2. काठमाण्डू में ब्रिटिश रेजीडेण्ट रख दिया गया।
3. अंग्रेजों को शिमला, मसूरी, रानीखेत तथा नैनीताल जैसे स्वास्थ्य के लिए उत्तम क्षेत्र प्राप्त हुए।
4. गोरखों से सिक्किम को बंधी करवा लिया गया तथा उसके राजा से पृथक सन्धि कर ली गई।

इस सन्धि का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि कम्पनी और नेपाल की सीमाएँ निश्चित हो गयी और साहसी तथा विश्वसनीय गोरखों की भर्ती अंग्रेजी सेना में होना था।

3.3.2 लॉर्ड हेस्टिंग्स के समक्ष समस्याएँ (Problems Faced by Lord Hastings)

लॉर्ड हेस्टिंग्स की प्रमुख समस्या मराठा परिसंघ और उनकी आपसी फूट थी। इस फूट के कारण वे हमेशा युद्ध में संलग्न रहते थे। युद्ध के लिए उन्होंने पिण्डारियों को सहायक सैनिकों के रूप में रख लिया था। हेस्टिंग्स के समक्ष मराठों के साथ पिण्डारियों का भी दमन करने का कठिन कार्य था।

लॉर्ड हेस्टिंग्स की योजना

लॉर्ड हेस्टिंग्स ने राजनीतिक सर्वोच्चता स्थापित करने के लिए विभिन्न योजनाएँ बनाई–

(i) सर्वप्रथम पिण्डारियों का दमन और सुरक्षा की स्थापना।

(ii) सिंधिया, भोंसले तथा होल्कर को कम्पनी के अधीन करना।

(iii) राजपूत रियासतों को अंग्रेजी साम्राज्य में मिलाना।

3.3.3 लॉर्ड हेस्टिंग्स के कार्य (Works of Lord Hastings)

1. पिंडारियों का दमन

पिण्डारी मराठों की ओर से लड़ते थे और लूट में अपना भाग लेते थे। ये किसी भी प्रकार का वेतन नहीं लेते थे। मराठा सरदार जैसे सिंधिया, होल्कर, पेशवा और साथ ही निज़ाम भी इनमें सैनिक सहयोग लेने लगे। इनके नाम से ही ये सिंधियाशाही, निजामशाही और होल्करशाही कहलाने लगे। सिंधिया ने इन्हें नर्मदा घाटी में जागीरे दी और मल्हार राव होल्कर ने इन्हें सुनहरा ध्वज रखने का अधिकार दिया।

पिण्डारी कौन थे? इस शब्द की उत्पत्ति के बारे में कोई निश्चित व्याख्या नहीं है। सम्भवतः मराठी पिण्ड शब्द एक प्रकार की शराब को कहा गया है जो ये लोग पीते थे। इनके दल में हिन्दू तथा मुसलमान दोनों धर्म के लोग सम्मिलित थे। ये गुप्त रूप से कार्य करते थे। लूट के पश्चात् ये आंखों से ओझल हो जाते थे। इनके प्रमुख नेता चीतू, वासिल मुहम्मद तथा करीम खाँ थे। 18वीं शताब्दी तक मराठों की दुर्बलता के कारण इन्होंने उनके क्षेत्रों को भी लूटना प्रारंभ कर दिया था।

1813 ई. तक पिण्डारियों को चम्बल तक खदेड़ दिया गया। उनके दलों को तोड़ दिया गया। करीमखाँ ने आत्म–समर्पण कर दिया। वासिल मुहम्मद को सिंधिया ने अंग्रेजों को सौंप दिया। उसने आत्महत्या कर ली। चीतू जंगल में भाग गया जहाँ जंगली जानवरों ने उसका शिकार कर लिया। 1824 ई. तक पिण्डारियों का नामो निशान मिट गया।

2. सिंधिया, भोंसले, होल्कर को कम्पनी के अधीन लाना– कम्पनी को सर्वश्रेष्ठ शक्ति के रूप में स्थापित करने के लिए मराठों का दमन आवश्यक था।

(i) नागपुर की सन्धि

भोंसले के साथ (1816 ई.) बरार का शासक भोंसले के निर्बल होने के कारण हेस्टिंग्स के लिए दमन का कार्य आसान हो गया। 1816 ई. में रघोजी भोंसले के निधन के बाद उनके अस्वस्थ पुत्र को गद्दी पर बैठना था। अप्पा साहब उसका संरक्षक बनना चाहता था। उन्होंने अंग्रेजों से सहायता ली। हेस्टिंग्स को हस्तक्षेप का अवसर प्राप्त हो गया। 1816 ई. में उसने नागपुर की सन्धि द्वारा भोंसले की स्वतंत्रता का अन्त कर दिया।

(i) नागपुर में एक सहायक सेना रख दी गई। इस पर व्यय साढ़े सात लाख रुपया वार्षिक तय किया गया।

(ii) विदेशी मामले कम्पनी ने अपने हाथों में ले लिए। इस प्रकार नागपुर कम्पनी के अधीन हो गया।

(ii) बसीन की नयी सन्धि पेशवा के साथ (1817 ई.)

1817 ई. में पेशवा बाजीराव द्वितीय ने पूर्णतया समर्पण कर दिया और एक नई सन्धि पर हस्ताक्षर कर लिए क्योंकि हेस्टिंग्स युद्ध के लिए तैयार था।

1. मराठा संघ का अंत हो गया।
2. पेशवा अंग्रेजों की अनुमति से ही किसी अन्य शक्ति से सम्बन्ध रखेगा।
3. पेशवा ने अहमदनगर के दुर्ग, बुन्देलखण्ड, मालवा और शेष भारत के अधिकार कम्पनी को दे दिए।
4. कम्पनी सहायक सेना पूना में रख सकती है।

(iii) सिंधिया के साथ सन्धि (1817 ई.)

लॉर्ड हेस्टिंग्स ने युद्ध की धमकी देकर सिंधिया को अत्यन्त अपमानजनक सन्धि स्वीकार करने के लिए बाध्य किया–

(i) पिण्डारियों के दमन के लिए पाँच हजार सैनिक देने पड़े।

(ii) सिंधिया अपनी सेना को सीमित रखेंगे।

(iii) पिण्डारियों के दमन के लिए जिन दुर्गों की जरूरत होगी वहाँ अंग्रेज सैनिक रहेंगे।

3. मराठा सरदारों का पतन– इस प्रकार की सन्धियों से मराठे सरदार स्वयं को अपमानित महसूस कर रहे थे। उन्होंने पेशवा के नेतृत्व में अंग्रेजों से युद्ध करने की योजना बनाई किन्तु अंग्रेजों ने उनकी योजना पर पानी फेर दिया।

हेस्टिंग्स ने बाजीराव को गद्दी से उतार दिया। उसे 18 लाख रुपया वार्षिक पेन्शन देकर कानपुर में बिठूर भेज दिया गया।

होल्कर के साथ (1818 ई.) में मंदसौर की सन्धि की गई। उसने नर्मदा नदी के पार के समस्त क्षेत्रों को कम्पनी को सौंप दिया। उसने सहायक सेना रखना

तथा विदेशी मामले कम्पनी के हाथों में देने की शर्तों को स्वीकार कर लिया। उनकी राजधानी इन्दौर कर दी गई।

भोंसले के सारे प्रदेश छीन लिए गए। अल्पवयस्क रघुजी भोंसले द्वितीय को गद्दी पर बिठाकर एक ब्रिटिश रेज़ीडेण्ट को उसका संरक्षक बना दिया गया। जिला प्रशासन, टकसाल, वित विभाग भी अंग्रेजी नियंत्रण में आ गए।

सिंधिया पर पुनः 1818 ई. में नई सन्धि के लिए दबाव डाला गया। उसने अंग्रेजों की श्रेष्ठता स्वीकार कर ली और अजमेर तथा राजस्थान से अपना प्रभाव समाप्त कर दिया। इस प्रकार हेस्टिंग्स ने मराठा शक्ति का अन्त कर ब्रिटिश सर्वोच्चता की स्थापना की।

3.4 मराठों के पतन के कारण (Causes of Downfall of Marathas)

मराठा साम्राज्य की स्थापना छत्रपति शिवाजी महाराज ने की। पेशवा बाजीराव के शासनकाल में इस शक्तिशाली साम्राज्य का विस्तार हो चुका था। मुगल सम्राटों ने भी इनसे संरक्षण प्राप्त किया। पानीपत के तृतीय युद्ध के बाद मराठों का पतन होना प्रारंभ हुआ। अंग्रेजों के समक्ष यह साम्राज्य नहीं टिक सका और इसका अन्त कर उन्होंने अपना प्रभाव स्थापित कर लिया। मराठा साम्राज्य के पतन के निम्नलिखित कारण थे–

1. **कमज़ोर संगठन**– मराठा साम्राज्य अत्यंत विशाल था किन्तु संगठित नहीं। यह एक ढीला–ढाला संघ था। मराठा सरदार सिंधिया, गायकवाड़, भोंसले, होल्कर स्वतंत्र इकाई थे। ये सभी बाहर से देखने में शक्तिशाली संघ थे किन्तु वास्तव में उन्हें जितना संगठित होना था अपने स्वार्थ की वजह से नहीं थे। वे स्वतंत्र रूप से ही साम्राज्य विस्तार, युद्ध एवं सन्धियाँ करते ये। अंग्रेजों ने मराठा सरदारों की आपसी प्रतिस्पर्धा का फायदा उठाया और उन्हें एक दूसरे के विरुद्ध उपयोग किया।

2. **केन्द्रीय शक्ति की निर्बलता**– मराठा परिसंघ का प्रमुख शासक पेशवा होता था किन्तु उसका मराठा सरदारों पर कोई नियंत्रण नहीं था। वह नाम मात्र का प्रमुख रह गया था। साम्राज्य की न एक केन्द्रीय शासन व्यवस्था थी और न सुसंगठित सेना। पेशवा ने स्वयं ही अंग्रेजों से संरक्षण मांग कर उन्हें हस्तक्षेप करने का अवसर दे दिया था। इस प्रकार राज्य का प्रमुख ही विदेशियों पर आश्रित था।

3. **एकता का अभाव**– मराठा सरदारों में आपसी प्रतिद्वंदिता थी। जब तक शक्तिशाली पेशवा थे तब तक वे नियंत्रण में थे किन्तु जब कमजोर पेशवा के हाथों में राज्य की बागडोर आई ये स्वतंत्र हो गए। इनके आपसी सम्बन्ध इतने खराब थे कि एक–दूसरे को नीचा दिखाने का उपाय सोचते रहते थे। मराठा परिसंघ षड़यंत्रों में तो व्यस्त रहता था, किन्तु वे अंग्रेजों की तरह कूटनीतिज्ञ नहीं थे। उनको राज्य के अनुशासन में कोई ध्यान नहीं था। जिस एकता का उपयोग वे

टिप्पणी

शत्रु के विरुद्ध कर सकते थे, उसका उपयोग वे एक दूसरे के विरुद्ध करते रहते थे। इन परिस्थितियों का फायदा उठाने में अंग्रेजों को कोई कठिनाई नहीं हुई।

4. आर्थिक दुर्बलता– कम्पनी के पास बंगाल, बिहार, उड़ीसा जैसे अनेक समृद्ध प्रदेशों से राजस्व आता था। आवश्यकता पड़ने पर ब्रिटिश सरकार भी उनकी सहायता करती थी। सहायक सन्धियों को देशी राज्यों के साथ कर अंग्रेजों ने अपनी सेना का खर्च उन पर थोप दिया था। इसके विपरीत मराठों के आय के साधन सीमित थे। धन प्राप्त करने के लिए पहले वे लूट पर निर्भर थे किन्तु साम्राज्य विस्तार के साथ ये मार्ग भी बन्द हो गया। आय का मुख्य साधन सरदेशमुखी ही रह गया। इससे प्राप्त होने वाली आय मराठों की बढ़ती आवश्यकताओं को पूर्ण करने में असमर्थ थी। मराठों ने अपने कृषि राज्य में तथा व्यापार के विकास के लिए कोई प्रयास नहीं किए जिससे आय प्राप्त हो सकती थी। महाराष्ट्र उपजाऊ क्षेत्र नहीं था और मराठों ने कोई संतोषजनक आर्थिक नीति नहीं बनाई। इस प्रकार कम्पनी की तुलना में मराठों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त दुर्बल थी।

5. सैनिक दुर्बलताएँ– मराठों की छापामार प्रणाली युद्ध मैदानों में उपयोग नहीं की जा सकती थी। मराठों की अपेक्षा कम्पनी की सेना प्रशिक्षित एवं आधुनिक हथियारों से सुसज्जित थी। केलकर के अनुसार, "मराठों की असफलता में प्रशिक्षित सेना, आधुनिक तोप और बारूद का अभाव उत्तरदायी था।'' कुछ मराठा सरदारों ने सेना को यूरोपीय प्रशिक्षण के भरोसे छोड़ दिया था। उनकी गुप्तचर व्यवस्था लचर थी। गुप्तचरों को भौगोलिक ज्ञान नहीं था। कम्पनी के गुप्तचर अपने कार्य में अत्यंत दक्ष थे।

उपर्युक्त कारणों के अलावा मराठों का पड़ोसी मित्रता का अभाव, उनका नैतिक पतन, अत्यधिक साम्राज्य विस्तार, भ्रष्टाचार, युद्धों में योग्य नेतृत्व की कमी, सामुद्रिक शक्ति का विकास न होना मराठों के पतन के लिए उत्तरदायी हैं।

3.5 आंग्ल–बर्मा सम्बन्ध (Anglo-Burmese Relations)

बर्मा की सीमाएँ कम्पनी के राज्य से तब टकराने लगी जब लॉर्ड हेस्टिंग्स (1813–23 ई.) ने नेपाल के साथ संगौली की सन्धि की और शिमला, नैनीताल, रानीखेत, अल्मोड़ा को अपने आधिपत्य में ले लिया। अब अंग्रेजों की नज़र बर्मा पर थी, तो युद्ध होना स्वाभाविक था।

3.5.1 प्रथम बर्मा युद्ध (1824–26 ई.) के कारण (Reasons of First Burmese War 1824-26 AD)

1. ब्रिटिश साम्राज्य की पूर्वी सीमाएँ अनिश्चित थी। 1823 ई. में लॉर्ड हेस्टिंग्स के जाने के बाद लॉर्ड एमहर्स्ट (1823–28 ई.) गवर्नर जनरल बनकर आया। उसने पूर्वी राज्यों को हथियाने का प्रयास किया। अतः युद्ध अनिवार्य था।

2. 1784 ई. में बर्मियों ने अपने स्वतंत्र राज्य अराकान पर आक्रमण किया। अराकान के निवासियों ने भाग कर बंगाल में शरण ली। बर्मा दरबार ने शरणार्थियों की मांग की क्योंकि उन्हें भय था कि शरणार्थियों का प्रश्न बनाकर अंग्रेज बर्मा में भी अपने साम्राज्य का विस्तार कर लेंगे। अंग्रेजों ने उन्हें लौटाने से मना कर दिया।

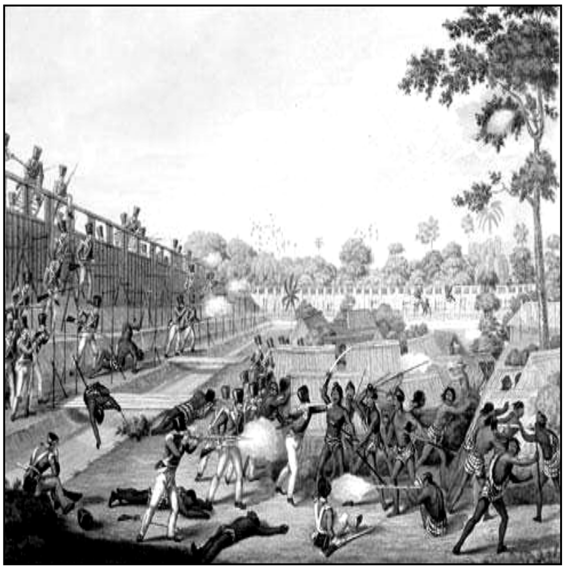

चित्र क्र. 3.3ः आंग्ल–बर्मा युद्ध
https://lostfootsteps.org/en/history/the-first-anglo-burmese-war-part-2

3. बर्मा सरकार का मानना था कि यदि वह चुप बैठी रही तो अंग्रेज सीमान्त प्रदेशों को हड़प लेंगे। अतः 1822 ई. में बर्मा के सेनापति महाबुन्देला ने असम और मणिपुर पर अधिकार कर लिया। इसके बाद बर्मियों ने चटगाँव स्थित टापू पर अंग्रेज सैनिकों को भगाकर अपना झण्डा गाड़ दिया। 24 फरवरी 1824 ई. को लॉर्ड एमहर्स्ट ने युद्ध की घोषणा कर दी।

3.5.2 युद्ध की घटनाएँ (Events of the War)

प्रथम बर्मा युद्ध दो वर्ष तक चला। महाबुंदेला चटगाँव की सीमा पर अंग्रेजों को हरा कर बंगाल की तरफ बढ़ा। मई 1824 ई. में अंग्रेजों ने रंगून पर अधिकार कर लिया। रंगून के बचाव के लिए बर्मा सरकार ने महाबुंदेला को वापस बुला लिया। 1825 ई. में लॉर्ड एमहर्स्ट ने असम भी पुनः प्राप्त कर लिया। फरवरी 1825 ई. में डोनावेन के युद्ध में सेनापति कैम्पवेल ने महाबुंदेला को परास्त किया और मार डाला। चूंकि दोनों पक्ष युद्ध से थक गए थे। अतः 14 फरवरी 1826 ई. में बर्मा तथा कम्पनी के बीच याण्डबू की सन्धि हो गई।

याण्डबू की सन्धि (1826 ई.)

1. कम्पनी को आवा के राजा ने अराकान दे दिया।
2. उसने असम, कछार एवं जयन्तिया पर अपने दावे त्याग दिये और मणिपुर की स्वतन्त्रता स्वीकार कर ली।
3. उसने कम्पनी को क्षतिपूर्ति के एक करोड़ रुपये दिये।
4. आवा दरबार में एक ब्रिटिश रेजीडेण्ट रहने लगा।
5. कम्पनी को व्यापारिक सुविधाएँ प्राप्त हुई। इस युद्ध से कम्पनी की उत्तर–पूर्वी सीमा सुरक्षित हो गयी।

3.5.3 द्वितीय बर्मा युद्ध (1825 ई.) के कारण (Reasons of Second Burmese War (1825 AD))

1. **याण्डबू की सन्धि को मान्यता न देना**– 1837 ई. में बर्मा में नवीन सत्ता की स्थापना हुई। नए राजा थर्रा ने न तो याण्डबू की सन्धि को मान्यता दी न अंग्रेज रेजीडेण्ट को। बर्मा के कानून के अनुसार उसे ऐसा करने का अधिकर था किन्तु अंग्रेजों और बर्मा का तनाव बढ़ा।
2. **व्यापारियों की कम्पनी को शिकायतें**– अंग्रेज व्यापारियों द्वारा शुल्क न देने पर बर्मी अधिकारी उनहें दण्ड देते थे। व्यापारियों ने शिकायत की। लॉर्ड डलहौज़ी ने बर्मा सरकार से क्षतिपूर्ति करने के लिए कहा। इससे भी कटुता उत्पन्न हुई।

युद्ध की घटनाएँ (Events of the War)

डलहौजी ने व्यापारियों की शिकायतों पर बिना समुचित जानकारी प्राप्त किए पत्र के साथ एक सेना भी भेज दी। साथ ही सेनापति लैम्बर्ट को आदेश दिया कि यदि आवा दरबार क्षतिपूर्ति की रकम 10 लाख रुपये अदा नहीं करती है तो युद्ध की तैयारी प्रारंभ कर दे। आवा दरबार को युद्ध का अल्टीमेटम दे दिया गया। उत्तर न मिलने पर युद्ध आरंभ हो गया। 1852 ई. में डलहौजी स्वयं पहुँच गया और रंगून, बसीन और पीगू पर अधिकार कर लिया।

परिणाम

पीगू प्राप्त होने से कम्पनी की सीमाओं का विस्तार सालवीन नदी तक हो गया। बंगाल की खाड़ी के पूर्वी तट अंग्रेजों के अधिकार में आ गए। बर्मा के पास जितनी भूमि बची थी उससे उसका स्वतंत्र रहना मुश्किल था।

3.5.4 तृतीय बर्मा युद्ध (1885 ई.) (Third War of Burmese (1885 AD))

बर्मा के पास अब छोटा सा भूमि का टुकड़ा ही बचा। उसका समुद्र से सम्पर्क टूट गया। उन्हें अंग्रेजों को व्यापारिक सुविधाएँ भी देनी पड़ी। 1857 में बर्मा की नई राजधानी मांडले बनाई गई और वहाँ एक अंग्रेज रेजीडेण्ट रख दिया गया।

1885 ई. में बर्मा सरकार ने फ्रांसीसियों से मित्रता कर के हथियार प्राप्त किये और माण्डले में एक दूत भी रख लिया। अंग्रेज इन गतिविधियों से शंकित हो गए और युद्ध के लिए तत्पर हो गए।

लॉर्ड डफरिन (1885–88 ई.) 1885 में भारत का गवर्नर जनरल बना। उसने सम्राट थीवा पर आक्रमण कर 20 दिनों के अन्दर मांडले पर अधिकार कर लिया। उत्तरी बर्मा को हस्तगत कर लिया गया। डफरिन का यह कार्य डकैतों जैसा था। दो–तिहाई बर्मा पहले से ही अंग्रेजों के अधिकार में था, शेष भाग को हड़प लेने से कम्पनी को असीमित लाभ हुए।

3.6 आंग्ल–अफगान सम्बन्ध (Anglo-Afghan Relations)

1836 ई. में लॉर्ड ऑकलैण्ड गवर्नर जनरल बनकर भारत आया। उसके शासनकाल की सबसे महत्वपूर्ण घटना प्रथम अफगान युद्ध थी।

अफगानिस्तान, रूस तथा भारत की सीमाओं के बीच स्थित है। अंग्रेजों को डर था कि रूस भारत तक न पहुँच जाये। अतः उन्होंने अफगानिस्तान को अपने पक्ष में करने का प्रयत्न किया।

रूस तेजी से दक्षिण की ओर बढ़ रहा था और अफगानिस्तान पर उसका प्रभाव स्थापित न हो जाए, इस बात को लेकर अंग्रेज चिंतित थे।

3.6.1 प्रथम अफगान युद्ध (1839–1842 ई.) के कारण (Reasons of First Afghan War (1839-1842 AD))

1. **यूरोपीय राजनीति का प्रभाव–** अंग्रेजों को रूस से भय था इसलिए उन्होंने अफगानिस्तान को अपने पक्ष में किया।
2. **अफगानिस्तान की स्थिति–** अफगानिस्तान का शासक शाहशुजा अयोग्य था। 1809 ई. में उसे कबीले के लोगों ने मार भगाया। उसने अंग्रेजों के पास शरण ली।
3. **अफगानिस्तान के शासक दोस्त मोहम्मद का प्रस्ताव ठुकराना–** 1826 ई. में दोस्त मोहम्मद अफगानिस्तान का शासक बना। उसने अंग्रेजों को मैत्री प्रस्ताव भेजा किन्तु ऑकलैण्ड ने इंकार कर दिया।
4. **दोस्त मोहम्मद का रूस को प्रस्ताव–** दोस्त मोहम्मद ने रूस से बातचीत आरंभ की। इससे इंग्लैण्ड में सरकार को चिन्ता हुई। सरकार ने ऑकलैण्ड से रूस को रोकने को कहा। ऑकलैण्ड ने अपने

प्रतिनिधि एलेक्जेण्डर बर्न्स को भेजा। दोस्त मोहम्मद भी बर्न्स से सन्धि करने के लिए तैयार हो गया। शर्त यह थी कि ऑकलैण्ड उसे रणजीत सिंह से पेशावर दिलाए। इसके लिए ऑकलैण्ड तैयार नहीं हुआ। दोस्त मोहम्मद ने पुनः रूसियों से बातचीत आरंभ कर दी।

5. **त्रिपक्षीय सन्धि–** ऑकलैण्ड ने तय किया कि दोस्त मोहम्मद के बदले शाहशुजा को गद्दी पर बैठाना उचित होगा। इसके लिए उसने रणजीत सिंह की सहायता ली। इस तरह त्रिपक्षीय सन्धि हो गई जिसमें रणजीत सिंह, शाहशुजा और कम्पनी शामिल थे।

3.6.2 युद्ध की घटनाएँ (Events of the War)

दोस्त मोहम्मद ने रूस के साथ बातचीत तभी प्रारंभ की थी जब ऑकलैण्ड ने उसका मंत्री प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया था। अतः ऑकलैण्ड का यह कार्य बिल्कुल अनुचित था।

ऑकलैण्ड ने एक विशाल सेना एकत्र की। दोस्त मोहम्मद को काबुल छोड़कर जाना पड़ा। शाहशुजा को सिंहासन पर बैठा दिया गया। 1839 ई. में रणजीत सिंह की मृत्यु हो गई। पंजाब में उथल–पुथल आरंभ हो गई। दोस्त मोहम्मद के पुत्र ने अंग्रेजी सेना को परास्त किया। कम्पनी को अपमानजनक सन्धि पर हस्ताक्षर करने पड़े। ऑकलैण्ड ने त्याग–पत्र दे दिया। उसके स्थान पर लॉर्ड एलेनबरो गवर्नर–जनरल बनकर आया। उसने अफगानिस्तान दोस्त मोहम्मद को लौटा दिया जो पुनः अपने देश का शासक बन गया।

3.6.3 1844–1876 ई. तक आंग्ल–अफगान सम्बन्ध (Anglo-Afghan Relations During (1844-1876 AD))

दोस्त मोहम्मद तथा ब्रिटिश सरकार के बीच सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण बने रहे। 1863 ई. में दोस्त मोहम्मद की मृत्यु हो गई। उसका तीसरा पुत्र शेरअली अफगानिस्तान का शासक बना। 1864 ई. में लॉर्ड लारेंस भारत के गवर्नर–जनरल बने और 1869 ई. तक इस पद पर रहे। 1866 ई. में रूसियों ने बुखारा और ताश्कंद पर कब्ज़ा कर लिया। रूस के आक्रमण से अंग्रेज चिंतित हो उठे। शेरअली को अपने पक्ष में करने के लिए लॉर्ड लारेंस द्वारा कुछ धन और हथियार भेजे गए। उसके बाद लॉर्ड मेयो (1869–72 ई.) ने लॉरेन्स की तरह धन भेजने का कार्य जारी रखा। किन्तु लॉर्ड मेयो की अण्डमान द्वीप में हत्या कर दी गई। लॉर्ड नार्थब्रुक (1872–76 ई.) ने कार्यभार संभाला। लॉर्ड नार्थब्रुक से शेरअली को आशा थी कि वह उसके पुत्र अब्दुल्लाजान को अगला शासक स्वीकार करेगा तथा रूस के आक्रमण से अफगानिस्तान को बचाएगा किन्तु लॉर्ड नार्थब्रुक ने दोनों ही बातों की गारण्टी नहीं दी। शेरअली ने रूस से वार्ता का मन बना लिया। लॉर्ड लिटन (1876–80 ई.) में भारत आया।

टिप्पणी

3.6.4 द्वितीय अफगान युद्ध (1878–1890 ई.) (Second Afghan War (1878-1890 AD))

लॉर्ड लिटन अफगानिस्तान के प्रति आक्रामक नीति का समर्थक था।

युद्ध के कारण

1. **ब्रिटिश रेजीडेण्ट को दरबार में रखने की मांग**– लॉर्ड लिटन ने अमीर शेरअली से दरबार में ब्रिटिश रेजीडेण्ट रखने की मांग की किन्तु उसने अस्वीकार कर दिया।
2. **रूस–अफगान सन्धि**– अंग्रेजों ने क्वेटा पर अधिकार कर लिया। वे कंधार पर अधिकार करने के इच्छुक थे। विवश होकर अमीर ने रूस से मित्रता कर ली जिसके अनुसार रूस ने उसे विदेशी आक्रमण से सुरक्षा का वचन दिया। रूस स्वयं इंग्लैण्ड के विरूद्ध षड़यंत्र करना चाहता था। इसलिए उसने अमीर का साथ दिया। अफगान तथा रूस की मित्रता से इंग्लैण्ड रुष्ट हो गया।
3. **लॉर्ड लिटन की कूटनीति**– लिटन ने 1878 ई. में एक पत्र काबुल भेजा जिसमें उसने लिखा, ''रूस और ब्रिटिश साम्राज्य के बीच अफगानिस्तान की स्थिति लोहे के दो बर्तनों के बीच मिट्टी की कटोरी समान है, यदि शेरअली हमारा मित्र बना रहेगा तो इंग्लैण्ड की सैन्य शक्ति लौह चक्र की तरह उसकी रक्षा करेगा और यदि शत्रु बनेगा तो उसे सरकण्डे के समान तोड़ दिया जाएगा।'' लॉर्ड लिटन की इस धमकी से शेरअली भयभीत हुआ। उसने रूस से सहायकता की प्रार्थना की, रूस और इंग्लैण्ड के बीच 1878 ई. की बर्लिन की सन्धि हो चुकी थी अतः रूस ने हस्तक्षेप से इंकार कर दिया। रूस के हट जाने से लॉर्ड लिटन के लिए आक्रमण करना और भी आसान हो गया।

3.6.5 युद्ध की घटनाएँ एवं परिणाम (Events and Results of the War)

गण्डमक की सन्धि– नवम्बर 1878 ई. में लॉर्ड लिटन ने अफगानिस्तान पर आक्रमण कर दिया। शेरअली भाग गया और कुछ समय बाद उसकी मृत्यु हो गई। उसके पुत्र याकूब खाँ ने अंग्रेजों के साथ सन्धि कर ली। किन्तु युद्ध पुनः प्रारंभ हो गया क्योंकि कुछ विद्रोहियों ने ब्रिटिश एजेण्ट की हत्या कर दी थी। 1880 ई. में लॉर्ड लिटन भारत आया। अमीर को हटा दिया गया और शेरअली के भतीजे अब्दुर रहमान को शासक बना दिया गया।

आंग्ल–अफ़गान सम्बन्ध (1800–1919 ई.)

अब्दुल रहमान और ब्रिटिश सरकार के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बने रहे। लॉर्ड रिपन (1880–84 ई.) के बाद लॉर्ड डफरिन (1884–88 ई.) गवर्नर जनरल बने। लॉर्ड डफरिन के बाद लॉर्ड लैंसडाउन (1888–94 ई.) ने कबाइली लुटेरों के विरुद्ध कदम उठाने के लिए सर मोर्टीनर दूरन्द को अमीर के दरबार भेजा। दोनों के बीच

टिप्पणी

(1893 ई.) में दूरन्द समझौता हुआ। दोनों के बीच सीमा निर्धारित कर दी गई जो दूरन्द रेखा कहलाई। अमीर तथा कम्पनी ने वचन दिया कि दोनों एक दूसरे की सीमा के बाहर हस्तक्षेप नहीं करेंगे।

3.6.6 तृतीय अफ़गान युद्ध (1919 ई.) (Third Afgan War (1919 AD))

1901 ई. में अब्दुर रहमान की मृत्यु हो गयी। उसका बड़ा बेटा हबीबुल्ला अमीर बना। लॉर्ड कर्जन गर्वनर–जनरल बने। उनके बीच 1905 ई. में समझौता हुआ। 1919 ई. में अमीर की हत्या कर दी गई और उसका पुत्र अमानुल्लाह गद्दी पर बैठा। अफगान सेना द्वारा बाघ नामक गाँव पर आक्रमण करने से दोनों पक्षों में युद्ध हुआ और अफ़गान पराजित हुए। दोनों पक्षों के बीच रावलपिण्डी की सन्धि हुई। यद्यपि, अफगान परास्त हुए किन्तु सन्धि से उन्हें लाभ हुआ। अफ़गानिस्तान ने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली।

3.7 डलहौजी का व्यपगत सिद्धांत उसका प्रशासन एवं सुधार (Dalhousie's Doctrine of Lapse, His Administration and Reforms)

लॉर्ड डलहौजी जनवरी 1848 ई. में भारत का गवर्नर जनरल बनकर आया। वह घोर साम्राज्यवादी तथा अग्रगामी नीति का समर्थक था। उसके तीन प्रमुख उद्देश्य थे– भारत में राजनीतिक एकता की स्थापना, कम्पनी के राज्य की सीमाओं को सुरक्षित रखना तथा इंग्लैण्ड के आर्थिक हितों की रक्षा करना।

3.7.1 व्यपगत (उत्तराधिकारहरण) सिद्धांत का क्रियान्वयन (Execution of the Doctrine of Lapse)

डलहौजी ने इस सिद्धान्त के आधार पर निम्नलिखित राज्यों को अपना शिकार बनाया–

1. सातारा– 1848 ई. में सातारा के राजा की मृत्यु हो गयी। राजा ने मृत्यु से कुछ दिन पूर्व एक बालक को गोद ले लिया था। डलहौजी ने बालक को राजा स्वीकार नहीं किया। सातारा का राज्य कम्पनी के राज्य में मिला लिया गया।

2. नागपुर– नागपुर का शासक राघोजी की मृत्यु 1853 ई. में हुयी। उसने अपनी मृत्यु से पूर्व डलहौजी को पत्र भेजकर गोद लेने की अनुमति माँगी थी। डलहौजी से कोई उत्तर न पाकर उसने अपने अंतिम समय में यशवन्तराव को गोद लिया। डलहौजी ने यह घोषणा की कि कम्पनी की पूर्व अनुमति से यशवन्तराव को गोद नहीं लिया गया है और राजा की निःसंतान मृत्यु हुई है, अतः नागपुर का राज्य मिला लिया गया। वास्तव में डलहौजी नागपुर को किसी भी तरह से हड़पना चाहता था।

3. झाँसी– 1818 ई. में पेशवा ने अंग्रेजों से पराजय के पश्चात् अंग्रेजों को सौप दिया था। अंग्रेजों ने 'आधी सहयोग' की शर्त पर झाँसी की गद्दी रामचन्द्र को सौंपी थी। रामचन्द्र के उत्तराधिकारी में गंगाधराव निःसंतान था। मृत्यु से पूर्व उसने एक बालक को गोद लिया। नवम्बर 1853 ई. में गंगाधरराव की मृत्यु हो गयी। डलहौजी झाँसी को हड़पना चाहता था। अतः उसने दत्तक पुत्र को गंगाधरराव का उत्तराधिकारी स्वीकार नहीं किया। झाँसी को कम्पनी के राज्य में मिला लिया।

4. अन्य राज्य– सम्भलपुर, जैतपुर, उदयपुर तथा बघात अन्य राज्य थे जिनके शासक निःसंतान थे। अतः उनके राज्य भी कम्पनी के राज्य में मिला लिये गये।

5. देशी नरेशों की उपाधियाँ तथा पेंशनों का अपहरण– डलहौजी ने सन्तानहीन राजाओं पर ही अत्याचार नहीं किया अपितु राजाओं की उपाधियों तथा पेंशनों को छीनकर भी किया। उसका विचार था कि उपाधियाँ तथा पेंशन उपयोग करने वाले व्यक्ति की मृत्यु के उपरान्त वे स्वतः ही समाप्त हो जाती हैं उसने भूतपूर्व राजाओं की उपाधियों को मानने एवं पेंशन देने से मना कर दिया।

उसने बिठूर के शासक एवं भूतपूर्व पेशवा बाजीराव द्वितीय की मृत्यु के बाद उसकी पेंशन उसके दत्तक पुत्र नाना साहेब को देने से इन्कार किया। कर्नाटक तथा तंजौर के राज्य कम्पनी के अधिकार में पहले से थे, परन्तु उनके शासकों को नवाब तथा राजा की उपाधि प्राप्त थी। 1853 ई. में कर्नाटक के नवाब तथा 1855 ई. में तंजौर के राजा की मृत्यु हो गयी। उनके कोई पुत्र नहीं था। अतः उनके वंशजों को डलहौजी ने उपाधि तथा पेंशन देने से मना कर दिया। सूरत के शासक के साथ भी ऐसा ही व्यवहार किया गया।

6. कुशासन के आरोप पर राज्य का अपहरण– डलहौजी का मानना था कि देशी राज्य अयोग्य है। अतः डलहोजी ने कम्पनी के राज्य का विस्तार करने के लिए ऐसे राज्यों को कम्पनी में मिला लिया जिन राज्यों में भ्रष्टाचार एवं कुशासन का आरोप लगाया, तथा उन राज्यों कों हड़प लिया।

हैदराबाद का निज़ाम सहायक सेना का खर्च चुका नहीं पा रहा था। उस पर कम्पनी का ऋण बढ़ रहा था। डलहौजी ने कम्पनी के ऋण की पूर्ति के लिए बरार प्रान्त निजाम से छीन लिया।

अवध कम्पनी के संरक्षण में था डलहौजी ने अवध के नवाब पर कुशासन का आरोप लगाकर उसे कलकत्ता निर्वासित कर दिया और अवध राज्य कम्पनी के राज्य में मिला लिया गया।

गवर्नर जनरल लॉर्ड डलहौजी ने प्रत्येक कदम कम्पनी के राज्य विस्तार को ध्यान में रखकर उठाया था। उसे इस बात का श्रेय दिया जाता है कि उसने कम्पनी को भारत की सर्वोच्च सत्ता में बदल दिया।

3.7.2 लॉर्ड डलहौजी का प्रशासन एवं सुधार (Lord Dalhousie's Administration and Reforms)

टिप्पणी

लॉर्ड डलहौजी 1848 ई. में भारत का गवर्नर जनरल बनकर आया। उसकी प्रशंसा करते हुए रिचर्ड टैम्पल का कथन है, ''एक प्रशासक के रूप में लॉर्ड डलहौजी से इंग्लैण्ड से भारत आने वाले योग्य व्यक्तियों में कोई भी उससे आगे निकलना तो क्या उसकी समानता भी नहीं कर पाया।'' उसमें एक योग्य एवं कुशल प्रशासक के सभी गुण थे। साम्राज्य विस्तार के साथ उसने प्रशासन में भी सुधार कार्य किये। इतिहासकार उसके सुधारों के कारण उसे आधुनिक भारत का निर्माता मानते हैं।

1. प्रशासनिक सुधार– डलहौजी ने प्रशासन का केन्द्रीयकरण किया। 1833 ई. के चार्टर एक्ट ने गवर्नर जनरल की शक्तियों में काफी वृद्धि कर दी।

(i) **नॉन–रेगूलेशन प्रणाली**– डलहौजी ने नव विजित प्रदेशों की प्रशासन व्यवस्था के लिए पंजाब, अवध, बर्मा तथा मध्यप्रदेश चीफ कमिश्नर को दिया। चीफ कमिशनर अपने कार्य के लिए गवर्नर जनरल के प्रति उत्तरदायी थे।

(ii) **बंगाल में लेफ्टिनेण्ट गवर्नर की नियुक्ति**– बंगाल एक बड़ा प्रान्त था। अतः डलहौजी ने बंगाल की प्रशासनिक व्यवस्था के लिए लेफ्टिनेण्ट गवर्नर की नियुक्ति की।

2. सैनिक सुधार– डलहौजी ने मेरठ को सेना का केन्द्र बनाया तथा शिमला में सैनिक छावनियाँ बना दीं। गोरखों को सेना में भर्ती किया गया। सेना को छोटी–छोटी टुकड़ियों में विभाजित किया गया।

3. रेल, तार एवं डाक विभाग की स्थापना– भारत में सर्वप्रथम रेल बम्बई में डलहौजी के काल में चलना आरम्भ हुई। डाक व्यवस्था में टिकट की प्रणाली आरम्भ की। तार लाइन भी सर्वप्रथम डलहौजी के ही समय डाली गयी।

4. व्यापारिक सुधार– डलहौजी की व्यापारिक नीति ब्रिटिश व्यापारियों के लाभ को दृष्टि में रखकर डलहौजी ने खुले व्यापार की नीति को अपनाया। व्यापार पर लगे प्रतिबन्ध हटा दिये। इससे भारतीय गृह व्यवसाय नष्ट हो गया।

5. सार्वजनिक निर्माण विभाग का संगठन– डलहौजी ने सार्वजनिक निर्माण विभाग की स्थापना की। इस विभाग को नहरों, सड़कों और पुलों के बनाने का कार्य सौंपा गया। इंजीनियरिंग की शिक्षा के लिए रुड़की तथा प्रेसीडेंसियों में कॉलेज खोले गये।

6. शिक्षा सम्बन्धी सुधार– डलहौजी के समय में चार्ल्स वुड ने शिक्षा सम्बन्धी कुछ सिफारिशें भारत भेजीं। वुड की सिफारिशों के आधार पर ही 1858 ई. में कलकत्ता, मद्रास तथा बम्बई में विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। विद्यार्थियों के लिए अंग्रेजी और प्रान्तीय भाषाओं का ज्ञान अनिवार्य किया गया।

7. सामाजिक सुधार– भारत में वातावरण सामाजिक सुधारों के अनुकूल नहीं था, परन्तु डलहौजी ने दो महत्वपूर्ण सुधार किये। 1850 ई. में डलहौजी ने एक विधान पास कराया। इसके अनुसार धर्म परिवर्तन के कारण अब किसी भी व्यक्ति को अपनी पैतृक सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता था। 1855 ई. में

उसने एक दूसरा विधान पास कराया। इसके अनुसार विधवा विवाह को कानूनी मान्यता मिली।

टिप्पणी

8. वैधानिक सुधार– 1853 ई. में चार्टर एक्ट पारित किया गया। इसके द्वारा निम्नलिखित परिवर्तन किये गये–

(i) कम्पनी पर ब्रिटिश संसद का नियंत्रण बढ़ाया गया।

(ii) कम्पनी के संचालकों की संख्या 24 से घटाकर 18 कर दी गई।

(iii) कम्पनी के संचालक कम्पनी के पदाधिकारियों की नियुक्ति नहीं कर सकते थे। इन नियुक्तियों को प्रतियोगी परीक्षाओं के माध्यम से किया जाना तय हुआ।

(iv) कुछ विद्वान डलहौजी को आधुनिक भारत का निर्माता बताते हैं। भारतीय रेल, डाक तथा तार व्यवस्था की स्थापना का श्रेय डलहौजी को ही है।

3.8 प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857– कारण, प्रकृति और परिणाम (First Freedom Struggle, 1857-Reasons, Nature and Results)

1857 ई. का विद्रोह– स्वरूप, कारण और परिणाम (Revolt of 1857 AD – Nature, Reasons and Result)

भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना, शोषण का इतिहास है। धूर्तता तथा विश्वासघात से ब्रिटिश शासन सम्पूर्ण भारत में फैल गया। ब्रिटिश शासन के प्रति भारतीयों में घोर असन्तोष था, जो समय–समय पर विद्रोहों के रूप में प्रकट हुआ। उदाहरणार्थ–सन् 1756 ई., सन् 1764 ई. एवं 1795 ई. एवं 1795 ई. का सैनिक विद्रोह, 1806 ई. का वैल्लौर का विद्रोह, 1816 ई. का बरेली का विद्रोह, 1824 ई. का बैरकपुर का विद्रोह, 1831–32 ई. का कोल विद्रोह, 1842 ई. का बुन्देला विद्रोह, एवं 1855–56 ई. का संथाल विद्रोह इत्यादि।

3.8.1 1857 ई. के विद्रोह के कारण (Reasons of 1857 Revolts)

भारतीयों का असन्तोष 1857 ई. के विद्रोह के रूप में प्रकट हुआ। 1857 ई. के विद्रोह के निम्नलिखित प्रमुख कारण थे–

1. राजनीतिक एवं प्रशासनिक कारण

(i) डलहौजी की व्यपगत या हड़प नीति– 1857 ई. की क्रान्ति के लिए मुख्यतः लॉर्ड डलहौजी उत्तरदायी था। उसके व्यपगत सिद्धांत से भारतीय रियासत ब्रिटिश सर्वोच्च सत्ता में विलीन हो गई। भारतीय रियासतों के शासकों पर कुशासन का आरोप लगाकर ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया। उसका विचार था कि अधीनस्थ राज्यों के शासकों को गोद लेने के लिए सर्वोच्च सत्ता की स्वीकृती अनिवार्य है, जिसे स्वीकार करना अथवा न

करना उसकी इच्छा पर निर्भर है। तथा आश्रित राज्यों के शासकों को गोद लेने की अनुमति नहीं मिलनी चाहिए।

इस नीति ने अन्तर्गत सतारा, झाँसी, नागपुर राजवंशों का अन्त कर दिया गया। अवध के नवाब पर कुशासन का आरोप लगाकर उसे कलकत्ता निर्वासित कर दिया गया और उसका राज्य ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया गया। पंजाब, पीगु और सिक्किम का विलय बलपूर्वक किया गया।

(ii) मुगल राजवंश के साथ दुर्व्यवहार– अंग्रेजों का व्यवहार मुगल बादशाह के प्रति क्रूरतापूर्ण था। मुगल बादशाह बहादुरशाह को 'बादशाह' की उपाधि तथा लाल किला छोड़ने के लिए बाध्य किया गया।

(iii) ब्रिटिश न्याय तथा राजस्व व्यवस्था के प्रति असन्तोष– यूरोपीय न्यायाधीश न्याय में पक्षपात करते थे। भू–राजस्व प्रणाली के प्रति भारतीयों में घोर असन्तोष व्याप्त था। किसानों पर लगान का बोझ बढ़ गया था। सबसे ऊँची बोली बोलने वाले ठेकेदार ज़मीन के नवीन स्वामी बन गए, जिन्होंने रैयत की भलाई की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया।

(iv) भारतीयों के प्रति अंग्रेजों का व्यवहार– भारतीयों के प्रति अंग्रेजों का व्यवहार अमानवीय था। वे समस्त जाति को घृणा की दृष्टि से देखते थे। वे उन्हें उच्च पदों के योग्य नहीं मानते थे। शिक्षित तथा सम्मानित भारतीयों को भी उच्च पदों के योग्य नहीं समझा जाता था।

2. आर्थिक कारण– ईस्ट इंडिया कम्पनी मुख्यतः व्यापारिक संस्था थी। अतः कम्पनी का मुख्य उद्देश्य अधिकाधिक लाभ कमाना था। कम्पनी की नीति के कारण भारतीय कृषि, उद्योग–धन्धों और व्यापार को अपार क्षति पहुँची।

कुटीर उद्योग–धन्धे नष्ट हो गए जिससे लाखों लोग बेरोजगार को गए। उन प्रदेशों के व्यापार पर कम्पनी का एकाधिपत्य स्थापित हो गया। भारतीयों की आर्थिक स्थिति शोचनीय हो गयी।

3. सामाजिक कारण

(i) ब्रिटिश प्रशासन का भारतीयों के परम्परागत सामाजिक परिवेश पर दूरगामी प्रभाव पड़ा। कम्पनी सरकार ने अनेक सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने के लिए कदम उठाये।

(ii) रूढ़िवादी भारतीयों ने इन परिवर्तनों तथा सुधारों का अपने सामाजिक जीवन में हस्तक्षेप समझा। जागीरें और उपाधियाँ जब्त हो जाने के कारण उच्च वर्ग का जीवन अस्त–व्यस्त हो गया। उनके सामाजिक मान और सम्मान को गहरी ठेस पहुँची।

(iii) प्रजातीय भेदभाव के कारण भारतीयों के मन में शंका पैदा कर दी कि अंग्रेज भारतीय सभ्यता और संस्कृति को समाप्त करना चाहते हैं। अंग्रेजों के साथ भारतीय रेलगाड़ी के प्रथम श्रेणी के डिब्बों में वे यात्रा नहीं कर सकते थे। श्वेतों द्वारा संचालित होटलों और क्लबों में भारतीयों का प्रवेश निषेध था। भारतीय इतना अपमान सहन न कर सके।

4. धार्मिक कारण– ब्रिटिश सरकार ने ईसाई प्रचारकों को प्रोत्साहित किया और उन्हें सहायता प्रदान की। धर्म परिवर्तन हेतु शासन द्वारा भारतीयों को अनेक सुविधायें दी जाती थीं। उन्हें सरलतापूर्वक सरकारी नौकरी मिल जाती थी। अकाल पीड़ितों, बन्दियों, विधवाओं तथा अनाथ बालकों को प्रलोभन देकर धर्म–परिवर्तन के लिये विवश किया जाता था।

शिक्षा संस्थाओं में ईसाई धर्म का प्रचार किया जाता था। भारतीय धर्म की कटु आलोचना की जाती थी।

5. सैनिक कारण– भारतीय सैनिकों के सहयोग से ईस्ट इंडिया कम्पनी भारत में एक विस्तृत साम्राज्य स्थापित करने में सफल हुई थी। जब तक भारतीय सैनिक कम्पनी सरकार के प्रति वफादार बने रहे ब्रिटिश साम्राज्य के लिये कोई भी खतरा उत्पन्न नहीं हुआ, परन्तु अनेक कारणों से भारतीय सैनिकों में असन्तोष फैलने लगा इसके निम्नलिखित कारण थे–

(i) भारतीय सैनिकों की प्रतिकूल सेवा स्थिति– भारतीय सैनिकों को यूरोपीय सैनिकों की अपेक्षा कम वेतन, भत्ता और सुविधाएँ प्राप्त थीं। उनके लिये पदोन्नति के अवसर भी नहीं थे। अंग्रेज अफसर भारतीय सैनिकों के साथ दुर्व्यवहार करते थे, उन्हें अपमानित करते थे तथा उनके साथ अमानवीय व्यवहार करते थे।

रणक्षेत्र में भारतीय सैनिकों को अग्रिम पंक्ति में तैनात किया जाता था और यूरोपीय सैनिक उनके पीछे चलते थे। यूरोपीय अधिकारी भारतीय सैनिकों की भावना का भी ध्यान नहीं रखते थे। भारतीय सैनिकों द्वारा तिलक लगाने, पगड़ी पहनने तथा दाढ़ी–मूँछ रखने पर प्रतिबन्ध था। उन्हें समुद्र पार के देशों में जाने के लिये बाध्य किया जाता था। अंग्रेज अधिकारी भारतीय सैनिकों को घृणा की दृष्टि से देखते थे। अतएव भारतीय सैनिकों में घोर असन्तोष व्याप्त था, जो समय–समय पर विद्रोहों के रूप में प्रकट हुआ।

(ii) भारतीय और यूरोपीय सैनिकों की संख्या में असन्तुलन– यूरोपीय सैनिकों की संख्या भारतीय सैनिकों की अपेक्षा कम थी।

6. तात्कालिक कारण– जनवरी 1857 ई. में यह अफवाह फैली कि 'रायल इनफील्ड' में प्रयुक्त होने वाली नवीन प्रकार के कारतूसों में गाय और सुअर की चर्बी के मिश्रण का उपयोग किया जाता है। भारतीय सैनिकों ने इस के उपयोग को अपने धर्म के विरुद्ध समझा अतएव उन्होंने चर्बी वाले कारतूसों को अस्वीकार कर दिया। चर्बी वाले कारतूस की खबर मेरठ और लखनऊ छावनियों में भी फैल गई और मेरठ के सैनिकों ने विद्रोह कर दिया। उत्तर भारत में रक्त–कमल और चपातियों के द्वारा क्रांति का प्रसार हुआ अतएव सैनिक विद्रोह क्रान्ति में परिवर्तित हो गया।

टिप्पणी

3.8.2 क्रान्ति का संगठन (Organization of Revolution)

मौलवियों, फकीरों और भिखारियों के वेश में क्रान्तिकारियों ने देश के कोने–कोने में घूमकर क्रान्ति का वातावरण तैयार किया। मुगल बादशाह के नाम पर 31 मई, 1857 ई. का दिन विद्रोह के लिए निहियत किया गया था। प्रतीक के रूप में सैनिक छावनियों में रक्त–कमल और गाँवों में चपाती वितरित की गई।

दिल्ली के लाल किले में अनेक गुप्त सभाएँ आयोजित की गईं। गंगा जल और कुरान की शपथ लेकर हिन्दुओं एवं मुसलमानों ने विद्रोह में भाग लेने की शपथ ली। नाना साहब के वकील अजीमुल्ला ने रूस, मिस्र, तुर्की आदि देशों का दौरा करके उनका समर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया। सतारा के रंगोजी बापू ने दक्षिण भारत के शासकों को विद्रोह में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया। योजना को अन्तिम रूप देने के लिये नाना साहब ने तीर्थयात्रा के बहाने प्रमुख सैनिक छावनियों का दौरा किया और प्रमुख क्रान्तिकारियों से सम्पर्क स्थापित किया। सम्पूर्ण योजना की विशेषता यह थी कि षड़यन्त्र की भनक तक अंग्रेजों को नहीं लग सकी।

3.8.3 क्रान्ति की घटनाएँ (Events of Revolutions)

विद्रोह नियत समय से पूर्व ही प्रारम्भ हो गया। शीघ्र ही यह खबर बंगाल में स्थित सभी सैनिक छावनियों में फैल गई। बरहामपुर में 19 एन.आई. के सिपाहियों ने नये कारतूसों का प्रयोग करना अस्वीकार कर दिया। गवर्नर लॉर्ड कैनिंग ने इस टुकड़ी को भंग करने का आदेश दिया, जिससे बैरकपुर में घोर असन्तोष व्याप्त हो गया। मंगल पाण्डेय नामक एक ब्राह्मण सिपाही ने अंग्रेज अधिकारियों को घायल कर दिया। सैनिक अदालत ने उसे मृत्यु दण्ड दिया। इसी प्रकार आज्ञा का उल्लंघन करने पर लखनऊ की 7वीं अवध रेजीमेण्ट भंग कर दी गई। अम्बाला में जो ब्रिटिश सेना का मुख्यालय था, भारतीय सैनिकों ने गुप्त रूप से अधिकारियों के बंगलों में आग लगाना प्रारम्भ कर दिया। मेरठ के घुड़सवारों ने भी चर्बी वाले कारतूसों का प्रयोग अस्वीकार कर दिया। उन्हें 5 वर्ष के कारावास का दण्ड दिया गया। मेरठ छावनी के शेष भारतीय सैनिकों ने नियत समय के पूर्व यानी 10 मई, 1857 ई. को विद्रोह कर दिया। विद्रोहियों ने अपने साथियों को मुक्त करा लिया और अनेक अंग्रेज अधिकारियों की हत्या कर दी।

11 मई, 1857 ई. को मेरठ के विद्रोही सिपाही दिल्ली पहुँचे उनका दिल्ली के शस्त्रागार पर अधिकार हो गया। मुगल सम्राट बहादुरशाह द्वितीय ने विद्रोहियों का नेतृत्व ग्रहण करना स्वीकार कर लिया। अल्प समय में ही क्रान्ति की लहर उत्तरी भारत के अनेक नगरों और कस्बों (उत्तर प्रदेश में अवध, कानपुर, रूहेलखण्ड, झाँसी, अलीगढ़, मथुरा, आगरा, बदायूँ आदि में, बिहार के अधिकांश भाग में, राजस्थान के नसीराबाद, सैनिक छावनी, कोटा, जोधपुर इत्यादि नगरों में, मध्य प्रदेश में नीमच और ग्वालियर) में फैल गई। 25 जून को जनरल व्हिलर ने नाना साहब के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया और कानपुर भी अंग्रेजों के हाथ से निकल गया। झाँसी में क्रांन्तिकारियों का नेतृत्व रानी लक्ष्मीबाई ने किया। ग्वालियर, इन्दौर और राजस्थान की अनेक रियासतों के सैनिकों और नागरिकों ने

टिप्पणी

विद्रोह कर दिया। कोटा के विद्रोहियों ने अंग्रेज रेजीडेंट की हत्या कर दी। मारवाड़ और मेवाड़ के कुछ जागीरदार भी विद्रोह में सम्मिलित हो गये।

बिहार में विद्रोह का संचालन जगदीशपुर के जमींदार कुँवर सिंह ने किया। इस प्रकार कलकत्ता से लेकर पेशावर तक क्रान्ति की ज्वाला धधक उठी, परन्तु काश्मीर, पंजाब, राजस्थान के अधिकांश भाग एवं सम्पूर्ण दक्षिण भारत पर क्रान्ति का प्रभाव नहीं पड़ा।

3.8.4 क्रान्ति का दमन (Suppression of Revolution)

विद्रोह के दमन की योजना अम्बाला छावनी में बनायी गई थी। पंजाब और मद्रास की सेना की मदद से दिल्ली पर आक्रमण किया गया। भारतीय सैनिक अंग्रेज आक्रमणकारियों से दिल्ली की रक्षा नहीं कर सके। सितम्बर 1857 ई. में मुगल बादशाह, बेगम जीनत महल और मुगल शहजादा बन्दी बना लिए गए। दिल्ली के पतन के 6 माह बाद अंग्रेज लखनऊ पर आधिपत्य स्थापित करने में सफल हुए। जुलाई 1857 ई. में कानपुर का पतन हो गया। कानपुर और इलाहाबाद के बीच स्थित गाँवों में आग लगा दी गई।

अप्रैल 1858 ई. में जनरल ह्यूरोज ने झाँसी पर पुनः कब्जा कर लिया। झाँसी से निकलकर महारानी लक्ष्मीबाई कालपी तथा वहाँ से तात्याँ टोपे के साथ ग्वालियर पहुँची। सिन्धिया को ग्वालियर छोड़ना पड़ा और ग्वालियर के दुर्ग पर महारानी लक्ष्मीबाई का कब्जा हो गया, परन्तु ग्वालियर दुर्ग पर शीघ्र ही अंग्रेजों का आधिपत्य हो गया। ग्वालियर दुर्ग की रक्षा करते हुए रानी लक्ष्मी बाई ने प्राणोत्सर्ग कर दिया। बाद में अंग्रेजों ने तात्याँ टोपे को फाँसी पर लटका दिया तथा नाना साहब भूमिगत हो गये। कुँवर सिंह की मृत्यु के पश्चात् उनके भाई अमरसिंह ने अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष जारी रखा। अन्त में बिहार पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया। इस प्रकार अंग्रेज अत्याचार से क्रान्तिकारियों को कुचलने में सफल हुए।

3.8.5 1857 ई. की क्रान्ति के असफलता के कारण (Reasons for the Failure of 1857 AD Revolution)

1857 ई. की क्रान्ति की विफलता के निम्नलिखित प्रमुख कारण थे–

1. **क्रान्ति का नियत समय से पूर्व प्रारम्भ होना–** क्रान्ति के आयोजकों ने 31 मई, 1857 ई. को सम्पूर्ण भारत में एक साथ और एक ही दिन विप्लव करने की योजना बनायी थी। इसकी सूचना सभी सैनिक छावनियों, नगरों और गाँवों के प्रमुख क्रान्तिकारियों को दे दी गई थी, परन्तु विद्रोह निश्चित समय के पूर्व प्रारम्भ हो गये। 29 मार्च, 1857 ई. को बैरकपुर छावनी के भारतीय सैनिक मंगल पाण्डेय ने विद्रोह कर दिया। अगर क्रान्ति सम्पूर्ण भारत में निश्चित तिथि को एक साथ प्रारम्भ होती, यूरोपीय सैनिकों के लिए विद्रोह का दमन करना सम्भव नहीं होता।

2. **विप्लव का स्थानीय स्वरूप**– 1857 ई. की क्रान्ति एक निश्चित क्षेत्र तक सीमित रह गयी। देश की समस्त जनता ने क्रान्ति में भाग नहीं लिया काश्मीर, पंजाब, सिन्धु, नेपाल, राजस्थान का अधिकांश भाग और सम्पूर्ण दक्षिण भारत पर क्रान्ति का प्रभाव नहीं पड़ा। बिहार, अवध, रुहेलखण्ड और दिल्ली तथा आसपास के प्रदेश तक ही विद्रोह सीमित रह गया।
3. **क्रान्ति में सभी वर्ग के लोगों ने भाग नहीं लिया**– गोरखा और अफ़गान अंग्रेजों के प्रति वफ़ादार बने रहे। क्रान्ति को कुचलने में उन्होंने अंग्रेजों के साथ सहयोग किया। भारतीय रियासतों के अनेक शासकों एवं जमींदारों ने अंग्रेजों का साथ दिया। नेपाल, काश्मीर और पटियाला के शासकों, सिन्धिया एवं निजाम ने क्रान्ति दबाने में अंग्रेजों की महत्वपूर्ण सहायता की। लॉर्ड कैनिंग ने ठीक ही कहा था,''यदि सिन्धिया भी विद्रोहियों के साथ सम्मिलित हो जाये, तो मुझे कल ही बिस्तर गोल करना पड़ जाये।''
4. **योग्य नेतृत्व एवं संगठन का अभाव**– क्रान्तिकारियों के बीच कोई ऐसा प्रतिभाशाली नेता नहीं था, जो समस्त आन्दोलन को एक सूत्र में आबद्ध कर सके। जॉन लॉरेंस ने ठीक टिप्पणी की है कि ''अगर उनमें से एक भी योग्य नेता निकला होता, तो हम सदा के लिए हार जाते।''
5. **सीमित साधन की अपेक्षाकृत कमी**– क्रान्तिकारियों के साधन सीमित थे। उनके पास आधुनिकतम अस्त्र–शस्त्रों, तोपों और बन्दूकों का अभाव था। उन्होंने भालों और तलवारों से युद्ध किया। अंग्रेजों के साधन असीमित थे और उन्हें इंग्लैण्ड से भी सहायता प्राप्त थी। उनके पास एक शक्तिशाली तोपखाना राइफलें आदि थीं। रेल, तार, डाक इत्यादि यातायात और संचार के आधुनिक साधनों पर अंग्रेजों का एकाधिकार था।
6. **निश्चित उद्देश्य का अभाव**– क्रान्तिकारियों के समक्ष ब्रिटिश विरोधी भावना के अतिरिक्त कोई सामान्य उद्देश्य नहीं था। राष्ट्रीयता की भावना का अभाव था।
7. **अंग्रेजों के अनुकूल अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ**– अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ भी अंग्रेजों के पक्ष में थीं। 1856 ई. तक क्रीमिया और चीन का युद्ध समाप्त हो चुका था। अफगान अमीर दोस्त मोहम्मद के साथ अंग्रेजों का मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध था यातायात एवं संचार के द्रुतगामी साधनों का विकास हो चुका था।
8. **शिक्षित और कृषक वर्ग की उदासीनता**– भारत के शिक्षित वर्गों ने न तो क्रान्ति में भाग लिया और न ही उसका समर्थन किया। क्रान्तिकारियों ने कृषक वर्ग का सहयोग प्राप्त करने का कोई प्रयास नहीं किया। क्रान्ति राजाओं, ताल्लुकेदारों और जमींदारों का आन्दोलन बनकर रह गयी।
9. **अंग्रेजों की कूटनीति**– अपनी कूटनीति द्वारा अंग्रेजों ने विरोधियों को भी अपना समर्थक बना लिया था।

टिप्पणी

3.8.6 1857 ई. की क्रान्ति के प्रभाव (Effects of 1857AD Revolutions)

यद्यपि 1857 ई. का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम विफल रहा, परन्तु भारतवर्ष पर इसका व्यापक और गहरा प्रभाव पड़ा। क्रान्ति को ध्यान में रखते हुए ब्रिटिश सरकार ने भारत सम्बन्धी अपनी नीति में अनेक परिवर्तन किये। इस क्रान्ति का निम्नलिखित प्रभाव पड़ा–

1. **प्रशासनिक व्यवस्था में परिवर्तन**– क्रान्ति के पश्चात् भारतीय प्रशासन का पुनर्गठन किया गया। ईस्ट इंडिया कम्पनी को विघटित कर दिया गया तथा भारतवर्ष में कम्पनी का शासन सर्वदा के लिए समाप्त हो गया। महारानी विक्टोरिया की घोषणा के अनुसार भारतीय प्रशासन का उत्तरदायित्व ब्रिटिश सम्राट और ब्रिटिश संसद को हस्तांतरित कर दिया गया। अब भारत का गवर्नर जनरल ब्रिटिश सम्राट का प्रतिनिधि (वायसराय) कहलाने लगा।
2. **आर्थिक परिवर्तन**– कम्पनी के समस्त ऋण का भार भारतीय राजस्व पर डाल दिया गया। क्रान्ति के दौरान हुए समस्त व्यय का भार भारतीयों को वहन करना पड़ा।
3. **सैनिक परिवर्तन**– भारतीय सेना का इस प्रकार पुनर्गठन किया गया सेना के समस्त उच्च पद और तोपखाना यूरोपीय सैनिकों के लिए सुरक्षित कर दिया गया। यातायात और संचार के साधनों का विकास किया गया।
4. **फूट डालो और शासन करो नीति का अनुसरण**– 'फूट डालो और शासन करो' की नीति का अनुसरण किया गया। इस प्रकार 1857 ई. की क्रान्ति एक युग की समाप्ति तथा नवीन युग का प्रारंभ था।

3.8.7 क्रान्ति का स्वरूप (Form of Revolution)

1909 ई. में विनायक दामोदर सावरकर ने अपनी पुस्तक में इसे 'भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम' कहा।

1. **सैनिक एवं सामन्ती विद्रोह**– अनेक अंग्रेज इतिहासकार इस असंतुष्ट सैनिकों और सामन्तों का विद्रोह मानते हैं। सर जॉन लॉरेन्स एवं रॉबर्ट्स इस मत को स्वीकार करते हैं कि चर्बी वाले कारतूस के कारण असंन्तुष्ट सिपाहियों ने विद्रोह कर दिया।
2. **हिन्दू–मुस्लिम षड़यन्त्र**– सर जम्स ऑट्रम और टेलर इसे 'हिन्दू–मुस्लिम षड़यन्त्र' की संज्ञा देते हैं।
3. **श्वेत और अश्वेतों के बीच संघर्ष**– मेडले के अनुसार यह विद्रोह 'श्वेत–अश्वेतों' के बीच संघर्ष था।

आर. सी. मजूमदार के अनुसार यह एक सैनिक विद्रोह था जिसे कुछ क्षेत्रों में जनसाधारण का समर्थन प्राप्त था। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, ''तथाकथित

1857 ई. का प्रथम राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम न तो प्रथम था, न राष्ट्रीय था, न स्वतंत्रता संग्राम था।''

समीक्षा

अंग्रेज इतिहासकारों ने इसे 'सैनिक विद्रोह' कहकर क्रान्ति के महत्व को कम करने का प्रयास किया है, ताकि अंग्रेजों की सर्वोच्चता, साहस, सैनिक कौशल और महानता की स्थापना हो सके। निःसंदेह ही क्रान्ति सैनिक विद्रोह से प्रारम्भ हुई और सम्पूर्ण सेना विद्रोह में सम्मिलित नहीं हुई, परन्तु समाज के प्रत्येक वर्ग ने क्रान्तिकारियों का साथ दिया।

भारतीय इतिहास में इतना व्यापक और शक्तिशाली आन्दोलन इसके पूर्व कभी भी नहीं हुआ था। पेशावर, लाहौर, अमृतसर, फिरोजपुर तथा कोल्हापुर में भी विद्रोह हुआ परंतु अंग्रेजों द्वारा विद्रोह कुचल दिया गया। यह क्रान्ति भारत की भावी पीढ़ी को संघर्ष के लिए प्रेरित करती रही है और करती रहेगी इसलिए भारत के राष्ट्रीय जीवन में इसका विशिष्ट स्थान है।

3.9 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका (Women's Role in 1857 Freedom Struggle)

3.9.1 रानी लक्ष्मीबाई (Queen Laxmibai)

झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने देश की स्वतंत्रता के लिए ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध लड़ने का साहस किया।

रानी लक्ष्मीबाई का जन्म 19 नवम्बर 1828 को उत्तरप्रदेश के वाराणसी के मदैनी नगर में हुआ था। उनके बचपन का नाम मणिकर्णिका था। वह सुन्दर थी उनकी सुंदरता के कारण उनके पिता उन्हें छबीली कहते थे। उन्हे सब प्यार से मनु कहकर पुकारते थे। उनके पिता बिठूर के न्यायालय में थे। उनके पिता आधुनिक सोच के व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी पुत्री की प्रतिभा को बचपन मे ही पहचान लिया था। जब मनु दस वर्ष की थी, तभी उनकी मां भागिरथीबाई की मृत्यु हो गई थी। उनके पिता ने उनका पालण पोषण किया। महारानी लक्ष्मीबाई को शिक्षा के साथ आत्मरक्षा, घुड़सवारी, निशानेबाजी और शस्त्र विद्या में भी निपुण थी।

मनु बाई बचपन में पेशवा बाजीराव के पास रहती थी। वहां उन्होंने अपनी पढ़ाई लिखाई की। मनु ने नानासाहब से तलवार चलाना, भाला–बरछा फेंकना और बन्दूक से निशाना लगाना सीख लिया। मनु व्यायामों में भी इनका प्रयोग करती थी। वहीं कुश्ती और मलखंब उनके प्रिय व्यायाम थे।

लक्ष्मीबाई का विवाह झाँसी के महाराज गंगाधर से हुआ। 1851 में उन्हे पुत्र की प्राप्ति हुई किन्त्त दुर्भाग्य से 4 माह बाद ही उसकी मृत्यु हो गई पुत्र वियोग मे महाराज बीमार रहने लगे। अतः दोनो ने पुत्र गोद लेने का फैसला किया। ब्रिटिश सरकार की मौजूदगी में पुत्र को गोद लिया गया ताकि वह विरोध न करे। लगातार बीमार रहने के कारण महाराज गंगाधरराव नेवालकर की 1853 में मृत्यु हो

टिप्पणी

गई। उस समय रानी की आयु मात्र 18 वर्ष थी। कठिन परिस्थिती में भी रानी ने साहस नहीं छोड़ा ओर अल्पवयस्क पुत्र के स्थान पर स्वयं शासन करने का फैसला किया।

लॉर्ड डलहौजी तत्कालीन गर्वनर जनरल था। उस समय यह नियम था कि अगर राजा का खुद का पुत्र नही है तो उसका राज्य ईस्ट इंडिया कंपनी में मिला दिया जाएगा। ब्रिटिश शासकों ने महाराज की मृत्यु का फायदा उठाकर झांसी को हथियाने की कोशिश की। लक्ष्मीबाई के दत्तक पुत्र दामोदर के खिलाफ मुकदमा दायर कर दिया। झाँसी का खजाना जब्त कर लिया। साथ ही रानी की सालाना आय से अपना हिस्सा लेना प्रारंभ कर लिया। रानी को झाँसी का किला छोडकर रानीमहल मे जाना पड़ा। इस कठिन संकट में रानी ने धैर्य से काम लिया। झाँसी का अंग्रेजो द्वारा हड़पने से बचाने के लिए उन्होंने अन्य राज्यों के सहयोग से सेना का संगठन शुरु किया। सेना में महिलाएँ भी थी।

1854 ई. में ब्रिटिश शासकों ने झाँसी को ब्रिटिश साम्राज्य में मिलाने का आदेश दिया। इस आदेश के विरुद्ध महारानी लक्ष्मीबाई ने घोषणा की– ''मै अपनी झाँसी नहीं दूंगी''।

10 मई 1857 को अंग्रेजों के खिलाफ क्रांति शुरु हो गई। 1858 में झांसी पर कब्जा करने के लिए अंग्रेजो ने सर ह्यूम रोज को भेजा। रानी ने तात्या टोपे और 20,000 सैनिकों के सहयोग से 2 हफ्ते तक युद्ध किया और अपने पुत्र को बचाया। अंग्रेजों ने किले की दीवार तोड़ी ओर झाँसी में लूट मचाई। रानी काल्पी पहुंची और पेशवा बाजीराव से मदद प्राप्त की।

लक्ष्मीबाई ने ग्वालियर में अंग्रजों का सामना किया। युद्ध में उनका घोड़ा मारा गया। रानी वीरता से युद्ध कर रही थी किन्तु युद्ध में घायल होने की वजह से घोड़े से गिर 17 जून 1858 को कोटा के सराई के पास रानी लक्ष्मीबाई को वीरगति प्राप्त हुई। देश को स्वतंत्रता दिलाने के लिए रानी ने अपने प्राण न्यौछावर कर दिये।

3.9.2 रानी अवंतीबाई (Queen Avantibai)

रानी अवंतीबाई मध्य भारत के रामगढ़ की रानी थी। 1857 की क्रांति में उन्होंने अपनी मातृभूमि पर ही देश की आजादी के लिए अपने प्राणों का बलिदान दिया था।

सन 1850 ई. में विक्रमजीत सिंह रामगढ़ की गद्दी पर बैठा। राजा विकमजीत का विवाह सिवनी जिले के मनकहडी के जागिरदार राव जुझार सिंह की कन्या अवंतीबाई से हुआ। विक्रमजीत योग्य थे किन्तु धार्मिक प्रवृत्ती के थे। उन्हें राज कार्यो में रुचि नही थी। अतः शासन का भार रानी अवंतीबाई पर आ पड़ा।

1851 ई. में जब उनके पुत्र छोटे ही थे महाराज विक्रमजीत की मृत्यु हो गई। लॉर्ड डलहौजी की राज्यों को हड़पने की नीति का कु–चक्र चलने लगा। रानी अवंतीबाई ने आस पास के ठाकुरों जागीरदारों ओर राजाओं को एकत्र कर अंग्रेजों का विरोध करने का फैसला किया। गढ़ा मण्डला के शासक शंकरशाह के

टिप्पणी

नेतृत्व में विद्रोह के लिए विजयादशमी का दिन निश्चित किया। क्रांति का संदेश गाँव गाँव पहुँचाया। 20 मार्च 1858 को इस वीरांगना ने युद्ध लड़ते हुए अपने आप को चारों तरफ से घिरा हुआ पाकर स्वयं का बलिदान कर दिया।

3.9.3 झलकारीबाई (Zalkaribai)

झलकारीबाई का जन्म बुंदेलखण्ड के एक गॉव में 22 नवम्बर को एक निर्धन कोली परिवार में हुआ। उनके पिता का नाम मूलचंद कोली (सदोबा) ओर माता का जमुनाबाई (धनिया) था। झलकारीबाई बचपन से ही साहसी थी।

झलकारीबाई का विवाह झाँसी की सेना के सिपाही पूरन कोली नामक युवक के साथ हुआ। विवाह के पश्चात वह पूरन के साथ झाँसी आ गई। और लक्ष्मीबाई की सेना मे शामिल हो गई। लक्ष्मीबाई ने उन्हे बन्दूक चलाना, तोप चलाना ओर युद्ध का प्रशिक्षण देकर अपनी दुर्गा सेना का सेनापति बनाया। उनकी हमशक्ल होने के कारण वह रानी लक्ष्मीबाई के घिर जाने पर स्वामिभक्ति का परिचय देते हुए रानी के वेश मे युद्ध करते हुए अंग्रेजों के हाथों पकड़ी गई और रानी लक्ष्मीबाई को भाग निकलने का अवसर मिल गया।

झलकारी बाई के पति पूरन किले की रक्षा करते हुए शहीद हो गए किन्तु शोक की स्थिति में भी धैर्य से काम लिया ओर लक्ष्मीबाई के वेश में झाँसी की सेना की कमान अपने हाथ में ले ली और ब्रिटिश सेना से युद्ध करते हुए शहीद हो गई।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. रणजीत सिंह का जन्म हुआ
   (अ) 1780 ई. में (ब) 1781 ई. में
   (स) 1782 ई. में (द) 1783 ई. में
2. पिण्डारियों का दमन किसने किया?
   (अ) लॉर्ड हार्डिग (ब) लॉर्ड हेस्टिंग्स
   (स) लॉर्ड बैंटिक (द) लॉर्ड डलहौजी
3. याण्डबू की सन्धि किसके बीच हुई?
   (अ) मराठे तथा कम्पनी (ब) निजाम तथा कम्पनी
   (स) बर्मा तथा कम्पनी (द) अंग्रेज तथा फ्रांसीसी
4. दूरन्द समझौता कब हुआ?
   (अ) 1890 ई. (ब) 1892 ई.
   (स) 1895 ई. (द) 1893 ई.

टिप्पणी

5. व्यपगत का सिद्धांत किसने लागू किया?
   (अ) लॉर्ड वारेन हेस्टिंग्ज (ब) लॉर्ड एलनबरो
   (स) लॉर्ड डलहौजी (द) लॉर्ड ऑकलॅण्ड
6. लक्ष्मीबाई के पिता का क्या नाम था?
   (अ) बाजीराव (ब) तात्या टोपे
   (स) मोरोपंत तांबे (द) नाना साहब
7. बेगम हजरत महल ने स्वतंत्रता संग्राम में कहाँ नेतृत्व किया?
   (अ) लखनऊ (ब) कानपुर
   (स) बरेली (द) दिल्ली
8. राजा कुँवरसिंह कहाँ के जमींदार थे?
   (अ) कानपुर (ब) जगदीशपुर
   (स) दिल्ली (द) रामपुर
9. 1857 ई. स्वतंत्रता संग्राम का तात्कालिक कारण था–
   (अ) लॉर्ड डलहौजी की हड़पनीति
   (ब) रानी लक्ष्मीबाई पर अत्याचार
   (स) चर्बी वाले कारतूस
   (द) सम्राट बहादुरशाह जफर के साथ अन्याय
10. अवंतीबाई कहाँ की रानी थी?
   (अ) झांसी (ब) ग्वालियर
   (स) रामगढ़ (द) गढ़ापुरवा

3.10 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर (Answers to Check Your Progress)

1. (अ)
2. (ब)
3. (स)
4. (द)
5. (स)
6. (स)

टिप्पणी

7. (अ)
8. (ब)
9. (स)
10. (स)

3.11 सारांश (Summary)

पानीपत के तृतीय युद्ध के बाद पंजाब पर सिखों का अधिकार हो गया। 12 वर्ष की अल्पायु में सुकरचकिया मिस्ल के सरदार एवं पिता महासिंह की मृत्यु के पश्चात् अपनी मां राजकौर के संरक्षण में रणजीतसिंह सरदार बने। अपने पिता से विरासत में नेतृत्व एवं प्रशासन की क्षमता मिली थी। जल्द ही उन्होंने आसपास के क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया। उनकी आक्रामक कार्यवाहियों से घबराकर कुछ सिख सरदार अंग्रेजों के पास गए। अंग्रेज रणजीतसिंह की सैनिक गतिविधियों को रोकना चाहते थे किन्तु उन्हें भय था कि कही रणजीतसिंह फ्रांसीसियों से मित्रता न कर लें। अतः मेटकाफ ने रणजीतसिंह से समझौता कर लिया। 1839 ई. में रणजीतिसिंह की मृत्यु के बाद सिखों को अंग्रेजों से संघर्ष करने पड़े। दो आंग्ल–सिख युद्ध के पश्चात अंग्रेजों ने पंजाब को हड़प लिया। 30 मार्च 1849 ई. को लॉर्ड डलहौजी ने पंजाब को कम्पनी के राज्य में मिलाने की घोषणा कर दी। लॉर्ड हेस्टिंग्स (1813–1823 ई.) ने अनेक युद्धों मे विजय प्राप्त कर कम्पनी की राजनीतिक सर्वश्रेष्ठता स्थापित की। 1816 ई. में उसने गोरखों का पराजित कर नेपाल के साथ संगौली सन्धि कर ली।

1813 ई. मे ही उसने पिण्डारियों का दमन प्रारंभ किया और 1824 ई. तक पिण्डारियों का नामोनिशान मिट गया।

मराठों की शक्ति को नष्ट कर उसने सिंधिया के साथ अर्जुनगाँव की सन्धि, भोसले के साथ नागपुर की सन्धि, पेशवा के साथ बसीन की सन्धि, होळकर के साथ मंदसौर की सन्धि कर उनके सारे प्रदेश छीन लिए और ब्रिटिश सर्वोच्चता की स्थापना की। इस प्रकार कमजोर संगठन, केन्द्रीय शक्ति की निर्बलता, एकता का अभाव, आर्थिक एवं सैनिक दुर्बलता मराठों के पतन का कारण बनी और मराठा साम्राज्य अंग्रेजों के समक्ष नहीं टिक सका। नेपाल के साथ झिंगौली की सन्धि के बाद, अंग्रेजों की नजर बर्मा पर थी। 1826 ई. दोनों के बीच याण्डबू की सन्धि हुई किन्तु 1837 ई. तक दोनों के बीच तनाव बढ़ा और द्वितीय एवं तृतीय आंग्ल–बर्मा युध्द हुए। 1885 ई. में लॉर्ड डफरिन ने सम्राट पर अधिकार कर बर्मा को हड़प लिया। 1836 ई. में लॉर्ड ऑकलैण्ड ने अफगानिस्तान के प्रति अदूरदर्शितापूर्ण नीति अपनाई एवं प्रथम अफगान युद्ध हुआ। 1878 ई. में गवर्नर जनरल लॉर्ड लिटन ने अफगानिस्तान के प्रति आक्रामक नीति अपनाई जिसके परिणामस्वरूप द्वितीय आंग्ल–अफगान युद्ध 1893 ई. में हुआ और दोनों पक्षों के बीच दूरन्द समझौता हो गया।

1848 ई. में लॉर्ड डलहौजी गवर्नर जनरल बना। उसकी विलय नीति ने झांसी, अवध, कानपुर आदि अनेकों राज्यों में अंग्रेजों के प्रति असंतोष उत्पन्न किया। भारतीय पहले से ही अंग्रेजों की लगान नीति, आर्थिक नीति, व्यापार नीति, बाढ़–नीति, धार्मिक नीति एवं सामाजिक अपमान से पीड़ित थे। इसी समय चर्बी वाले कारतूस के उपयोग करने के आदेश से सैनिकों का गुस्सा फूट पड़ा जो 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम की प्रेरणा बन गया। इस महान संग्राम में हिन्दू तथा मुसलमान, कृषक तथा शासक वर्गों ने एकजुट होकर आवाज उठाई। महिलाओं ने भी स्वतंत्रता संग्राम में महान रानी लक्ष्मीबाई, रानी अवन्तीबाई का योगदान दिया एवं झलकारीबाई ने अंग्रेजों के विरुद्ध लोहा लिया। इस क्रांति ने राष्ट्रीय भावना का विकास किया एवं राष्ट्रीय आन्दोलन को बढ़ावा दिया।

3.12 मुख्य शब्दावली (Key Terminology)

- **मिस्लः** पंजाब राज्य के विभिन्न मिस्ल जैसे सुकरचकिया, भंगी एवं फुल्किंया मिस्ल।
- **रेजीडेण्टः** देशी राज्यों के दरबार में कम्पनी द्वारा नियुक्त ब्रिटिश अधिकारी।
- **ब्रिटिश सार्वभौम शासनः** ब्रिटिश प्रभुसत्ता।
- **कम्पनीः** ईस्ट इण्डिया कम्पनी।
- **पिण्डारीः** गुप्त रूप से लूट करने वाला दल। सम्भवतः इस शब्द की उत्पत्ति 'पिण्ड' शराब से हुई।
- **सिंधिया, भोसले, होलकरः** ग्वालियर के सिंधिया, नागपुर के भोसले एवं इंदौर के होल्कर मराठा सरदार थे।

3.13 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास (Self Assessment Questions and Exercises)

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. रणजीतसिंह के प्रारंभिक जीवन का परिचय दीजिए।
2. लॉर्ड हेस्टिंग्स ने पिण्डारियों का दमन किस प्रकार किया?
3. बर्मा के सम्बन्ध में लॉर्ड डलहौजी की नीति समझाइए।
4. गंडमक की सन्धि के प्रावधान लिखिए।
5. दूरन्द समझौते पर प्रकाश डालिए।
6. हड़पनीति के परिणाम लिखिए।
7. मंगल पाण्डे, कुवर सिंह, नाना साहेब, तात्या टोपे के संक्षिप्त जीवन परिचय लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. महाराजा रणजितसिंह की उपलब्धियों का वर्णन किजिए।
2. महाराजा रणजीतसिंह की प्रशासन व्यवस्था समझाइए।
3. प्रथम सिख युद्ध के कारण एवं परिणाम लिखिए।
4. द्वितीय सिख युद्ध के कारण एवं परिणाम लिखिए।
5. आंग्ल–सिख सम्बन्धों पर प्रकाश डालिए।
6. लॉर्ड हेस्टिंग्ज के कार्यों एवं उपलब्धियों का वर्णन किजिए।
7. मराठों के पतन के कारण लिखिए।
8. आंग्ल–बर्मा युद्धों के कारण एवं परिणाम बताइये।
9. आंग्ल–अफगान सम्बन्धों को समझाइये।
10. लॉर्ड डलहौजी की हड़पनीति की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
11. 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम के कारण एवं परिणाम लिखिए।
12. रानी लक्ष्मीबाई, रानी अवंतीबाई एवं झलकारी बाई के स्वतंत्रता संग्राम मे योगदान पर प्रकाश डालिए।

3.14 सहायक पाठ्य सामग्री (Suggested Readings)

1. आधुनिक भारत का इतिहास– बिपिन चन्द्र –Orient Blackswan 2009
2. आधुनिक भारतीय ऐतिहासिक शासक– इला नागौरी– राजा पब्लिशिंग हाउस
3. भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद का उद्भव और विकास– बिपिन चन्द्र (1880–1907)

टिप्पणी

इकाई 4 भारतीय पुनर्जागरण, सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन– राजा राममोहन राय तथा ब्रह्म समाज, लॉर्ड विलियम बैंटिक, महिलाओं की स्थिति, पश्चिमी शिक्षा का विकास, भारत का आधुनिकीकरण, लॉर्ड मैकाले का षडयन्त्र और निष्यंदन का सिद्धांत

संरचना (Structure)

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 भारतीय पुनर्जागरण
 4.2.1 परिभाषाएँ
 4.2.2 पुनर्जागरण के विभिन्न चरण
 4.2.3 पुनर्जागरण की आवश्यकता क्यों?
 4.2.4 पुनर्जागरण के कारण
4.3 सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन– राजा राममोहन राय तथा ब्रह्म समाज
 4.3.1 आर्य समाज
 4.3.2 राजा राममोहन राय तथा ब्रह्म समाज
4.4 लॉर्ड विलियम बैंटिक
 4.4.1 लॉर्ड विलियम बैंटिक ने निम्न क्षेत्रों में सुधार
 4.4.2 लॉर्ड विलियम बैंटिक का मूल्यांकन
4.5 महिलाओं की स्थिती
 4.5.1 प्रथाएं
4.6 पश्चिमी शिक्षा का विकास
4.7 भारत का आधुनिकीकरण
4.8 लॉर्ड मैकाले का निष्यंदन का सिद्धांत
4.9 निष्यंदन का सिद्धांत
4.10 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
4.11 सारांश
4.12 मुख्य शब्दावली
4.13 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.14 सहायक पाठ्य सामग्री

4.0 परिचय (Introduction)

भारत में 19वीं शताब्दी में सामाजिक, धार्मिक क्षेत्रों में नवीन विचारधाराओं का सूत्रपात हुआ। इस नवीन चेतना ने समाज में सुधार को प्रोत्साहित किया। इस आंदोलन को ही पुनर्जागरण कहा जाता है। इस पुनर्जागरण में अनेक सुधारकों का योगदान रहा। राजा राममोहन राय को इस नवीन युग का प्रवर्तक कहा जाता

है। स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, एनी बेसेण्ट आदि विचारकों ने भी आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन आदि के माध्यम से समाज की कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया। उन्होंने महिलाओं की स्थिति को भी बेहतर बनाने के प्रयत्न किए। लॉर्ड मैकाले की अंग्रेजी शिक्षा योजना से भारत में पश्चिमी शिक्षा का विकास हुआ। रेल्वे के विकास के साथ भारत में अनेक परिवर्तन आए। आधुनिक उद्योगों की स्थापना हुई। बैंकों की स्थापना हुई। रेल्वे, उद्योगों और बैंक से आधुनिक भारत को प्रोत्साहन मिला।

4.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का उद्देश्य विद्यार्थियों को निम्नलिखित घटनाओं से अवगत कराना है।

- भारत में पुनर्जागरण
- ब्रह्म, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन, थियोसोफिकल सोसायटी, प्रार्थना समाज का योगदान बताया गया है।
- साथ ही पुनर्जागरण के प्रमुख विचारक रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, एनी बेसेण्ट, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का जीवन परिचय एवं विचारों को प्रस्तुत किया गया है।
- पुनर्जागरण, समाज सुधार आंदोलन एवं विचारकों ने प्राचीन काल से चली आ रही स्त्रियों की दशा में महत्वूपर्ण परिवर्तन किए।
- भारत में पश्चिमी शिक्षा का विकास और उसकी भारत के आधुनिकीकरण में भूमिका का विवरण दिया गया है।

4.2 भारतीय पुनर्जागरण (Indian Renaissance)

19वीं शताब्दी में भारत में नवीन विचार धाराओं का उदय हुआ जिससे सामाजिक, धार्मिक क्षेत्रों में सकारात्मक परिवर्तन हुए और प्रचलित कुरीतियों के विरुद्ध चेतना का संचार हुआ। इसी जागृति को हम पुनर्जागरण कहते हैं। इस आंदोलन ने साहित्यिक, कला और संस्कृति पर भी प्रभाव डाला।

स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, राजा राममोहन राय आदि विचारकों ने कुप्रथाओं एवं अन्धविश्वासों के विरूद्ध जनता को जागरूक किया। पाश्चात्य संस्कृति के अन्धानुकरण से युवाओं को रोका और भारतीय संस्कृति के गौरव को पहचानने एवं उसकी रक्षा करने के लिए प्रेरित किया।

4.2.1 परिभाषाएँ (Definitions)

1. ब्रजेन्द्र प्रताप गौतम, ''पुनर्जागरण किसी भी देश की विकास की अवस्था में एक दीर्घकाल के पश्चात् फिर उन्नति की ओर बढ़ने की अवस्था का नाम है।''

2. ''पुनर्जागरण से तात्पर्य होगा प्राचीनता पर नवीनता की विजय–स्थापना, अर्थात् किसी राष्ट्र की विकासशील अवस्था में दीर्घकाल के पश्चात् फिर उन्नति की ओर अग्रसर होना ही पुनर्जागरण कहलाता है।''

4.2.2 पुनर्जागरण के विभिन्न चरण (Various Stages of Renaissance)

प्रथम चरण

इसमें भारतीय समाज में छुआछूत, अनेकता, वर्ग–भेद के विरुद्ध जैन धर्म एवं बौद्ध धर्म का उदय हुआ। महावीर स्वामी एवं महात्मा बुद्ध ने सत्य, अहिंसा और पवित्रता का पाठ पढ़ाया। अनेक स्तूप, मठ और सहित्य का विकास हुआ। इन धर्मों से प्रभावित होकर अनेक शक्तिशाली सम्राट इनके अनुयायी हो गए।

द्वितीय चरण– इसका क्षेत्र व्यापक था। गुप्त काल, जिसे भारत का स्वर्ण युग भी कहा जाता है इस चरण का काल है इस समय महाकाव्य, स्मृतियाँ, उपनिषदों पुराणों की रचना हुई। ब्राह्मण धर्म की पुनर्स्थापना हुई। त्रिदेव एवं अवतारवाद के सिद्धांत को फिर से स्थापित किया गया। भारत के सांस्कृतिक सम्बन्ध जावा, सुमात्रा, चम्पा, मलय, चीन के साथ स्थापित हुए। पाटलिपुत्र, उज्जैन, सारनाथ शिक्षा के केन्द्र बने। साहित्य के साथ स्थापत्य कला का भी विकास हुआ।

तृतीय चरण– सातवीं एवं आठवीं शताब्दी में दक्षिण भारत में जाति प्रथा का विरोध एवं समानता स्थापित करने के उद्देश्य से पुनर्जागरण आरभ हुआ। निम्बार्क, माधवाचार्य, वल्लभाचार्य एवं चैतन्य महाप्रभु ने जनसाधारण को जागरूक किया। इस्लाम जगत में सूफी सन्तों का योगदान रहा। धीरे–धीरे, यह आंदोलन उत्तरी भारत में भी पहुँचा। रामानन्द, कबीर, नानक, तुलसीदास, रहीम, मीराबाई ने अन्धविश्वासों एवं रूढ़ियों को खत्म करने के प्रयास किए। उन्होंने साहित्य का सहारा लिया। साहित्य के साथ इस समय चित्रकला एवं संगीत का विकास हुआ। अकबर की धार्मिक सहिष्णुता की नीति ने पुनर्जागरण को प्रोत्साहित किया।

चतुर्थ चरण– ब्रिटिश शासनकाल में भारतीयों के शोषण की सीमा न रही। इसका प्रभाव देश के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों पर पड़ा। भारत पतन की ओर जाने लगा। ऐसे समय राजा राममोहन राय, विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द और अनेक विचारकों ने भारत की संस्कृति की पहचान जनता को अवगत कराने का प्रयास किया एवं राष्ट्रीय गौरव की रक्षा की।

मुस्लिम पुनर्जागरण (Muslim Renaissance)

मुस्लिम समाज में अनेक कुरीतियाँ मौजूद थी। 12वीं शताब्दी में सुधार आंदोलन का प्रभाव मुस्लिम समाज पर भी हुआ। मुस्लिम धर्म सुधार आंदोलन में प्रमुख सुधारक उत्तरप्रदेश में बरेली के सर सैय्यद अहमद खाँ और बंगाल के हाजी शरीयतुल्ला के नेतृत्व की महत्वपूर्ण भूमिका थी। उन्होंने स्वयं को इस्लाम धर्म में सुधार करने एवं उसे मजबूत बनाने के लिए समर्पित कर दिया था। उन्होंने इस्लामिक शिक्षा को प्रोत्साहन दिया। पश्चिमी विचारों के प्रभाव और आधुनिक शिक्षा के कारण भी यह

पुनर्जागरण संभव हो सका। मुस्लिम सुधारकों के प्रयासों के मुस्लिम समाज ने पुराने सदियों के स्थान पर नवीन परिवर्तनों को स्थान दिया। प्रारंभ में रूढ़ीवादियों ने आंदोलनों का विरोध किया किन्तु अंततः सुधारकों के प्रयत्न सफल हुए। कराजी एवं बहावी' आंदोलन इन प्रयत्नों का ही उदाहरण थे।

बहावी आंदोलन –

इसे वलीउल्लाह आंदोलन के नाम से भी जाना जाता है, जिसकी शुरूआत पश्चिमी प्रभावों के प्रतिक्रिया के रूप में हुई थी। यह आंदोलन कुरान और हदीस की शिक्षाओं पर आधारित था। यह आंदोलन शाह वलीउल्लाह जिन्हें प्रथम भारतीय मुस्लिम नेता भी माना जाता है की शिक्षाओं से प्रेरित था। शाह वली उल्लाह के विचारों से प्रभावित होकर सैय्यद अहमद बदुलवी ने (1786–1831) स्वयं को इस आंदोलन से जोड़ा और मुस्लिम समाज की उन्नति का प्रयास किया। बंगाल में किसानों द्वारा इस आंदोलन में सक्रिय रूप से हिस्सा लेने के कारण यह सुधार आंदोलन ब्रिटिश शासन के विरुध्द क्रांति के रूप में बदल कर राजनीतिक हो गया। जिस कारण इसका ब्रिटिश सरकार द्वारा दमन कर दिया गया।

4.2.3 पुनर्जागरण की आवश्यकता क्यों? (Why Renaissance was Needed?)

भारत में निवास करने वाले हिन्दू एवं मुस्लिम समाज अनेक रूढ़ियों के प्रभाव में आ चुके थे। इन्हीं निम्नलिखित अंधविश्वासों को दूर करने के लिए भारत में पुनर्जागरण की आवश्यकता थी–

1. हिन्दु समाज में बाल–विवाह का प्रचलन था। लड़कियों का विवाह 5–6 वर्ष तथा लड़कों का 8–10 वर्ष की उम्र में कर दिया जाता था।
2. बहु विवाह सामान्य बात थी। एक पुरुष कई स्त्रियों से विवाह कर सकता था।
3. पुरुष सन्तान अनिवार्य माना जाता था ताकि वो अपने पितरों का श्राद्ध कर सकें।
4. अनमेल विवाह से नारी पीड़ित थी। बालिकाओं का विवाह कम उम्र में ही प्रौढ़ पुरुष से कर दिया जाता था। जब तक बालिका की उम्र समझने वाली होती तब तक उनके पति का देहान्त हो जाता था। उसे जीवन भर विधवा का जीवन व्यतीत करना पड़ता था जो किसी श्राप से कम नहीं होता था।
5. विधवा पुनर्विवाह शास्त्रों के विरुद्ध माना जाता था।
6. सबसे कठोर प्रथा सती–प्रथा थी। विधवा स्त्री को उसके पति की चिता के साथ जलने को मजबूर किया जाता था। मुगल सम्राट अक़बर इस प्रथा को समाप्त करना चाहते थे, किन्तु सफल न हो सके। इस प्रथा को समाप्त करने का श्रेय राजा राममोहन राय को जाता है। उन्होंने गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बैंटिक के सहयोग से 1829 ई. में इस प्रथा को समाप्त कर दिया।

7. बाल हत्या जैसा अमानुषिक कृत्य भी प्रचलन में था। कन्या का जन्म अशुभ माना जाता था अतः उन्हें मार दिया जाता था।
8. देवदासी प्रथा प्रचलित थी। कन्याओं को मंदिरों को दे दिया जाता था जहाँ उनका पालन–पोषण होता था और नृत्य की शिक्षा दी जाती थी। बड़े होकर वह मंदिर की ही संपत्ति हो जाती थी।
9. परदा प्रथा मुस्लिम तथा हिन्दू दोनों समाज में प्रचलन में थी।
10. वर्ण–व्यवस्था जटिल हो चुकी थी। प्रत्येक वर्ग की अनेक जातियाँ थी। ऊँच–नीच का भेदभाव था। इसका प्रभाव खान–पान, विवाह आदि संस्कारों में देखने मिलता था। ऊँची जाति, निम्न जाति से छुआछूत का भाव रखती थी। शूद्रों के सामने पड़ जाने पर पवित्र होने के लिए स्नान आदि कार्य करने पड़ते थे। शूद्रों को अपमानित होना पड़ता था। उन्हें मंदिर, कुएं एवं मुख्य मार्गों पर जाने की मनाही थी।
11. हिन्दुओं के लिए समुद्र यात्रा वर्जित थी। इसे वरुण देवता का अपमान समझा जाता था।
12. भारतीय समाज में अंधविश्वासों की भरमार थी। जादू–टोने, कवच, ताबीजों, झाड़–फूंक आदि क्रियाओं को लोग दुख, बीमारी का हल समझते थे।

    ईसाई मिशनरियाँ इसका फायदा उठाकर हिन्दू धर्म की आलोचना कर रहे थे ताकि वे धर्म प्रचार कर सकें। इन्हीं सब परिस्थितियों के फलस्वरूप पुनर्जागरण की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। समाज सुधारक भारत के गौरव को पुनः पाना चाहते थे और पतन की ओर जाने से रोकना चाहते हैं, इसलिए उन्होंने अपने विचारों से जनता को जागरूक करने का प्रयास किया।

4.2.4 पुनर्जागरण के कारण (Reasons for Renaissance)

भारतीय समाज में व्याप्त बुराइयों जैसे सती प्रथा, जाति प्रथा, बाल–हत्या, बहु–विवाह, मद्यपान, कुरीतियों से देश पतन की ओर जा रहा था। समाज–सुधारकों के प्रयास से पुनर्जागरण आया। पुनर्जागरण आने के कारण थे–

1. **समाज–सुधारकों का प्रयास**– राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण परमहंस, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के योगदान उल्लेखनीय है। इन विचारकों के प्रयासों के बिना इतना महत्वपूर्ण आंदोलन होना मुश्किल था।
2. **पाश्चात्य संपर्क**– भारत में अंग्रेजों के शासन होने से भारतीय उनके संपर्क में आए। अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से उन्हें विदेशी साहित्य पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ। नए विचारों के संपर्क से उनमें नवीन चेतना का विकास हुआ।

टिप्पणी

3. **यातायात तथा संचार के साधन**— ब्रिटिश शासन में रेल, तार, डाक, प्रेस का विकास हुआ। प्रेस के विकास से अनेक पत्र–पत्रिकाएँ आसानी से प्राप्त होने लगी। इन पत्रिकाओं में प्रचलित कुरीतियों के विरुद्ध लिखा जाने लगा जिससे लोग जागरूक हुए। यातायात की सुविधा से लोगों का सम्पर्क बढ़ा और उन्नत विचारों का प्रसार हुआ।
4. **धर्म परिवर्तन**— ईसाई मिशनरियों से प्रभावित होकर तथा हिन्दू धर्म के कर्मकाण्डों से परेशान होकर लोग धर्म परिवर्तन कर रहे थे। इनकी संख्या देखकर समाज–सुधारक चिंतित होने लगे। उन्होंने लोगों को भारत के गौरव एवं अपने धर्म की श्रेष्ठता स्थापित करने के अथक प्रयास किए।

इस प्रकार शिक्षा तथा प्रेस का विकास, पाश्चात्य संपर्क एवं सुधारकों के योगदान से भारतीय पुनर्जागरण युग का आगमन हुआ।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर— का जन्म 26 सितम्बर, 1820 में मेदिनीपूर जिला पश्चिम बंगाल में हुआ। वे भारत के प्रसिध्द समाज सुधारक, शिक्षा शास्त्री एवं स्वतंत्रता सेनानी थे। स्त्री शिक्षा और विधवा विवाह के प्रयासों के लिए उनका योगदान अविस्मरणीय है। उन्होंने अनेक महिला महाविद्यालयों की स्थापना की, इनमें 'मेट्रोपोलिटन विद्यालय' प्रमुख है। 1848 ई. में उन्होंने 'वेताल पंचविशीत' का बंगला भाषा में प्रकाशन किया। उन्होंने अंग्रेजी भाषा के साथ संस्कृत भाषा के अध्ययन को भी महत्वपूर्ण बताया। साथ ही नैतिक मूल्यों एवं भारतीय परंपरा श्रेष्ठता पर भी जोर दिया। संस्कृत भाषा और दर्शन के असीम ज्ञान के कारण संस्कृत कॉलेज से उन्हें विद्यार्थी जीवन में ही विद्यासागर की उपाधि प्राप्त हुई।

विधवाओं की स्थिति सुधारने के लिए उन्होंने लोकमत तैयार किया और 1856 ई में विधवा पुनर्विवाह कानून पारित होने तक प्रयासरत रहे।

बांग्ला भाषा के गद्य को सरल बनाने के लिए उन्होंने बांग्ला लिपि की वर्णमाला को भी सरल बनाया। बांग्ला भाषा पढ़ाने के लिए उन्होंने सैकडों विद्यालय स्थापित किए और रात्रि पाठशालों की स्थापना की। उन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना और संस्कृत हिन्दी और अंग्रेजी ग्रन्थों का अनुवाद बांग्ला भाषा में किया।

4.3 सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन— राजा राममोहन राय तथा ब्रह्म समाज (Social Religious Movement –Raja Rammohan Roy and Brahmo Samaj)

19वीं शताब्दी में भारतीय पुनर्जागरण लाने के निम्नलिखित संस्थाओं का योगदान रहा—

1. आर्य समाज
2. ब्रह्म समाज

टिप्पणी

3. रामकृष्ण मिशन
4. प्रार्थना समाज
5. थियोसोफिकल सोसाइटी

4.3.1 आर्य समाज (Arya Samaj)

आर्य समाज की स्थापना स्वामी दयानन्द सरस्वती ने की। स्वामी दयानन्द संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड पण्डित थे। उन्होंने हिन्दू धर्म ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया था। भारत की सामाजिक–धार्मिक स्थिति में सुधार लाने की दृष्टि से उन्होंने 1875 ई. में आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज का प्रचार का माध्यम हिन्दी भाषा था। अतः यह जनसाधारण में अत्यन्त लोकप्रिय रहा।

स्वामी दयानन्द सरस्वती– जीवन परिचय

स्वामी दयानन्द का जन्म 1824 में गुजरात के काठियावाड़ के टंकारा नामक शहर में हुआ। उनके पिता अम्बाशंकर सम्पन्न ब्राह्मण थे। उन्होंने अपने पुत्र को भी धार्मिक शिक्षा दी। 14 वर्ष की उम्र तक स्वामी जी ने वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। 1845 ई. में उन्होंने घर त्याग दिया और विभिन्न शहरों में भ्रमण किया। उनकी भेंट अनेक साधुओं से हुई। स्वामी परमानन्द से प्रभावित होकर वे उनके शिष्य बन गए। उनके बचपन का नाम मूलशंकर था। स्वामी परमानन्द सरस्वती सम्प्रदाय के थे। उन्होंने मूलशंकर के बदले उन्हें दयानन्द सरस्वती नाम दे दिया।

स्वामी जी दीक्षा प्राप्त करने के बाद वर्षों तक हिमालय, विन्ध्य, नर्मदा, गंगा–यमुना के प्रदेशों में साधु–सन्तों से भेंट करते रहे। उन्होंने मथुरा के ब्राह्मण बिरजानन्द से पाणिनी के व्याकरण का ज्ञान प्राप्त किया। ढाई वर्ष तक स्वामी जी शिष्य के रूप में उनके यहाँ पाणिनी का महाभाष्य, वेदान्त, सूत्र एवं अन्य धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन करते रहे। 1863 में उन्होंने गुरु से विदा तथा वेदान्त के प्रचार का उपदेश लेकर पुनः भ्रमण की ओर अग्रसर हुए।

1872 ई. में वे कलकत्ता गए और चार महीने रहे। उन्होंने संस्कृत भाषा त्याग कर हिन्दी भाषा में जनसाधारण से बातचीत प्रारंभ की। वे प्रभावशाली वक्ता थे। जनभाषा में भाषण देने से वे अत्यन्त लोकप्रिय भी हो गए।

स्वामी दयानन्द निरन्तर कार्य करते रहे। 1874 में उन्होंने अपनी रचना 'सत्यार्थ प्रकाश' लिखी। उसी साल वे बम्बई में प्रार्थना समाज के सम्पर्क में आए। वे ब्रह्म समाज के कार्यकर्ता केशवचन्द्र सेन से पहले ही कलकत्ता में मिल चुके थे।

1875 ई. में उन्होंने आर्य समाज की स्थापना की। इसकी प्रेरणा उन्हें प्रार्थना समाज तथा ब्रह्म समाज से मिली। 1881 ई. में उन्होंने थियोसोफिकल सोसायटी का सहयोग किया। 1882 में उन्होंने गौरक्षा के लिए कार्य किए। 30 अक्टूबर 1883 को 59 वर्ष की आयु में उनका देहान्त हो गया।

स्वामी जी ने 'वेदों की ओर लौटो' (Back to the Veda) और 'भारत भारतीयों के लिए' का नारा दिया। उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश, वेद भाष्य, ऋग्वेदादि

भाष्य भूमिका, गौकरुणा निधि पुस्तकों की रचना की। सत्यार्थ प्रकाश में आर्य समाज के सिद्धांतों की चर्चा की गयी है।

आर्य समाज के सिद्धांत

1. वेदों में सम्पूर्ण ज्ञान है, अतः उनका अध्ययन करना चाहिए।
2. समस्त ज्ञान, सत्य, विद्या ईश्वर में विद्यमान है।
3. सत्यता का पालन तथा असत्यता का त्याग।
4. शिक्षा को महत्व और वृद्धि।
5. सबसे प्रेमपूर्वक, धर्मानुसार व्यवहार।
6. सबकी उन्नति अपनी उन्नति समझना चाहिए।
7. जाति–प्रथा तथा भेदभाव मिटाना चाहिए।
8. बाल–विवाह, बहु–विवाह, पर्दा–प्रथा आदि कुरीतियों का समाज को बहिष्कार करना चाहिए।
9. स्त्री शिक्षा को महत्व देना।
10. मूर्ति पूजा का विरोध।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के धार्मिक विचार

1. वेद ही समस्त ज्ञान का स्रोत है।
2. ईश्वर निराकार, निर्गुण, सर्वशक्तिमान एवं दयालु है। सभी प्रकार के ज्ञान के मूल में परमेश्वर है।
3. बहुदेववाद का खण्डन एवं एकेश्वरवाद में विश्वास।
4. कर्म, पुनर्जन्म एवं मोक्ष में विश्वास। जीवन – मृत्यु के चक्र से मुक्ति ही मोक्ष है।
5. ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना एवं उपासना से ही मोक्ष प्राप्त होता है।
6. वैदिक यज्ञ एवं हवन आवश्यक। इससे वायु एवं वनस्पतियाँ शुद्ध होती हैं।
7. मूर्ति पूजा का विरोध। वे इसे हिन्दुओं के पतन का कारण मानते थे। उन्होंने पौराणिक धर्म, रीति–रिवाजों, श्राद्ध एवं तीर्थ यात्रा का विरोध किया।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के सामाजिक विचार

1. प्रत्येक व्यक्ति को समाज की उन्नति के लिए प्रयास करना चाहिए।
2. जाति व्यवस्था का घोर विरोध। जन्म से कोई मनुष्य अछूत नहीं होता।
3. स्त्री स्वतंत्रता एवं शिक्षा को प्रबल समर्थन। बाल–विवाह, बहु–विवाह और दहेज प्रथा का घोर विरोध किया।

सामाजिक कार्य

1. शुद्धि आंदोलन का प्रारंभ। जिन्होंने हिन्दू धर्म का त्याग कर अन्य धर्म अंगीकार कर लिया था, उन्हें पुनः हिन्दू धर्म में वापस स्वीकार करना।
2. संस्कृत पाठशालाओं की स्थापना। वेदों के अध्ययन एवं स्त्री शिक्षा पर विशेष बल। गुरुकुल, कन्या गुरुकुल तथा आंग्ल–वैदिक स्कूल–कॉलेज की स्थापना।
3. भारतीयों में आत्म सम्मान एवं आत्म गौरव जागृत किया।
4. स्वामी जी के बारे में लिखा गया है, ''राजनीतिक स्वाधीनता दयानन्द के प्रमुख उद्देश्यों में से एक थी। वास्तव में 'स्वराज' शब्द का प्रयोग करने वाले वे सबसे पहले व्यक्ति थे। उन्होंने ही सर्वप्रथम जनता का आव्हान किया कि वे भारत में बनी स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करें। वही सबसे पहले व्यक्ति थे, जिन्होनें हिन्दी भाषा को भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में मान्य किया।''

   आर्य समाज भारत में सामाजिक, धार्मिक, शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान दिए। स्वामी जी की प्रशंसा करते हुए फ्रेंच लेखक रोम्यां रोलां ने लिखा है कि, ''ऋषि दयानन्द ने भारत के शक्ति–शून्य शरीर में अपनी दुर्धर्ष शक्ति, अविचलता तथा सिंह पराक्रम फूँक दिया है।''

देवेन्द्रनाथ टैगोर–(1817 ई.–1905 ई.) (Devendranath Tagore (1817-1905 AD))

देवेन्द्रनाथ ठाकुर हिन्दू दार्शनिक ब्रह्मसमाजी एवं धर्मसुधारक थे। उनका जन्म 15 मई 1817, कोलकाता में हुआ था। इनकी शिक्षा–दीक्षा हिन्दू कॉलेज में हुई। इनका पालन–पोषण अपार वैभव में हुआ।

22 वर्ष की उम्र में इन्होंने 'तत्वबोधिनी सभा की स्थापना की। इस सभा की स्थापना का मुख्य उद्देश्य लोगों को 'ब्राह्मधर्म' का पाठ पढ़ाना था। इस सभा का कार्य लोगों को शास्त्र ज्ञान से परिचित कराना था। जल्दी ही यह सभा लोकप्रिय हो गई और अनेक प्रभावशाली हिंदू इसके सदस्य बन गए। सप्ताह में एक बार सभी सदस्य बैठक करते थे एवं प्रबुद्धजन के प्रवचन का लाभ लेते थे। सन 1742 में देवेन्द्रनाथ ब्रह्मसमाज से जुड़ गए। उनके प्रवेश से ब्रह्मसमाज को नया जीवन मिला जो राजा राममोहन राय के इंग्लैण्ड चले जाने से शिथिल पड़ गया था। अब पुनः ब्रह्मसमाज के सदस्यों की संख्या बढ़ने लगी और इसकी अनेक शाखाएँ खुल गईं। युवा वर्ग भी इसका हिस्सा बन गया। 1843 में उन्होने 'तत्वबोधिनी पत्रिका' प्रकाशित की। इस पत्रिका में मातृभाषा के विकास एवं धर्मशास्त्र तथा विज्ञान के अध्ययन की आवश्यकता पर जोर दिया। देवेन्द्रनाथ टैगोर ने तत्कालीन प्रचलित सामाजिक अंधविश्वासों एवं कुरीतियों का विरोध किया एवं इसाई मिशनरियों द्वारा किये जानेवाले धर्मपरिवर्तन के विरुद्ध ब्रह्मज्ञान की पुनःस्थापना की।

4.3.2 राजा राममोहन राय तथा ब्रह्म समाज (Raja Rammohan Roy – Brahmo Samaj)

ब्रह्म समाज की स्थापना 1828 ई. में राजा राममोहन राय ने की।

धार्मिक सिद्धांत

1. ईश्वर एक है।
2. मूर्तिपूजा का विरोध।
3 ईश्वर सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी और सृष्टि का पालनकर्ता है।
4. आत्मा अमर है।
5. सभी ईश्वर की उपासना कर सकते हैं क्योंकि ईश्वर की दृष्टि में सभी समान हैं।
6. अवतारवाद का विरोध।
7. सभी धर्मों को समान सम्मान दिया जाना चाहिए।
8. पाप का प्रायश्चित एवं परित्याग ही मोक्ष का साधन है।
9. ईश्वर हमारी प्रार्थना सुनता एवं स्वीकार करता है। अतः उस पर विश्वास रखना चाहिए।

सामाजिक सिद्धांत

1. विश्व बंधुत्व
2. अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, जातिभेद, छुआछूत का विरोध
3. बाल विवाह, सती प्रथा भ्रूण हत्या का विरोध, विधवा विवाह का समर्थन

राजा राममोहन राय का जीवन परिचय

राजा राममोहन राय को भारतीय इतिहास में आधुनिक युग का अग्रदूत माना जाता है। उनका जन्म 1772 में हुआ, उनके पिता रमाकांत एवं माता नारिणी देवी बंगाल के प्रतिष्ठित ब्राह्मण थे। प्रारम्भिक शिक्षा पारसी तथा अरबी में हुई। उन्होंने वाराणसी में संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त किया फिर हिन्दू ग्रंथों का अध्ययन किया। फिर उन्होंने ग्रीक भाषा का भी ज्ञान प्राप्त किया। उन्हे ईस्ट इंडिया की नौकरी प्राप्त हुई किन्तु 1814 ई. में ही उन्होंने नौकरी से इस्तीफा दे दिया। सौभाग्यवश उनके पास पर्याप्त धन था। अपना जीवन समाज सुधार को समर्पीत कर दिया। उन्होंने ब्रह्म समाज की स्थापना की। मुगल सम्राट ने 1820 में उन्हें राजा की उपाधि प्रदान की। तथा प्रतिनिधी बनाकर ब्रिटेन भेजा। वे फ्रांस भी गए, सभी जगह सम्मानित किया गया। ब्रिटेन के ही ब्रिस्टल नगर में उनकी मृत्यु हो गई। वहां उनकी समाधि अभी भी विद्यमान है।

राजा राममोहन राय के सामाजिक कार्य

1. सती प्रथा का विरोध– इस प्रथा के अनुसार किसी स्त्री के पति की मृत्यु पश्चात् उसे पति की चिता पर जला दिया जाता था। इसको समाप्त करने में राजा राममोहन राय का साहसी कदम था। इस प्रथा के विरोध में जनमत संग्रह किया। उन्हें लोगों के ताने सुनने पड़े। कट्टरवादियों से उन्हे अपमान मिला किन्तु वे 1829 ई में लॉर्ड विलियम बैंटिक की सहायता से इसको समाप्त करने में सफल हो गये।

2. बहु–विवाह का विरोध– बंगाल के कुलीन ब्राह्मणों में बहु पत्नी विवाह प्रथा प्रचलित थी। इस अन्यायपूर्ण प्रथा के विरोध में वे लगातार कार्य करते रहे स्वतंत्रता के बाद इस प्रथा को समाप्त कर दिया।

3. बाल विवाह का विरोध– किसी भी 10–11 वर्ष की कन्या का विवाह अधेड़ पुरुष के साथ कर दिया जाता था ताकि वह कन्या माता पिता पर भार न हो। इस अनैतिक प्रथा के विरोध मे उन्होंने आवाज उठाई। कालान्तर में शारदा कानून पारित कर इस प्रथा पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया।

4. जाति प्रथा का विरोध– उन्होंने जाति प्रथा का विरोध किया समानता एवं मानवता पर जोर दिया।

5. उन्होंने विधवा विवाह का समर्थन किया।

6. वे पाश्चात्य शिक्षा के समर्थक थे। उनका मानना था कि पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान द्वारा ही भारत का कल्याण हो सकता था। वे अंग्रेजी शिक्षा के भी समर्थक थे। वे चाहते थे कि भारत में ज्ञान विज्ञान की सभी शाखाओं में अध्ययन और अध्यापन प्रारंभ हो।

7. वे उदारवादी विचारधारा से प्रभावित थे। उन्होंने प्रशासन में सुधार के प्रस्ताव ब्रिटिश संसद की एक प्रवर समिती के समक्ष रखे। ऐसा साहसिक कार्य करने वाले वह पहले भारतीय थे।

उन्होंने संवाद कौमुदी नामक बंगाली पत्रिका का प्रकाशन किया। मिरातुल अखबार का भी प्रकाशन किया। उन्होंने वेदान्त कालेज, हिन्दु कॉलेज और इंग्लिश स्कूल की स्थापना की। 1833 में इंग्लैण्ड के ब्रिस्टल नगर में उनकी मृत्यु हो गई। मुगल सम्राट ने उन्हें राजा की उपाधि से विभूषित किया था।

फरायजी आंदोलन–

हाजी शरीयतुल्ला ने बंगाल में फरारी आंदोलन की शुरूआत की जिसने कृषकों के हित में कार्य किए। उन्होंने मुस्लिम समाज में प्रचलित जाति व्यवस्था का तीव्र विरोध किया था। 19वीं सदी तक भी अधिकांश मुस्लिमों ने स्वयं को अंग्रेजी शिक्षा से दूर रखा था। अंग्रेजी प्राप्त करने वाले उंगलियों पर गिने जा सकते थे। इस कारण हाजी शरीयतुल्ला ने ब्रिटिश शासकों की सहायता से मुस्लिम समाज में सुधार लाने का प्रयास किया। उन्होंने पर्दा प्रथा तथा बहुविवाह का विरोध किया तथा आधुनिक शिक्षा के प्रसार के लिए आंदोलन चलाए।

4.4 लॉर्ड विलियम बैंटिक (Lord William Bentinck)

टिप्पणी

लॉर्ड विलियम बैंटिक 1828 ई. में भारत में गवर्नर जनरल पद पर नियुक्त होकर आए। उन्होंने मद्रास के गवर्नर के रूप में भी कार्य किया था। अतः उन्हें भारत के वातावरण का अनुभव था। वे सुधारवादी थे और कम्पनी के हित से साथ भारत के हित के भी पक्षपाती थे। पी.ई. राबर्ट्स के शब्दों में, ''निःसन्देह वह प्रथम ऐसा गवर्नर जनरल था जिसने खुलकर इस सिद्धांत पर कार्य किया कि प्रजा का हित एवं कल्याण देखना ही ब्रिटिश शासन का प्रमुख एवं आवश्यक कर्तव्य है।''

4.4.1 लॉर्ड विलियम बैंटिक ने निम्न क्षेत्रों में सुधार (Reforms of Lord William Bentinck)

1. आर्थिक क्षेत्र
2. प्रशासनिक क्षेत्र
3. सामाजिक क्षेत्र
4. शैक्षणिक क्षेत्र
5. सार्वजनिक कार्य
6. वैधानिक क्षेत्र

1. आर्थिक क्षेत्र में सुधार– कम्पनी को साम्राज्यवादी नीति की पूर्ति के लिए अनेकों युद्ध लड़ने पड़े जिसके परिणामस्वरूप उन्हें घाटे की स्थिति का सामना करना पड़ रहा था। कम्पनी की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए लॉर्ड विलियम बैंटिक ने निम्नलिखित सुधार किए–

(i) सैनिकों की संख्या कम कर दी गई।

(ii) कलकत्ता से 400 मील के भीतर रहने वाले सैनिकों एवं असैनिक कर्मचारियों को आधा भत्ता दिया जाने लगा। इससे कम्पनी को दो हजार पौण्ड वार्षिक राशि की बचत हुई।

(iii) भारतीयों को निम्न प्रशासनिक पदों पर नियुक्त किया गया। अंग्रेजों की तुलना में भारतीय कम वेतन लेते थे। इससे भी कम्पनी को बचत हुई।

(iv) दौरा तथा अपील अदालतें, जिन्हें लॉर्ड कॉर्नवॉलिस ने स्थापित की थी, समाप्त कर दी गई। इससे कम्पनी के व्यय में कमी आई।

(v) कर मुक्त भूमि से कम्पनी को राजस्व प्राप्त नहीं होता था। विलियम बैंटिक ने ऐसी भूमि को जब्त कर लिया। इस कार्य से कम्पनी को तीस लाख की आय प्राप्त हुई।

(vi) भ्रष्टाचार के चलते मैसूर, कुर्ता, कछाड़, जयन्तियाँ आदि अनेक छोटे राज्यों एवं रियासतों को कम्पनी में मिला लिया गया। इन राज्यों की सम्पत्ति से कम्पनी की आय में वृद्धि हुई।

(vii) कम्पनी की आय के लिए लॉर्ड विलियम बैंटिक ने सिंध तथा पंजाब में रणजीत सिंह के स्वतंत्र व्यापार के लिए संधियाँ कीं। सिंध तथा सतलज नदियों से कम्पनी को अबाध व्यापार की सुविधा प्राप्त हुई।

(viii) भू–राजस्व व्यवस्था में सुधार किया गया। इसके अनुसारः–

(ix) बंगाल में जो राजस्व वसूल नहीं किया गया था, उसे लिया गया।

(x) कर–मुक्त भूमि, जो किसानों को हिन्दू तथा मुसलमान शासकों से प्राप्त हुई थी, उस पर कर लगाया गया।

(xi) मद्रास में रैयतवारी की स्थापना की।

(xii) आगरा में तीस वर्षीय प्रबन्ध किया गया।

इस प्रकार लॉर्ड विलियम बैंटिक की आय और व्यय की नीति से कम्पनी को काफी धनराशि प्राप्त हुई।

2. प्रशासनिक क्षेत्र में सुधार– भारत के शिक्षित वर्ग को भी अयोग्य समझा जाता था। अतः शिक्षित वर्ग में असंतोष था। लॉर्ड बैंटिक ने उन्हें निम्न प्रशासनिक पदों पर नियुक्त कर उनके असंतोष को दूर किया।

(i) अंग्रेजों की अपेक्षा भारतीय कम वेतन पर कार्य करते थे, इससे कम्पनी का प्रशासनिक व्यय भी कम हुआ।

(ii) भू–राजस्व व्यवस्था में सुधार किए। राजस्व–मुक्त भूमि का लेखा प्राप्त कर उस भूमि पर कर लगाया गया। जो किसान अपनी भूमि पर दावा प्रस्तुत नहीं कर सके उसे जब्त कर लिया गया।

3. सामाजिक क्षेत्र में सुधार– लॉर्ड विलियम बैंटिक ने भारतीयों के हित में निम्नलिखित सुधार किए–

(i) सती प्रथा का निषेध– भारत में सती प्रथा का प्रचलन था। इस प्रथा के अनुसार हिन्दू स्त्री को अपने पति की चिता के साथ भस्म होना पड़ता था। समाज सुधारक इस प्रथा को समाप्त करना चाहते थे। इसमें उनका सहयोग राजा राममोहन राय ने किया। 1829 ई. में बैंटिक ने सती प्रथा को कानूनन निषेध घोषित कर दिया। इस प्रथा को जोर देने वाले व्यक्ति को मृत्यु दण्ड देने की व्यवस्था की गई।

(ii) ठगी प्रथा का दमन– भारत में ठगों का गिरोह यात्रियों के आंतक का कारण था। वे राहगीरों को धोखे से लूट लेते थे और कई बार उनकी हत्या तक कर देते थे। विलियम बैंटिक ने ठगों के दमन के कार्य में कर्नल स्लीमन का सहयोग लिया। कर्नल स्लीमन ने उन्हें बन्दी बनाया। उनके नेताओं को मृत्युदण्ड दिया गया। हज़ारों ने आत्मसमर्पण कर दिया।

(iii) भारत से नर–बलि प्रथा समाप्त करने के श्रेय बैंटिक को जाता है।

(iv) लॉर्ड विलियम बैंटिक ने बंगाल रेग्युलेशन एक्ट पारित कर बालिकाओं की हत्या को समाप्त किया।

(v) 1832 ई. में दास प्रथा को गैर कानूनी घोषित किया गया।

(vi) हिन्दू उत्तराधिकार नियम के अनुसार किसी अन्य धर्म को अपनाने पर व्यक्ति को उसकी पैतृक सम्पत्ति से वंचित कर दिया जाता था। लॉर्ड बैंटिक ने इस नियम को खत्म कर घोषणा की कि धर्म परिवर्तन पर भी पैतृक सम्पत्ति पर उस व्यक्ति का अधिकार होगा। इस नियम से ईसाई धर्म के प्रचार में सहयोग मिला।

4. शैक्षणिक क्षेत्र में सुधार

(i) लॉर्ड मैकाले की शिक्षा व्यवस्था– सरकार ने लॉर्ड मैकाले की अध्यक्षता में शिक्षा समिति गठित की। इस समिति ने शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी रखने की सिफारिश की। इस प्रकार भारत में अंग्रेजी शिक्षा प्रारंभ हुई। लॉर्ड विलियम बैंटिक ने सम्पूर्ण धनराशि शिक्षा पर खर्च करने का प्रस्ताव रखा।

(ii) 1835 ई. में ही कलकत्ता में मेडिकल कॉलेज की स्थापना हुई।

(iii) 1835 ई. में ही प्रेस पर से नियंत्रण हटा दिया गया।

5. सार्वजनिक निर्माण के कार्य

(i) लॉर्ड मिण्टो की सिंचाई योजना को विलियम बैंटिक ने आगे बढ़ाया।

(ii) रुड़की में सिविल इंजीनियरिंग कॉलेज की स्थापना की गयी। उत्तरी गंगा नहर योजना बनायी गयी।

(iii) यातायात की सुविधा के लिए कलकत्ता से दिल्ली तक सड़क का निर्माण हुआ। आगरा से बम्बई तक सड़क का भी कार्य आरंभ हुआ।

6. वैधानिक क्षेत्र में सुधार– लॉर्ड विलियम बैंटिक के शासनकाल में 1833 का अधिनियम पारित किया गया। इसके अनुसार–

(i) ब्रिटिश संसद ने कम्पनी को 20 वर्ष के लिए नया आज्ञा पत्र (charter) प्रदान किया।

(ii) कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार समाप्त कर दिए गए।

(iii) बंगाल के गवर्नर जनरल को अब भारत का गवर्नर जनरल कहा जाने लगा। उसकी शक्तियों में वृद्धि कर दी गई।

(iv) गवर्नर जनरल की कौंसिल अब कानून बना सकती थी।

(v) परामर्श के लिए एक विधि सदस्य दिया गया।

(vi) बिना भेदभाव चाहे वह व्यक्ति किसी जाति या रंग का हो उसे प्रशासनिक पद पर नियुक्ति का अधिकार होगा।

(vii) समस्त देश में समान कानून होगा।

4.4.2 लॉर्ड विलियम बैंटिक का मूल्यांकन (Evaluation of Lord William Bentinck)

लॉर्ड बैंटिक सुधारवादी थे। उन्होंने भारत की दुर्दशा को सुधार कर यहाँ पर शिक्षा का प्रसार किया। लॉर्ड मैकाले के अनुसार "वह यह कभी नहीं भूला कि सरकार का आदर्श शासित लोगों का कल्याण करना है।"

4.5 महिलाओं की स्थिति (Women's Condition)

प्राचीन काल से आधनिक काल तक भारतीय महिलाओं की स्थित में परिवर्तन होते रहे हैं। वैदिक काल में महिलाओं का समाज में पुरा नीचे स्थान था। धीरे–धीरे उनकी स्थिति में बदलाव आया एवं उत्तर वैदिक काल में उनकी स्थिति खराब होने लगी। मध्यकाल तक उनकी स्वतंत्रता लगभग समाप्त होने लगी और उनका स्थान घर की चारदिवारी तक ही सिमित हो गया। आर्थिक मामलों में स्त्रियों को धन अर्जन के लिए बाहर जाने की अनुमति नही थी। 19वीं शताब्दी में स्त्रियों को पुरूषों के अधीन रहना पड़ता था। उनको सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक क्षेत्रों में काम करने का प्रतिबंध था। यद्यपि वे कृषि, सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, शिल्पकला आदि पुरूषों के समान कार्य करती थी, फिर भी पुरूषों से उनका स्तर निम्न समझा जाता था।

हिन्दु समाज – मध्य काल में हिन्दू समाज में महिलाओं की स्थिति में गिरावट आई। प्राचीन काल में हिन्दू स्त्रियों की यह स्थिति नही थी। किन्तु मुगल राज हिन्दू स्त्रियों के लिए अधिक कठोर साबित हुआ। समय के साथ उनमें पर्दा प्रथा, पुत्रियों का जन्म अच्छा न मानना या किसी भी प्रकार से स्त्रियों का घर से बाहर निकलने पर भी पाबंदी लगा दी गई थी। और उन्हें कई ऐसी स्थितियों का सामना करना पड़ा, जैसे उन्हें अशिक्षित रखा गया, बहुविवाह प्रथा, बेमेल विवाह, बालविवाह जिसमें कई बार बहुत छोटी बालिका का बड़े उम्र के पुरूष के साथ विवाह कर दिया जाता था। इन सबसे क्रूर प्रथा सती प्रथा भी प्रचलित थी जिसका सबसे अधिक दुष्प्रभाव स्त्रियों पर पड़ा। पुरूष विदुर होने पर भी विवाह कर सकता था किन्तु इस संदर्भ में स्त्रियों की स्थिति दयनीय थी क्योंकि उन्हें विधवा होने के पश्चात कठोर जीवन व्यतीत करना पड़ता था या फिर सती होना पड़ता था। सती प्रथा सबसे कठोर प्रथा थी। विधवा स्त्री को उसके पति की चिता के साथ जलने को मजबूर किया जाता था।

स्त्रियों की स्थिति आर्थिक रूप से भी निम्न थी क्योंकि वे अशिक्षित थीं व उन्हें बाहर जाने की अनुमति नही थी, जिस कारण वह आर्थिक रूप से अपने पति पर निर्भर थी।

कई बार स्त्रियों को दहेज प्रथा के कोप से भी गुजरना पड़ा। बहुविवाह आत्महत्या, घरेलू हिंसा आदि प्रथा के मुख्य कारण थे।

टिप्पणी

आरंभ से हिन्दु परिवारों का पितृसत्तात्मक स्वरूप रहा है। पिता से ही वंश परिचय स्वीकार किया जाता रहा है। पुरूष संतान अनविार्य माना जाता था। अतः कन्याओं का जन्म होते ही उनकी हत्या कर दी जाती थी।

हिन्दु समाज में बाल विवाह का प्रचलन था। लडकियों का विवाह 5–6 वर्ष की उम्र में कर दिया जाता था।

बहु विवाह सामान्य बात थी। एक पुरूष कई स्त्रियों से विवाह कर सकता था।

अनमेल विवाह से नारी पीड़ित थी। बालिकाओं का विवाह कम उम्र में ही प्रौढ़ पुरूष से कर दिया जाता था। पति के देहान्त के बाद बालिका विधवा का जीवन किसी श्राप से कम नहीं होता था।

विधवा विवाह शास्त्रों के विरूद्ध माना जाता था। दक्षिण भारत में कई जगहों में देवदासी प्रथा भी प्रचलित थी। कन्याओं को मंदिरों में दे दिया जाता था। इस प्रकार वह मंदिर की सम्पति हो जाती थी।

मुस्लिम समाज – 19वीं शताब्दी तक आते–आते मुस्लिम समाज में भी दहेज लेने की प्रथा प्रचलित हो गई थी। लड़के वाले मेहर देने के स्थान पर, दहेज लेने की इच्छा रखने लगे। मुस्लिम महिलाएँ शिक्षा से दूर थी। इसका प्रमुख कारण पर्दा–प्रथा का प्रचलन था। कई मुस्लिम परिवारों में महिलाओं के लिए जनानखाना होता था और स्त्रियों का जीवन उसके अन्दर ही सीमित होता था। आसान तलाक की प्रथा के कारण मुस्लिम स्त्रियों की स्थिती दयनीय थी।

इन परिस्थितियों के बाद भी महिलाओं ने राजनीति, साहित्य, शिक्षा और धर्म के क्षेत्रों में सफलता प्राप्त की। मध्यकाल में रजिया सुल्तान दिल्ली पर शासन करनेवाली एकमात्र महिला साम्राज्ञी थी। गोंडवाना की महारानी दुर्गावती ने 15 वर्ष तक शासन किया। 1564 में मुगल सम्राट अकबर के सेनापति आसफखान से युद्ध में रणकौशल दिखाकर कुर्बानी दी। 1590 अहमदनगर की रक्षा वहाँ की रानी चाँदबीबी ने शक्तिशाली मुगल सेनासे की। नूरजहाँ नें अपने प्रभाव में दिल्ली का शासन संभाला। मुगल राजकुमारी एवं हमीदाबानो सुप्रसिद्ध कबियॉप्रिया एवं साहित्यकार मीराबाई भक्ति आंदोलन।

सुधार– 19वीं शताब्दी में कई समाज सुधारकों जैसे राजा राममोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, ज्योतिबा फुले आदि ने महिलाओं के उत्थान के लिए संघर्ष किया। स्त्री शिक्षा एवं प्रशिक्षण पर जोर दिया गया। शुरूआत में समाज सुधारकों को विरोधों का सामना करना पड़ा किन्तु अंततः उन्होंने अपने प्रयासों मे सफलता प्राप्त की। 1829 ई. में गवर्नर जनरल विलियम बेंटिक एवं राजा राममोहन राय सती प्रथा उन्मूलन कानून पारित करने में सफल रहें। विधवाओं की स्थिति सुधारने में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के प्रयास स्वरूप विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1856 में पारित किया गया। कई महिला सुधारकों जैसे कि पंडिता रमाबाई ने महिला सशक्तीकरण के लिए कार्य किए। 1857 ई की क्रांति में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने ब्रिटिश सरकार से लोहा लेकर महिला सशक्तीकरण का परचम बुलंद किया।

4.5.1 प्रथाएं (Traditions)

टिप्पणी

कुछ समुदायों में सती, जौहर और देवदासी जैसी परंपराओं पर प्रतिबंध लगा दिया गया था और आधुनिक भारत में ये काफी हद तक समाप्त हो चुकी हैं। इन प्रथाओं के कुछ मामले भारत के ग्रामीण इलाकों में आज भी देखे जाते हैं। कुछ समुदायों में भारतीय महिलाओं द्वारा परदा प्रथा आज भी है और विशेषकर भारत के वर्तमान कानून के तहत एक गैरकानूनी कृत्य होने के बावजूद बाल विवाह की प्रथा आज भी प्रचलित है।

सती

सती प्रथा एक प्राचीन और काफी हद तक विलुप्त रिवाज है, कुछ समुदायों में विधवा को अपने पति की चिता में अपनी जीवित आहुति देनी पड़ती थी। हालांकि यह कृत्य विधवा की ओर से स्वैच्छिक रूप से किये जाने की उम्मीद की जाती थी, ऐसा माना जाता है कि कई बार इसके लिये विधवा को मजबूर किया जाता था। 1829 ई. में अंग्रेजों ने इसे समाप्त कर दिया।

जौहर

जौहर का मतलब सभी हारे हुए (सिर्फ राजपूत) योद्धाओं की पत्नियों और बेटियों को शत्रु द्वारा बंदी बनाये जाने और इसके बाद उत्पीड़न से बचने के लिये स्वैच्छिक रूप से अपनी आहुति देने की प्रथा थी। अपने सम्मान के लिए मर–मिटने वाले पराजित राजपूत शासकों की पत्नियों द्वारा इस प्रथा का पालन किया जाता था।

परदा

परदा वह प्रथा है जिसमें कुछ समुदायों में महिलाओं को अपने तन को इस प्रकार से ढंकना जरूरी होता है कि उनकी त्वचा और रूप–रंग का किसी को अंदाजा ना लगे। यह महिलाओं के क्रियाकलापों को सीमित कर देता है। यह आजादी से मिलने–जुलने के उनके अधिकार को सीमित करता है और यह महिलाओं की अधीनता का एक प्रतीक है।

अंग्रेजी शासन के दौरान राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, ज्योतिबा फुले, आदि जैसे कई सुधारकों ने महिलाओं के उत्थान के लिये लड़ाइयाँ लड़ीं। 1829 ई. में गवर्नर–जनरल विलियम बेंटिक के प्रशासन में राजा राममोहन राय के प्रयास सें सती प्रथा का उन्मूलन हुआ। विधवाओं की स्थिति को सुधारने में ईश्वर चंद्र विद्यासागर के संघर्ष का परिणाम विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1956 ई. के रूप में सामने आया। कई महिला सुधारकों जैसे कि पंडिता रमाबाई ने भी महिला सशक्तीकरण के उद्देश्य को हासिल करने में मदद की।

कर्नाटक में कित्तूर रियासत की रानी, कित्तूर चेन्नम्मा ने व्यपगत के सिद्धांत (डाक्ट्रिन ऑफ लैप्स) की प्रतिक्रिया में अंग्रेजों के खिलाफ सशस्त्र विद्रोह का नेतृत्व किया। तटीय कर्नाटक की महारानी अब्बक्का रानी ने 16वीं सदी में हमलावर यूरोपीय सेनाओं, उल्लेखनीय रूप से पुर्तगाली सेना, के खिलाफ सुरक्षा

का नेतृत्व किया। झाँसी की महारानी रानी लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों के खिलाफ 1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अंग्रेजों से लोहा लेकर महिला सशक्तीकरण का परचम ऊँचा किया। आज उन्हें सर्वत्र एक राष्ट्रीय नायिका के रूप में माना जाता है। अवध की सह–शासिका बेगम हजरत महल एक अन्य शासिका थी जिसने 1857 के विद्रोह का नेतृत्व किया था। उन्होंने अंग्रेजों के साथ सौदेबाजी से इनकार कर दिया और बाद में नेपाल चली गयीं। भोपाल की बेगमें भी इस अवधि की कुछ उल्लेखनीय महिला शासिकाओं में शामिल थी। उन्होंने परदा प्रथा को नहीं अपनाया और मार्शल आर्ट का प्रशिक्षण भी लिया।

अंग्रेजी शासन के दौरान सावित्रीबाई फुले, ताराबाई शिंदे, पंडिता रमाबाई आदि ने महिला सशक्तीकरण के उद्देश्य को हासिल करने में मदद की। चंद्रमुखी बसु, कादंबिनी गांगुली और आनंदी गोपाल जोशी जैसी कुछ शुरूआती भारतीय महिलाओं में शामिल थीं जिन्होंने शैक्षणिक डिग्रियाँ हासिल कीं। भारत की आजादी के संघर्ष में महिलाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

4.6 पश्चिमी शिक्षा का विकास (Growth of Western Education)

अंग्रेजों के भारत आगमन का मूल उद्देश्य व्यापार था। यह उद्देश्य समय के साथ साम्राज्यवादी महत्वांक्षा में परिवर्तित हो गया। साम्राज्यवादी तथा व्यापारिक दोनों ही उद्देश्यों में अंग्रेज तभी सफल हो सकते थे जब वे भारत में अंग्रेजी सभा एवं भाषा का प्रसार करे। अतः अंग्रेजों ने भारत में पाश्चात्य शिक्षा पद्धति लागू करना आवश्यक माना। ग्राण्ट ने लिखा है 'ब्रिटिश व भारत के सम्बन्धों में घनिष्ठता बढ़ाने के लिए भारतवासियों को अंग्रेजी ढंग में ढाला जाए ताकि वे अंग्रेजी संस्कृत तथा अंग्रेजी माल को अपने व्यावहारिक जीवन में अधिकतर इस्तेमाल करना सीखे।'

स्वदेशी शिक्षा की स्थिति

स्वदेशी शिक्षा पद्धति– अठारहवीं शताब्दी तक भारत में अनेक हिन्दू एवं मुस्लिम शिक्षण संस्थाएँ थी।

(i) प्राथमिक शिक्षा– प्राथमिक शिक्षा के लिए पाठशाला होती थी। इनमें लिखने–पढ़ने के प्रारम्भिक गणित भी सिखाया जाता था।

(ii) उच्च शिक्षा– पूरे देश में उच्च शिक्षा केन्द्र थे जिसमें छात्र व्याकरण, प्राचीन साहित्य, तर्कशास्त्र, संस्कृत विधि, दर्शन, धर्म का अध्ययन करते थे।

(iii) मुस्लिम शिक्षा– प्राथमिक शिक्षा के लिए मखतब तथा उच्च शिक्षा के लिए मदरसे होते थे। मखतब प्रायः मस्जिदों से संलग्न होते थे। मदरसों में अरबी तथा फारसी में अध्ययन कराया जाता था।

(iv) बालिका शिक्षा– इन शिक्षण संस्थाओं में बालिकाओं, व्यक्ति को भी शिक्षा दी जाती थी। प्रथम समृद्ध बालिकाओं का अध्ययन घरों पर ही होता था।

(v) ग्रामिण शिक्षा– करीब प्रत्येक गाँव में एक पाठशाला और मखतब होता था। बड़े गावों में इनकी संख्या ज्यादा भी हो सकती थी।

बंगाल में कम्पनी के शासन से पूर्व देशी शिक्षण संस्थाएँ सफलतापूर्वक कार्य कर रही थीं किन्तु अंग्रेजों ने साम्राज्यवादी आकांक्षाओं के पूर्ति के लिए इन संस्थाओं की उपेक्षा कर अंग्रेजी शिक्षण पद्धती लागू की। इस प्रकार सस्ती, सुलभ और स्थानीय शिक्षण संस्थाएँ लुप्त हो गई।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी की प्रारम्भिक शिक्षा पद्धती (1789–1813)

ईस्ट इण्डिया कम्पनी का उद्देश्य भारत से व्यापारिक लाभ प्राप्त करना था। अतः कम्पनी सरकार ने भारतीयों की शिक्षा को लेकर प्रारंभ में कोई प्रयास नही किए। 1781 ई. में वारेन हेस्टिंग्ज ने कलकत्ता में मदरसा स्थापित किया। 1784 ई में. 'एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल' की स्थापना की। 1792 ई. में वाराणसी में जोनाथन डंकन ने एक संस्कृत कॉलेज की नींव डाली। इन प्रयासों का उद्देश्य हिन्दू तथा मुसलमानों को संतुष्ट करना था।

लॉर्ड वेलेजली ने 1800 ई. में कलकत्ता में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की। इस संस्था में पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, डॉ. गिलक्रिस्ट कोलब्रुक जैसे शिक्षक थे। इस महाविद्यालय ने बंग्ला साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

मिशनरियों का शिक्षा में योगदान

ईसाई मिशनरियों द्वारा व्यक्तिगत स्तर पर भी निम्नवर्ग के बीच शिक्षा का प्रसार करने के प्रयास किए गए। 1787 ई. में श्रीमती कॅम्पवेल ने मद्रास में महिला आश्रम खोला। डॉ. बेल ने बालकों के लिए ऐसा ही आश्रम ऐगमोर में खोला। मिशनरियों ने भारतीय स्थानीय भाषाओं को शिक्षा प्रदान करने का माध्यम बनाया।

बाईबल का अनुवाद दक्षिण भारतीय भाषाओं में किया गया। उन्होने शब्दकोष तैयार किए तथा व्याकरण की पुस्तकें प्रकाशित की। स्त्री शिक्षा में उन्होंने योगदान दिया। अनेक अनाथालय स्थापित किए गए।

1813 ई. के चार्टर अधिनियम पारित हुआ जिसके अनुसार मिशनरियों को भारत में शिक्षण एवं धर्म प्रचार के अधिकार प्राप्त हुए। फलस्वरूप अनेक मिशनरी संस्थाओं का उदय हुआ जैसे चर्च मिशनरी सोसाइटी, लन्दन मिशनरी सोसाइटी आदि। 1830 ई. तक इन संस्थाओं द्वारा अंग्रेजी माध्यम स्कूलों की स्थापना की गई। 1830 ई. में एलेग्जेंडर डफ ने कलकत्ता में अंग्रेजी विद्यालय खोला। मद्रास, बम्बई तथा बंगाल में मिशनरियों ने सर्वाधिक शिक्षण कार्य किया।

1800 ई. में कलकत्ता में केरे वार्ड तथा मार्शमैन जिन्हें त्रिमूर्ति भी कहा जाता था, ने मुद्रणालय खोला।

ब्रिटिश शासन के शिक्षा क्षेत्र में प्रयास –

1813 ई. के चार्टर के अनुसार –

1. भारतीयों की शिक्षा का भार कम्पनी पर आ गया।

टिप्पणी

2. भारतीय साहित्य का पुनरुत्थान तथा विकास पर ज़ोर दिया गया।
3. विज्ञान को बढ़ावा देने के लिए एक लाख रूपये प्रतिवर्ष खर्च का निर्णय लिया गया।

1823 ई. में एक लोक शिक्षा समिती गठित की गई जिसे इस एक लाख रूपये की राशि को शिक्षा के विकास में लगाने के उपाय बताने की जिम्मेदारी सौंपी।

1833 ई. तक इस समिति ने कलकत्ता में मदरसे, संस्कृत कॉलेज, आगरा व दिल्ली मे कॉलेज स्थापना तथा प्राच्य ग्रंथों के प्रकाशन, तक छात्रवृत्तियॉ प्रदान करने का सराहनीय कार्य किया।

1823 ई. में बम्बई के गवर्नर एलिफिंस्टन ने निम्न सुझाव दिए जिन्हें स्वीकार कर लिया गया।

1. सरकार का शिक्षा पर नियंत्रण।
2. सरकार द्वारा विद्यालयों का निर्माण।
3. शिक्षा अनुदान प्रणाली।

1830 ई. तक मद्रास में मुनरों के सुझाव अनुसार एक नार्मल स्कूल, 61 तहसीली स्कूल और 9 जिला स्कूल खोले गए।

1833 ई. में आज्ञापत्र में कम्पनी सरकार ने कुछ परिवर्तन कराये थे।

1. एक लाख रूपये की धनराशि दस गुना बढ़ा दी गई।
2. मिशनरियों को भारत प्रवेश की स्वतंत्रता।
3. कम्पनी में नौकरी के लिए वर्ण या धर्म को आधार नही बनाया जायेगा।

मदरसों और पाठशालाओं के अलावा, मौखिक शिक्षा और ग्रंथों के संस्मरण पर आधारित भाषा प्रवीणता सिखाने वाले साधारण स्कूलों के साथ–साथ भाषाओं में सीखने के उन्नत केंद्र भी मौजूद थे। ब्रिटिश जिन्होंने क्षेत्रीय नियंत्रण हासिल कर लिया और राजनीतिक स्वामी बन गए, उन्होंने 1813 तक शैक्षणिक क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं किया। 1813 के बाद, भारतीयों के सहयोग या सीमित संख्या के साथ, ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों ने भारत में शिक्षा की पश्चिमी प्रणाली शुरू की।

भारतीयों और अंग्रेजों के बीच एक बड़ी बहस हुई, जिसे 'ओरिएंटलिस्ट' और 'एंग्लिसिस्ट' के रूप में जाना जाता है, जो कि भारतीयों द्वारा आवश्यक शिक्षा के प्रकार के बारे में था। प्रारंभ में अंग्रेजों ने स्वदेशी लोगों के धर्म और संस्कृति के मामलों में तटस्थता या गैर–हस्तक्षेप की नीति का पालन किया। लेकिन विभिन्न वर्गों के लगातार दबाव के कारण ईसाई मिशनरियों, उदारवादियों, उपयोगितावादियों और अंग्रेजों ने पश्चिमी शिक्षा को बढ़ावा देने की जिम्मेदारी ली। एक विचार यह भी है कि यह शैक्षणिक नीति ब्रिटिश औपनिवेशिक जरूरतों के अनुरूप थी।

इसमें कोई संदेह नहीं है, अंग्रेजों के बीच कुछ लोग भी मौजूद थे, जो वास्तव में प्राच्य विद्या के प्रचार में रुचि रखते थे, जैसे कि वॉरेन हेस्टिंग्स जिन्होंने

1781 में कलकत्ता मदरसा शुरू किया था। जोनाथन डंकन जिन्होंने 1791 में बनारस संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना की थी और विलियम जेम्स, जिन्होंने 1784 में एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल की स्थापना की। इस महान बहस में, अंत में एंग्लिसिस्ट, भारत में शिक्षा की पश्चिमी प्रणाली को शुरू करने में सफल रहे। भारत में शिक्षा के विकास की देखभाल के लिए सार्वजनिक निर्देश की एक सामान्य समिति 1823 में स्थापित की गई थी।

मैकाले, जनरल इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक इंस्ट्रक्शन के अध्यक्ष और लॉर्ड बेंटिंक ने प्राच्यवादी दृष्टिकोण की ओर इशारा किया और घोषणा की, ''भारत में ब्रिटिश सरकार की महान वस्तु इसलिए भारत के मूल निवासियों के बीच यूरोपीय साहित्य और विज्ञान को बढ़ावा देना है। ''शिक्षा के उद्देश्य के लिए विनियोजित धनराशि अकेले अंग्रेजी शिक्षा पर नियोजित होगी''। मैकाले और विलियम बेंटिक के अलावा, चार्ल्स ग्रांट और विलियम विल्बरफोर्स के प्रयास स्मरणीय है।

विलियम बेंटिक ने 1835 में घोषणा की, कि फारसी को अदालत की भाषा में बदलकर अंग्रेजी किया गया है। अंग्रेजी में किताबें कम कीमतों पर उपलब्ध कराई गईं और अंग्रेजी शिक्षा का समर्थन करने के लिए अधिक धनराशि आवंटित की गई। लॉर्ड ऑकलैंड ने ढाका, पटना, बनारस, इलाहाबाद, आगरा, दिल्ली और बरेली में अंग्रेजी कॉलेज खोलकर अंग्रेजी सीखने को बढ़ावा देने के लिए भी प्रोत्साहन जारी रखा।

1841 में, सार्वजनिक निर्देश की सामान्य समिति को समाप्त कर दिया गया था और इसके स्थान पर शिक्षा परिषद की स्थापना की गई थी। 1854 में पश्चिमी शिक्षा के विकास में एक और मील का पत्थर वुड का डिस्पैच था। स्पष्ट रूप से कहा गया है कि ''जिस शिक्षा को हम भारत में विस्तारित करना चाहते हैं, वो वह है जिसमें बेहतर कला, विज्ञान दर्शन और साहित्य के प्रसार की बात है''।

चार्ल्स वुड ने कलकत्ता, बॉम्बे और मद्रास में विश्वविद्यालयों की शुरुआत के लिए भी सिफारिश की। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना, गैर–सरकारी स्कूलों को अनुदान की सिफारिश की। 1857 में मद्रास, बॉम्बे और कलकत्ता में तीन विश्वविद्यालय स्थापित किए गए थे।

भारत में पश्चिमी शिक्षा के लिए सरकारी समर्थन के अलावा, ईसाई मिशनरियों और अन्य लोगों ने गहरी दिलचस्पी ली। महिला शिक्षा को भी व्यापक संरक्षण मिला। बंबई और मद्रास प्रेसीडेंसी में भी शिक्षा का प्रचार हुआ।

सर चार्ल्स वुड का सम्प्रेषण 1854 ई.

1853 ई. के चार्टर में भारतीय शिक्षा की सम्पूर्ण समस्या एवं सुधार के लिए ब्रिटिश संसद ने एक समिती बनाई। समिती के सुझावों को सर चार्ल्स वुड के सम्प्रेषण के रूप में प्रकाशित किया गया –

1. प्राथमिक उच्च स्तर विद्यालय तथा महाविद्यालय की पर्याप्त संख्या होनी चाहिए।
2. प्रतिभाशाली छात्रों के लिए छात्रवृत्ति होनी चाहिए।

3. निजी शिक्षण संस्थाओं को अनुदान दिया जाना चाहिए।
4. हर प्रान्त में शिक्षा–विभाग स्थापित किया जाए जो शिक्षण संस्थाओं का निरीक्षण करे।
5. कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में विश्वविद्यालय स्थापित किए जाएँ।
6. स्त्री शिक्षा, देशी भाषा, शिक्षकों के प्रशिक्षण एवं जन–साधारण की शिक्षा को भी महत्व दिया जाए।

4.7 भारत का आधुनिकीकरण (Modernisation of India)

इतिहासकार रैम्जे म्यूर पी.ई. राबर्टस, एच. एच. डाइवैल, पर्सिवल स्पीयर आदि अनेक अंग्रेज इतिहासकारों का मानना है कि भारत का आधुनिकीकरण अंग्रेजी साम्राज्य की देन है। दूसरी ओर राष्ट्रवादी इतिहासकार इस तथ्य को अस्वीकार करते है। उनका मानना है कि भारत में साम्राज्यवादियों द्वारा जो भी परिवर्तन किये गए उनके पीछे इग्लैण्ड का हित था न कि भारतीयों के विकास की भावना का था। यह कहा जा सकता है कि अनिच्छा से ही सही अंग्रेजी शासकों ने भारत के आधुनिकीकरण का मार्ग प्रशस्त किया।

1. **पाश्चात्य शिक्षा का परिचय** – आधुनिक शिक्षा प्रदान करने के पीछे भले ही अंग्रेजों का उद्देश्य भारत में एक ऐसा वर्ग उत्पन्न करने का रहा हो जो उनके प्रति वफादार रहे किन्तु अंग्रेजी शिक्षा से भारतीयों को लाभ भी पहुंचा। उनमें वैचारिक क्रांति आई। उन्होंने मिल्टन, शैली, रूसो, वॉलटेयर आदि प्रमुख विचारकों को पढ़ा एवं प्रेरणा प्राप्त की। फ्रांस, अमेरिका, इटली में हुई क्रांतियों के बारे में जानकर भारतीयों में भी राष्ट्रवाद एंव राष्ट्रगौरव जागा।
2. **अंग्रेजी से संपर्क**– अंग्रेजों के आगमन से भारतीयों का उनसे संपर्क स्थापित तथा वे उनकी सभ्यता से प्रभावित हुए। उनके वैज्ञानिक एवं बुद्धिवादी दृष्टिकोण को भारतीयों ने भी स्वीकार किया।
3. **भारत समाजसुधारकों का योगदान**– 19वीं शताब्दी में राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने भारत में व्याप्त अंधविश्वास, जातिप्रथा, बालविवाह, सतीप्रथा, देवदासी प्रथा के विरुद्ध संघर्ष किया। उनके प्रयासों के परिणामस्वरूप भारत में सामाजिक, धार्मिक आंदोलन हुए और भारत में आधुनिकीकरण आया।
4.. **मध्यम वर्ग का उदय**– अंग्रेजी शिक्षा नीति ने भारत में शिक्षित मध्यम वर्ग को जन्म दिया जिसमें उद्योगपति, डॉक्टर, इंजीनियर, अध्यापक, पत्रकार, व्यापारी, आदि सम्मिलित थे। इस वर्ग ने ही जनता में राष्ट्रीय चेतना जाग्रत करने का कार्य किया।
5. **परिवहन एवं संचार साधनों का विकास**– अंग्रेजों ने व्यापार के विकास के लिए भारत में रेल, सड़क, डाक, तार आदि साधनों का विकास किया। 1853 ई. में लॉर्ड डलहौजी के प्रशासन में भारत में प्रथम रेल्वे लाइन बम्बई

से थाने तक बिछायी गयी। उसके ही शासनकाल में पहली बार 4000 मील लम्बी विद्युत तार लाइन बिछायी गयी। साथ ही डाक व्यवस्था भी आरंभ की गई। इन सुधारों के कारण लॉर्ड डलहौजी को आधुनिक भारत का निर्माता कहा जाता है।

6. **आधुनिक उद्योगों का विकास, परिवहन—** परिवहन साधनों के विकास से भारत में आधुनिक उद्योगों का भी विकास हुआ। कपड़ा, सीमेण्ट, कागज, चीनी उद्योग आरंभ हुए।

7. **प्रेस का विकास—** भारत के आधुनिकीकरण में प्रेस का महत्वपूर्ण योगदान था। भारतीय समाचार पत्र अंग्रेजी तथा भारतीय भाषाओं में प्रकाशित होते थे। इन समाचार पत्रों ने देश में व्याप्त बुराइयों का विरोध किया एवं सुधारों की मांग की। 1816 ई. में गंगाधर भट्टाचार्य द्वारा अंग्रेजी में प्रकाशित 'बंगाल राजवट' भारत का पहला साप्ताहिक निकला था। 1818 ई. में जे. एस. बकिंघम ने 'कलकत्ता जर्नल' का सम्पादन किया। 1821 ई. में राजा राममोहन राय ने बंगाली में 'संवाद कौमुदी' तथा 1822 ई. में फारसी 'मिरातउल अखबार' का प्रकाशन किया। इन समाचार पत्रों ने तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक मुद्दों पर सवाल किए और सुधारों पर बल दिया।

उपर्युक्त कारणों से भारत में आधुनिकीकरण का मार्ग प्रशस्त हुआ।

हिन्दू पुरातन परम्पराओं के दकियानूसी नियमों व मान्यताओं के विरुद्ध, संघर्ष छेड़ा गया। इस प्रकार, भारत में, आधुनिकीकरण हुआ। जिसके प्रमुख कारक थे— कानून व्यवस्था, शिक्षा का पाश्चात्य स्वरुप, नागरीकरण तथा औद्योगिकीकरण का प्रसार, संचार व यातायात के नवीन साधनों का प्रसार तथा सामाजिक सुधार। इन आधुनिकीकारक सरंचनाओं का, सम्पूर्ण देश में, एक समरुप चरित्र था। अतः, इनके विकास ने, देश में, राष्ट्रवादी आकांक्षाओं को मुखरित किया, जो, आधुनिकीकरण की वृद्धि में, स्वयं, एक प्रमुख कदम था।

4.8 लॉर्ड मैकाले का निष्यंदन का सिद्धांत (Lord Macaulay's Downward Filteration Theory)

1833 ई. में गर्वनर जनरल की काउंसिल में एक कानूनी सदस्य की वृद्धि की गई। इस पद पर लॉर्ड मैकाले को नियुक्त किया गया।

लॉर्ड मैकाले अंग्रेजी का प्रकाण्ड विद्वान था, अंग्रेजी साहित्य एवं संस्कृति को विश्वभर में सर्वश्रेष्ठ मानता था।

लॉर्ड मैकाले जिस समय भारत आया उस समय भारत में शिक्षा सम्बन्धी नीति तय करने के लिए दो मत थेः—

(i) प्राच्यवादी

(ii) पाश्चात्यवादी

प्राच्यवादी मत के अनुसार भारत में शिक्षा का माध्यम प्राच्य भाषांतर ही होना उचित था। इस नीति को अपनाने वाले वारेन हेस्टिंग्ज एवं डंकन द्वारा कलकत्ता में मदरसा और बनारस में संस्कृत कॉलेज खोले गए। इस धारणा का एक कारण यह भी था कि कम्पनी के अधिकारी नहीं चाहते थे कि भारतीय, अंग्रेजी भाषा सीखकर उनसे प्राच्यवादी विज्ञान, चिकित्सा तथा आधुनिकिकरण का विरोध करने लगें। उनका मानना था कि इस परिवर्तन को ग्रहण करने के लिए वे भारतीय भाषाओं को ही माध्यम बनाएँ। उन्होंने अनेक स्कूलों की स्थापना की, अंग्रेजी पुस्तकों को संस्कृत तथा अरबी में अनुवाद करने की वकालत की, पुस्तकों तथा समाचार पत्रों के प्रकाशन के लिए कदम उठाए।

प्राच्यवादी का सबसे बड़ा योगदान भारतीय इतिहास की गरिमा, वेदों की महिमा एवं भारतीय साहित्य एवं संस्कृति की श्रेष्ठता, राष्ट्रीयता की भावना को पुनः स्थापित करना था।

पाश्चात्यवादी प्राच्य शिक्षा को संकुचित मानते थे। वे अंग्रेजी भाषा के माध्यम से भारत का आधुनिकीकरण करना चाहते थे। इनका समर्थन लॉर्ड मैकाले तथा राजा राममोहन राय ने किया।

राजा राममोहन राय ने 1823 ई. में गवर्नर जनरल को लिखा, ''गणित, प्राकृतिक दर्शन, रसायन, शरीर विज्ञान और अन्य उपयोगी विज्ञानों को समाविष्ट करने वाली अधिक उदार और प्रबुद्ध शिक्षाप्रणाली को प्रशय दिया जाए।''

राजा राममोहन राय को भारतीय पुनर्जागरण का अग्रदूत माना जाता है। उन्होंने पाश्चात्य शिक्षा, विचारों एवं परिवर्तन को स्वीकारा।

मैकाले का विवरण पत्र–

लॉर्ड मैकाले भारत में एक ऐसे वर्ग को निर्मित करना चाहता जो रक्त और रंग में भारतीय हो। परन्तु प्रवृत्ति, नैतिकता, रूचि और विचार से अंग्रेज हो और कम्पनी में क्लर्क (बाबू) का कार्य संभाल सके। 1834 ई में तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बैंटिक ने उसे शिक्षा सम्बन्धी सलाह के लिए शिक्षा समिति का प्रधान नियुक्त किया। 1835 ई. में लॉर्ड मैकाले इस मुद्दे पर विवरण पत्र तैयार कर गवर्नर जनरल को काउंसिल के समक्ष प्रस्तुत किया।

लॉर्ड मैकाले ने अंग्रेजी माध्यम द्वारा अध्ययन का समर्थन किया। उसके अनुसार भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक ज्ञान का अभाव है तथा वे इतनी अविकसित है कि किसी महत्वपूर्ण ग्रंथ का अनुवाद नहीं हो सकता।''

मैकाले ने घोषणा की, कि कानून के ज्ञान के लिए संस्कृत व फारसी शिक्षालयों पर धन व्यय नहीं किया जाना चाहिए। कानूनों को अंग्रेजी भाषा में संहिताबद्ध कर देना चाहिए।

मैकाले का तर्क था कि अंग्रेजी द्वारा भारत का परिवर्तन संभव है क्योंकि भारत के लोग अंग्रेजी भाषा पढ़ना चाहते हैं और वे अच्छे अंग्रेजी विद्वान बनाये जा सकते हैं।

मैकाले के विचारों को प्रशंसा तथा आलोचना दोनों प्राप्त हुए। एक वर्ग उसे भारतीय शिक्षा का पथ–प्रदर्शक मानता है तो दूसरे वर्ग का उस पर आरोप है कि उसने भारतीय भाषाओं की अवहेलना की है। मैकाले ने विवरण पत्र मे अंग्रेजी भाषा को माध्यम बनाने पर बल दिया ताकि भारतीयों का अंग्रेजी जानने वाला एक ऐसा वर्ग तैयार हो सके जो अंग्रेजी साम्राज्य के प्रति भक्तिभाव रखे।

इस प्रकार मैकाले ने प्राच्य–पाश्चात्य विवाद का अन्त कर लॉर्ड विलियम बैंटिक को अपने विचारों से प्रभावित किया। इन प्रस्तावों को 1835 ई. के आज्ञापत्र में घोषित कर दिया गया।

(i) ब्रिटिश सरकार का मुख्य उद्देश्य भारत के मूल निवासियों को यूरोपीय ज्ञान–विज्ञान से परिचित कराना है। अतः शिक्षा सम्बंधित पूर्ण धनराशि अंग्रेजी शिक्षा पर ही व्यय होनी चाहिए।

(ii) प्राच्य विद्यालयों का बहिष्कार नहीं किया जायेगा किन्तु इनमें शिक्षकों की नियुक्ति सरकार द्वारा की जाए।

लॉर्ड विलियम बैंटिक तथा राजा राममोहन राय जैसे शिक्षित भारतीयों ने लॉर्ड मैकाले का समर्थन किया।

गवर्नर जनरल लॉर्ड ऑकलैण्ड ने 1839 ई. में एक आदेश पत्र जारी किया जिसके अनुसार उसने प्राच्य भाषाओं के विद्यालयों को जारी रखने व आर्थिक सहायता देने, प्राच्य भाषाओं की पुस्तकों को प्रकाशित करने और छात्रों को छात्रवृत्तियाँ देने का निर्णय लिया। इस प्रकार प्राच्य–पाश्चात्य विवाद पूर्णतः खत्म हो गया।

लॉर्ड ऑकलैण्ड ने मैकाले के निष्यंदन सिध्दान्त को भी स्वीकार किया, जिसके अनुसार ''जन समूह में शिक्षा ऊपर से छन–छन कर पहुँचती थी। बूँद–बूँद करके भारतीय जीवन के हिमालय से लाभदायक शिक्षा नीचे को बहे, जिससे कि वह कुछ समय में एक चौडी एवं विशाल धारा में परिवर्तित होकर शुष्क मैदानों का सिंचन करे।'' लॉर्ड ऑकलैण्ड ने घोषणा की कि, ''सरकार को समाज के उच्च वर्ग को शिक्षा देनी चाहिए, जिससे सभ्यता छन–छन कर जनता में पहुंचे।''

पाश्चात्य शिक्षा से लाभ भी हुए। पाश्चात्य ज्ञान के संपर्क में आने से भारतीयों मे वैचारिक क्रांति आयी जिससे पुनर्जागरण का आगमन हुआ। अतः लॉर्ड मैकाले का भारतीय शिक्षा के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान है।

टिप्पणी

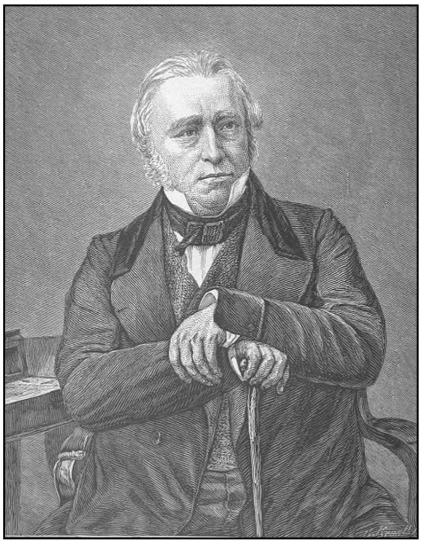

चित्र क्र. 4.1: लॉर्ड मैकाले
https://thewire.in/history/macaulays-speech-never-delivered

लॉर्ड मैकाले का कथन था, "मैंने सारे भारत का भ्रमण किया है और मैंने एक भी व्यक्ति को चोर और भिखारी नहीं पाया है! मैंने इस देश में इतनी सम्पदा देखी है तथा इतने उच्चनैतिक आदर्श देखें हैं और इतने उच्च योग्यता वाले लोग देखें हैं कि मैं नहीं समझता कि हम कभी इसे जीत पाऐंगे जब तक कि इसके मूल आधार को ही नष्ट न कर दें जो कि इस देश की आध्यात्मिक और सांस्कृतिक धरोहर है। और इसीलिए मैं प्रस्तावित करता हूँ कि हम उसकी प्राचीन और पुरानी शिक्षा पद्धति और उस संस्कृति को बदल दें क्योंकि यदि भारतीय यह सोचने लगें कि जो कुछ विदेशी और अंग्रेजी है, वह उनकी अपनी संस्कृति से अच्छा और उत्तम है तो वे अपना स्वाभिमान एवं भारतीय संस्कृति को खो देंगे और वे वैसे ही हो जायेंगे जैसा कि हम चाहते हैं, पूरी तरह एक पराधीन राष्ट्र।

4.9 निष्यंदन का सिद्धांत (Theory of Filtration)

निष्यंदन सिद्धांत का अर्थ अंग्रेजी के फिलट्रेशन (Filtration) शब्द का अर्थ है निष्यंदन अर्थात् छानने की क्रिया। ईस्ट इंडिया कम्पनी एक व्यावसायिक, व्यापारिक कम्पनी थी जिससे वह भारतीयों की शिक्षा पर कम से कम धन व्यय करना चाहती थी, अतः उसने अपने लाभ के लिए यह सिद्धांत प्रतिपादित किया था।

इस सिद्धांत के प्रतिपादक लॉर्ड मैकाले माने जाते हैं किन्तु सबसे पहले ईसाई मिशनरियों ने यह विचार दिया कि अगर भारत के उच्च वर्ग के लोग ईसाई धर्म स्वीकार कर लें तो उनसे प्रभावित होकर निम्न वर्ग के लोग खुद ही ईसाई धर्म स्वीकार कर लेंगे। 23 दिसम्बर, 1823 को बम्बई में गवर्नर की कौंसिल के सदस्य वार्डन ने अपने विवरण—पत्र में शिक्षा के विषय में कहा, "बहुत से व्यक्तियों को थोड़ा ज्ञान देने की अपेक्षा थोड़े से व्यक्तियों को ज्यादा ज्ञान देना अधिक उत्तम है।"

1830 में कम्पनी के संचालकों ने मद्रास के गवर्नर को यह परामर्श दिया कि "शिक्षा की प्रगति तभी हो सकती है जब उच्च वर्ग के उन व्यक्तियों को शिक्षा प्रदान की जाए जिनके पास शिक्षा प्राप्त करने का पर्याप्त समय हो और उनका अपने देशवासियों पर प्रभाव हो।"

इसके बाद 1835 में लॉर्ड मैकाले के विवरण–पत्र में इस सिद्धांत के पक्ष में मैकाले ने यह सुझाव दिया कि शुरुआत में उच्च शिक्षा की व्यवस्था उन उच्च वर्ग के व्यक्तियों के लिए की जाए जो हमारे और उन लाखों व्यक्तियों के बीच में, जिन पर हम शासन करते हैं, दुभाषिए का कार्य करें। इस सबसे शिक्षा जगत में एक सिद्धांत का उद्‌भव हुआ। वह यह था कि सरकार को उच्च वर्गों में उच्च शिक्षा का प्रसार करना चाहिए। उच्च वर्ग से निम्न वर्ग तक वह स्वयं ही छन–छन कर पहुंच जाएगी।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. सती प्रथा कब समाप्त हुई?

   (अ) 1729 (ब) 1829

   (स) 1929 (द) 1917

2. पहली रेल कहाँ से कहाँ तक चलाई गई?

   (अ) मद्रास से बम्बई (ब) पूना से बम्बई

   (स) बम्बई से थाने (द) थाने से पूना

3. ''संवाद कौमुदी'' के प्रकाशक थे–

   (अ) लॉर्ड विलियम बैंटिक (ब) एनी बसेण्ट

   (स) स्वामी विवेकानन्द (द) राजा राममोहन राय

4. 'आर्य समाज' की स्थापना की–

   (अ) स्वामी दयानन्द (ब) स्वामी विवेकानन्द

   (स) एनी बसेण्ट (द) राजा राममोहन राय

5. निष्यंदन सिद्धांत के जनक कौन थे?

   (अ) विल्यम बैंटिक (ब) कॉर्नवॉलिस

   (स) लॉर्ड मैकाले (द) वुड

6. लॉर्ड मैकाले भारत के गर्वनर जनरल की काउन्सिल के कानूनी सलाहाकार के पद पर कब नियुक्त हुए?

   (अ) 10 जून 1834 को (ब) 10 जून 1833 को

   (स) 15 जून 1935 को (द) 17 मई 1833 को

4.10 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर (Answers to Check Your Progress)

1. (ब)
2. (स)
3. (द)
4. (ब)
5. (स)
6. (अ)

4.11 सारांश (Summary)

19वी शताब्दी में भारत में नवीन विचारधाराओं का उदय हुआ जिसके परिणामस्वरूप भारत में आधुनिकीकरण आया। इसके मुख्य कारण पश्चिमी शिक्षा का विकास, पाश्चात्य देशों से संपर्क, रेल्वे का विकास, डाक व्यवस्था, प्रेस का विकास थे। सबसे महत्वपूर्ण योगदान समाज सुधारकों राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचंद्र विद्यासागर आदि का था जिनके प्रयासों से सतीप्रथा जैसी कुरीतियाँ समाप्त हुई एवं स्त्री शिक्षा और विधवा पुनर्विवाह को प्रोत्साहन मिला। लॉर्ड विलियम बैंटिक के शासनकाल में सती प्रथा उन्मूलन किया गया तथा लॉर्ड मैकाले के निष्यंदन के सिद्धांत को समर्थन दिया गया। इससे भारत में पश्चिमी शिक्षा का विकास हुआ तथा राष्ट्रीयता की भावना भारतीयों में जागृत हुई।

4.12 मुख्य शब्दावली (Key Terminology)

- **सती प्रथा**: एक ऐसी प्रथा जिसमें पति की मृत्यु उपरांत स्त्रियों को पति की चिता के साथ जला दिया जाता था।
- **देवदासी प्रथा**: इस प्रथा के अनुसार कन्याओं को मंदिरों में दे दिया जाता था और बाद में वे मंदिर की सम्पत्ति हो जाती।
- **मिशनरी**: ईसाई धर्म प्रचारक।
- **चार्टर**: आज्ञापत्र।
- **प्राच्यवादी**: भारतीय भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने के समर्थक।
- **पुनर्जागरण**: पुनर्जागरण (Renaissance in Europe) का शाब्दिक अर्थ होता है, "फिर से जागना"। 14वीं और 17वीं सदी के बीच यूरोप में जो सांस्कृतिक व धार्मिक प्रगति, आंदोलन तथा युद्ध हुए उन्हें ही पुनर्जागरण कहा जाता है।

- **वायसराय की कार्य–परिषद–** ब्रिटिश भारत सरकार की कैबिनेट थी जिसके अध्यक्ष भारत के गवर्नर जनरल होते थे। 1861 के इण्डियन काउंसिल अधिनियम के द्वारा यह परिषद सलाहकार समिति से एक कैबिनेट में बदल दी गयी।

4.13 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास (Self Assessment Questions and Exercises)

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. महिलाओं की स्थिती को संक्षिप्त रुप से बताइये।
2. सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन पर संक्षिप्त रुप से टिप्पणी लिखें।
3. लॉर्ड विल्यम बैंटिक के शैक्षणिक सुधारों को बताइए।
4. पुनर्जागरण से आप क्या समझते हैं?
5. आर्य समाज के सिद्धांत लिखिए।
6. लॉर्ड मैकाले के सिद्धांत पर निबंध लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. पुनर्जागरण के विभिन्न चरणों को विस्तृत रुप से समझाइये।
2. पुनर्जागरण के कारणों को स्पष्टीकरण सहित बताईये।
3. आर्य समाज के सिद्धांतों को स्पष्ट किजिए।
4. पुनर्जागरण के कारण लिखिए।
5. लॉर्ड विलियम बैंटिक के प्रशासनिक सुधार लिखिए।
6. पश्चिमी शिक्षा के विकास को विस्तार से समझाइए।
7. भारत के आधुनिकीकरण के कारण बताइए।
8. राजा राममोहन राय के योगदान का वर्णन कीजिए।
9. महिलाओं की स्थिति पर निबंध लिखिए।

4.14 सहायक पाठ्य सामग्री (Suggested Readings)

1. आधुनिक भारत का इतिहास– बिपिन चन्द्र –Orient Blackswan 2009
2. आधुनिक भारतीय ऐतिहासिक शासक– इला नागौरी– राजा पब्लिशिंग हाउस
3. भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद का उद्भव और विकास– बिपिन चन्द्र (1880–1907)
4. आधुनिक भारत का इतिहास– सत्यनारायण दुबे
5. आधुनिक भारतीय का इतिहास– ए. सी. दहीभाते

इकाई 5 ब्रिटिश भू–राजस्व नीति – स्थायी बंदोबस्त, रैयतवारी एवं महालवारी, कृषकों की स्थिति, ग्रामीण ऋणग्रस्तता, कृषि का वाणिज्यीकरण, धन का निष्कासन, कुटीर उद्योगों का विनाश

संरचना (Structure)

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 ब्रिटिश भू–राजस्व नीति – स्थायी बंदोबस्त
 5.2.1 स्थायी बंदोबस्त से पूर्व व्यवस्थाएँ
 5.2.2 स्थायी बंदोबस्त लॉर्ड कॉर्नवॉलिस
 5.2.3 स्थायी व्यवस्था की विशेषताएँ
 5.2.4 स्थायी व्यवस्था के लाभ
 5.2.5 स्थायी बंदोबस्त के दोष
5.3 रैयतवारी एवं महालवारी
 5.3.1 रैयतवारी व्यवस्था
 5.3.2 महालवारी बंदोबस्त
5.4 कृषकों की स्थिति
5.5 ग्रामीण ऋणग्रस्तता
5.6 कृषि का वाणिज्यीकरण
5.7 धन का निष्कासन
5.8 कुटीर उद्योगों का विनाश
 5.8.1 उद्योग
5.9 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
5.10 सारांश
5.11 मुख्य शब्दावली
5.12 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.13 सहायक पाठ्य सामग्री

5.0 परिचय (Introduction)

ब्रिटिश शासन का भारतीय कृषि व्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ा। ब्रिटिश सरकार का मुख्य उद्देश्य अधिक से अधिक धन प्राप्त करना था। इसके लिए उन्होंने राजस्व एवं वाणिज्य को स्रोत बनाया। अधिक राजस्व के लिए उन्होंने भू–राजस्व नीतियाँ जैसे स्थायी बंदोबस्त, रैयतवारी, महालवारी एवं मालगुजारी व्यवस्था लागू की। इन पद्धतियों से भारत की अर्थव्यवस्था का ऱ्हास होने लगा। कृषक ऋणग्रस्त होने लगे। भारत से धन का निष्कासन होने लगा क्योंकि भारत से कच्चा माल प्राप्त कर भारत को बाज़ार की तरह उपयोग किया जाने लगा। इस प्रकार भारतीय किसानों के शोषण में वृद्धि ब्रिटिश भू–व्यवस्था का परिणाम थी।

टिप्पणी

5.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन द्वारा विद्यार्थियों को निम्न घटनाओं से परिचित कराना है–

- ब्रिटिश भू–व्यवस्था जैसे स्थायी बंदोबस्त।
- महालवारी रैयतवारी एवं इन व्यवस्थाओं का भारतीय अर्थव्यवस्था एवं कृषकों पर प्रभाव से परिचित कराना है।

5.2 ब्रिटिश भू–राजस्व नीति – स्थायी बंदोबस्त (British Land-revenue Policy – Permanent Settlement)

5.2.1 स्थायी बंदोबस्त से पूर्व व्यवस्थाएँ (Arrangements Prior to Permanent Settlement)

1. भू–राजस्व व्यवस्था एवं लार्ड क्लाइव– ईस्ट इंडिया कम्पनी ने बक्सर के युद्ध में मीर कासिम, (बंगाल के नवाब), शुजाउद्दौला (अवध के नवाब) एवं मुगल सम्राट शाह आलम की संयुक्त सेना को पराजित कर इलाहाबाद की सन्धि के द्वारा द्वैध शासन प्रणाली के अनुसार कम्पनी को–

(i) बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा की दिवानी प्राप्त हुई।

(ii) कम्पनी को इन प्रान्तों का भूमि राजस्व इकट्ठा करने का कानूनी अधिकार मिला।

(iii) कम्पनी इन प्रान्तों का निरीक्षण कर सकती थी।

(iv) कम्पनी राजस्व एकत्र करने के लिए दीवान की नियुक्ति कर सकती थी।

कम्पनी ने बंगाल में राजस्व वसूल करने के लिए दो दीवान नियुक्त किये– मुहम्मद रजा खाँ एवं सिताबराय। कम्पनी चाहती थी कि दीवान अधिक से अधिक राजस्व जमा करे। इस प्रकार धन को वसूल करने का कार्य कर्मचारियों के हाथ में था और धन का उपयोग करने का अधिकार कम्पनी के पास था। किसानों की दुर्दशा पर न ही कम्पनी, न ही नायब दीवान का ध्यान था। नायब दीवान अंग्रेजों के निर्देशों का पालन करते थे। नवाब के अधीन होने पर भी नवाब का उन पर कोई नियंत्रण नहीं था। वे मनमानी लूट करते थे। दूसरी तरफ कम्पनी भी एकत्र धन को इंग्लैण्ड भेजती थी। उस धन का एक पैसा भी किसानों एवं कृषि के विकास के खर्च में नहीं किया जाता था। राजस्व वसूली में कोई रियायत नहीं की जाती थी। यहाँ तक कि भीषण अकाल के समय भी (1770) सरकार ने निर्दयता से वसूली की।

2. भू–राजस्व व्यवस्था एवं वॉरेन हेस्टिंग्ज– पंचवर्षीय भूमि बंदोबस्त–1772 ई. में वॉरेन हेस्टिंग्ज बंगाल का गर्वनर बनकर आया। उसने क्लाइव की द्वैध शासन

प्रणाली को समाप्त कर दिया। दीवान द्वारा लगान वसूली के स्थान पर कम्पनी ने यह उत्तरदायित्व स्वयं ले लिया। वॉरेन हेस्टिंग्ज ने निम्नलिखित कार्य किए–

(i) राजस्व प्रशासन को सुचारू गति से चलाने के लिए उसने गवर्नर तथा उसकी परिषद् को राजस्व परिषद् (Board of Revenue) के रूप में स्थापित किया।

(ii) नीलामी की प्रथा लागू की। इसके अनुसार सार्वजनिक नीलामी में सबसे ऊँची बोली बोलने वाले ठेकेदार को पाँच वर्ष के लिए जमीन दे दी जाती थी। ठेकेदार किसानों से लगान जमा करते थे।

(iii) लगान कम्पनी के पास तक पहुँचाने के लिए हर जिले में एक कलेक्टर (अंग्रेज) और एक दीवान (भारतीय) को नियुक्त किया गया। अधिकारी जमींदारों से लगान जमा करते थे। इस प्रथा के निम्नलिखित दुष्परिणाम निकले–

(अ) ऊँची कीमत देकर जमीन पाने वाले ठेकेदार किसानों से अधिक से अधिक कर वसूल लेना चाहते थे।

(ब) जमींदारों/ठेकेदारों का भूमि से सीधा सम्बन्ध नहीं था। वे कृषकों का शोषण करते थे।

(क) कम्पनी के कर्मचारियों के पास अनुभव की कमी थी। पाँच वर्ष के अन्त में जब हिसाब किया गया तो जमींदारों के पास भारी मात्रा में बकाया राशि का पता चला। अतः उन्हें जेल भेज दिया गया।

इस प्रकार इससे जनता तथा जमींदारों दोनों को कष्टों का सामना करना पड़ा। कम्पनी को भी हानि हुई। 1781 में इस व्यवस्था को सुधार की दृष्टि से वार्षिक कर दिया गया किन्तु यह प्रणाली भी दोषपूर्ण निकली और कृषकों के शोषण में किसी प्रकार की कमी नहीं हुई।

5.2.2 स्थायी बंदोबस्त लॉर्ड कॉर्नवॉलिस (Permanent Settlement Lord Cornwallis)

1784 में कम्पनी ने लॉर्ड कॉर्नवॉलिस को भारत का गवर्नर जनरल नियुक्त किया। कम्पनी के निर्देश पर उसने सर्वप्रथम भू–व्यवस्था का अध्ययन किया। उसने संचालकों को अवगत किया, 'कृषि एवं व्यापार की स्थिति बहुत खराब है, रैयतवारी एवं जमींदार दरिद्रता में पिस रहे हैं, समाज में केवल साहूकार वर्ग समृद्ध हैं।' विचार–विमर्श के बाद संचालकों ने निश्चित किया राजस्व प्रशासन में सुधार किए जाए ताकि भूमि विषयों का स्थायी समाधान मिले और किसानों को भी राहत पहुँचे। इस कार्य में लॉर्ड कॉर्नवॉलिस का सहयोग राजस्व बोर्ड के प्रधान सर जॉन शोर एवं अभिलेखपाल जेम्स ग्रांट ने किया। तीनों ने प्रमुख प्रश्नों पर 1789 में रिपोर्ट प्रस्तुत की–

1. भू–व्यवस्था जमींदारों के साथ की जाये। सर जॉन शोर का मत था कि जमींदार भूमि के स्वामी है और कम्पनी भी इस स्थिति में नहीं थी कि

कृषकों से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर सकें। अतः शोर का मत स्वीकार कर जमींदारों के साथ व्यवस्था स्थापित करना निश्चित किया गया।

2. कम्पनी को लगान का 8/9 भाग मिले।
3. 1790 ई. में निदेशकों ने कॉर्नवॉलिस को 10 वर्ष के लिए व्यवस्था स्थापित करने के लिए कहा किन्तु 1793 ई. में संतोषजनक पाये जाने पर इसे स्थायी कर दिया गया।

5.2.3 स्थायी व्यवस्था की विशेषताएँ (Features of Permanent Arrangement)

1. जमींदारों को निश्चित मालगुज़ारी पर सदैव के लिए भूमि दे दी गई।
2. कम्पनी को लगान का 8/9 भाग और जमींदारों को 1/9 भाग मिलेगा।
3. यदि लगान चुकाने में जमींदार असमर्थ होंगे तो कम्पनी को जमीन कुर्क करने का अधिकार होगा।
4. जमींदार भू–स्वामी होंगे और उनके बाद उनके बच्चों को यह अधिकार प्राप्त हो जाएगा।
5. पैतृक स्वामी होने के नाते वे भूमि को बेचने गिरवी रखने या दूसरे के नाम करने के अधिकारी होंगे।

5.2.4 स्थायी व्यवस्था के लाभ (Benefits of Permanent Arrangement)

1. **कम्पनी को लाभ–** कम्पनी राजस्व की ओर से चिंतामुक्त हो गई। उसे पता था कि उसे कितना लगान प्राप्त होगा अब व्यवस्था स्थायी होने से कम्पनी को बार–बार भूमि प्रबंधन एवं उसमें होने वाले खर्च से छुटकारा मिल गया। उसे एक ऐसा वर्ग मिला जो उसका स्वामिभक्त था।
2. **कृषकों को लाभ–** जमींदार भूमि के पैतृक स्वामी बन गए। उन्हें पता था उन्हें कितना लगान चुकाना है। उनकी आय में वृद्धि हुई और वे धनवान बन गए।
3. **कृषकों को लगान–** कृषक को निश्चित लगान देना था। न्यायालय की आज्ञा के बिना उसमें कोई वृद्धि नहीं कर सकता था।
4 **कृषि में लाभ–** जमींदार जानते थे कि यदि वे कृषि में धन लगाएंगे, उसमें सुधार करेंगे, या भूमि को उर्वरक बनाएंगे तो उनकी आय में वृद्धि होगी इसलिए उन्होंने कृषि सुधार में विशेष ध्यान दिया।
5. **व्यापार में लाभ–** कृषि से प्राप्त सम्पत्ति को जमींदारों ने व्यापार में उपयोग किया।

टिप्पणी

5.2.5 स्थायी बंदोबस्त के दोष (Drawbacks of Permanent Arrangement)

1. सरकार भूमि की जिम्मेदारी से मुक्त हो गई। उसे केवल राजस्व में रुचि थी।
2. जमींदारों ने लगान एकत्र करने के लिए कृषकों के साथ अन्याय किया।
3. लगान राशि की दरें इतनी ज्यादा थीं कि जमींदार उसे चुकाने में असमर्थ थे और अपनी जमीनें बेचने के लिए विवश थे।
4. अधिकांश जमींदार नगरों में जाकर बस गये और लगान वसूलने का कार्य बिचौलियों के हाथों में सौंप दिया, जिन्होंने कृषि विकास पर कोई ध्यान नहीं दिया।
5. कृषक अपने परिश्रम से अन्न उत्पन्न करते थे। इसके लिए उनके पास साधन भी सीमित थे। किन्तु इतनी मेहनत का कोई लाभ उन्हें नहीं होता था क्योंकि जितनी ज्यादा उपज होती थी उन्हें उतना ज्यादा लगान का भाग चुकाना होता था।
6. आपदा के समय भी कृषकों से लगान वसूल करने में कठोरता का पालन किया जाता था। कभी–कभी तो उनकी सारी उपज ही लगान के लिए छीन ली जाती थी।
7. कृषक गरीब एवं अनपढ़ थे। अतः वे अदालतों का लाभ नहीं उठा सके।

स्थायी बंदोबस्त की असफलता को देखते हुए कम्पनी ने इसे सारे प्रदेशों में लागू नहीं किया। 1955 ई. में “West Bengal Acquisition of Estates Act” पारित कर इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया।

5.3 रैयतवारी एवं महालवारी (Ryotwari and Mahalwari)

5.3.1 रैयतवारी व्यवस्था (Ryotwari Arrangement)

लार्ड विलियम बैंटिक– ब्रिटिश सरकार ने रैयतवारी व्यवस्था मद्रास तथा बम्बई में लागू। इस व्यवस्था को थॉमस मुनरो ने व्यापक रूप प्रदान किया। इस व्यवस्था को लागू करने के प्रमुख कारण थे–

1. उपज का अधिकतम भाग लगान के रूप में प्राप्त करना।
2. मद्रास में कोई बड़ा जमींदार नहीं था, जिसके साथ सरकार स्थायी बंदोबस्त कर सकती।
3. स्थायी बंदोबस्त से सरकार को नुकसान हो रहा था क्योंकि जमींदार अधिकांश लगान हड़प लेते थे।

4. जमींदार लगान वसूल करने के लिए जनता पर अत्याचार करते थे। इस व्यवस्था से सरकार रैयत को राहत देना चाहती थी।

विशेषताएँ

1. इस व्यवस्था में कृषक एवं सरकार के मध्य सीधा सम्बन्ध था। किसान सीधे सरकारी कोष में लगान दे सकते थे। वे बिचौलियों पर निर्भर नहीं थे।
2. कृषकों को भू–स्वामी माना गया। भूमि से सम्बंधित समस्त अधिकार उन्हें दिये गये।
3. गाँवों का सर्वेक्षण कर उसका विस्तृत विवरण तैयार कर उसमें कृषि योग्य भूमि दर्ज की जाती थी।
4. भूमि की उर्वरता के अनुसार लगान निर्धारित किया गया।
5. लगान चुकाने में असमर्थ होने पर कृषक की भूमि पर सरकार का अधिकार हो जायेगा। यह व्यवस्था 30 वर्षों तक स्थापित रही।

प्रभाव

इस व्यवस्था से कृषकों पर निम्नलिखित प्रभाव पड़े–

1. कृषक प्रभावित हुए क्योंकि लगान की दर ऊँची थी।
2. लगान न चुकाने पर सरकार उनकी जमींने छीन लेती थी।
3. कम्पनी के अधिकारी अधिक लगान वसूलने के लिए कृषकों पर अत्याचार करते थे।
4. अधिकारियों के अत्याचारों के विरुद्ध कोई सुनवाई नहीं थी।
5. अत्याचारों के भय से कृषक दूसरे क्षेत्रों में चले जाते थे। फलस्वरूप बहुत सी भूमि बंजर रह जाती थी।
6. लगान चुकाने के लिए उन्हें ऋण लेना पड़ता था। वे साहूकारों पर निर्भर रहने लगे। साहूकार अनेक बहानों से उनकी ज़मीन हड़पने लगे।

1855 में हुये एक अध्ययन में मद्रास सरकार ने स्वीकार किया कि कृषक इस व्यवस्था से असंतुष्ट हैं। इससे न वे भरपेट भोजन जुटा पा रहे हैं न लगान चुका पा रहे हैं। भूमि उनकी आय का एकमात्र साधन थी, जिसे साहूकार गिरवी कर किसानों के साथ गुलामों की तरह व्यवहार करते हैं।

रैयतवारी व्यवस्था में परिवर्तन कर बम्बई प्रेसीडेंसी में लागू की गई किन्तु समस्याएँ यथावत् बनी रहीं।

5.3.2 महालवारी बंदोबस्त (Mahalwari Arrangement)

ब्रिटिश सरकार ने यह व्यवस्था नवीन अधिकृत प्रदेशों जैसे उत्तरप्रदेश, मध्यभारत एवं पंजाब में लागू किया। इस व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएँ थीं–

1. एक क्षेत्र को एक इकाई माना गया। इसे महाल कहा गया।

2. महाल का लगान वसूल करने का काम जमींदारों को सौंपा गया।
3. इस व्यवस्था को 20 से 30 वर्ष तक के लिए लागू किया गया।
4. यह समझौता अलग–अलग जमींदारों के साथ नहीं बल्कि सारे गाँव के साथ किया गया। सरकार का कहना था कि गाँव के सबसे बड़े व्यक्ति के हाथों में लगान एकत्र करने का काम देकर वे प्राचीन ग्राम सभा की स्थापना कर रहे हैं। गाँव के सम्मिलित लगान में प्रत्येक व्यक्ति अपनी–अपनी जोतों के अनुसार राशि देगा।
5. यदि कोई लगान देने में असमर्थ होता है तो वह भूमि का मालिक नहीं रहेगा।
6. आय का 3/4 भाग सरकार का होगा।
7. ग्राम के महालदार या नम्बरदार निश्चित लगान पर हस्ताक्षर करते थे।
8. जमीन की उर्वरता और फसलों के मूल्य के अनुसार सरकार राजस्व निर्धारित करेगी।
9. प्रत्येक ग्राम का मानचित्र तैयार कर यह निश्चित किया गया कि किस व्यक्ति के पास कितनी जोत है।
10. एक बार जो लगान निश्चित किया गया वह सम्पूर्ण अवधि 20 वर्ष या 30 वर्ष तक चलता रहता था।

गुण

1. लगान की राशि की समयावधि निर्धारित थी। सरकार को समय–समय पर अलग–अलग क्षेत्रों की उत्पादकता की जानकारी प्राप्त होती रहती थी।
2. लगान जमीन की उर्वरता और फसलों के अनुसार तय किया जाता था।

दोष

1. इस व्यवस्था में लगान वसूल करने का अधिकार जमींदारों को ही मिल गया। कृषक शोषण का शिकार थे। उनसे ऊँची दर से लगान लिया जाता था।
2. सरकार ने उनकी दशा को सुधारने का कोई प्रयास नहीं किया। उसका उद्देश्य लाभ कमाना था।
3. गाँव के बड़े लोग जैसे नम्बरदार/जमींदार, सरकार और कृषकों के बीच थे। सरकार का भी कृषकों से सम्पर्क न था। इसका फायदा उठाकर कृषकों से वे अधिक लगान वसूल करते थे। उन्हें ज़मीन से बेदखल कर देते थे। बड़े परिश्रम से उगाई गई उनकी सम्पूर्ण फसल हड़प लेते थे।

इससे स्पष्ट है कि इस व्यवस्था से कृषि में गिरावट आई और कृषकों के शोषण में वृद्धि हुई।

टिप्पणी

5.4 कृषकों की स्थिति (Condition of Farmers)

ईस्ट इंडिया कम्पनी ने बक्सर के युद्ध के बाद बंगाल की दीवानी प्राप्त की। इसके साथ ही कम्पनी भारत की उपजाऊ भूमि की मालिक हो गयी। धीरे–धीरे अंग्रेजों ने साम्राज्य विस्तार के साथ भारत की लूट भी प्रारंभ कर दी। ब्रिटिश भू–राजस्व नीतियाँ इसका ही परिणाम थी। कम्पनी का उद्देश्य भारत से अधिक से अधिक राजस्व प्राप्त करना था। विभिन्न भू–राजस्व नीतियाँ जैसे स्थायी बंदोबस्त, रैयतवारी अथवा महालवारी से किसानों की दशा दयनीय होती जा रही थी। कृषक जमींदारों के शोषण का शिकार हो रहे थे। जमींदार उनसे मनमाना लगान वसूल करते थे। कभी–कभी प्राकृतिक परिस्थितियाँ इतनी खराब हो जाती थी कि कृषक लगान की ऊँची राशि अदा नहीं कर पाते थे। ऐसी अवस्था में उनकी भूमि छीन ली जाती और उन पर तरह–तरह के अत्याचार किए जाते थे। किसी भी विपदा के समय में भी लगान वसूल करने की कठोरता में कोई कमी नहीं की जाती थी।

कृषि के तरीके पुराने थे। भूमि छोटे–छोटे जोतों में बँटी हुई थी। कृषि वर्शा और अन्य प्राकृतिक साधनों पर निर्भर थी। प्राकृतिक प्रकोपों के कारण कृषि नष्ट हो जाती थी जिससे कृषकों की स्थिति खराब हो जाती थी। इन सारी परेशानियों को दूर करने के लिए कम्पनी ने कोई प्रयास नहीं किए। बाढ़ और अकाल की स्थिति से निपटने के लिए जो प्रयास किए भी गए वो इतने कम थे कि कृषकों को उसका कोई लाभ नहीं मिला।

जमींदारों एवं कम्पनी के अधिकारियों के द्वारा कठोरता से लगान वसूल करने के कारण कृषकों को महाजनों से ऋण लेना पड़ता था जिसका ब्याज इतना होता था कि उसे चुकाने के लिए कृषक दो वक्त के भोजन से भी वंचित रह जाता था। महाजन ऋण अदायगी के लिए उनसे उनके समस्त साधन जैसे जमीन, बैल, गाय आदि छीन लेते थे।

कम्पनी का कृषकों से सीधा सम्बन्ध नहीं था। इसका फायदा मध्यस्थता करने वालों ने उठाया। वे लगान में अपना भाग भी जोड़ लेते थे और उसे वसूल करने के लिए कृषकों पर दबाव डालते थे।

कृषकों की स्थिति के सम्बन्ध में डॉ. मार्शमेन के विचार सटीक बैठते हैं, ''किसी व्यक्ति ने आज तक इस तथ्य का खण्डन नहीं किया कि बंगाल के कृषक वर्ग की व्यवस्था इतनी अधिक शोचनीय और अपमानजनक है जिसकी कल्पना कर पाना भी संभव नहीं। ये कृषक ऐसी तंग अंधेरी कोठरियों में रहते थे जिसमें पशुओं का भी रह सकना असंभव था। फटे चिथड़ों में लिपटे हुए इन कृषकों के लिए तथा अपने परिवार का भोजन भी जुटा पाना कठिन था। बंगाल की इस रैयत के लिए जीवन की अत्यंत साधारण सुविधाएँ भी दुर्लभ थी। यदि इस तथ्य पर बल दिया जाए तो कोई अतिशयोक्ति न होगी कि जो कृषक वर्ग सरकार के लिए प्रतिवर्ष 30 लाख पौण्ड से 40 लाख पौण्ड तक की आय उपलब्ध करने वाली फसल उगाता था उसकी वास्तविक जर्जर स्थिति का सही ज्ञान निःसंदेह हमें चौंका देगा।''

ब्रिटिश भू–राजस्व की ऊँची दरें, कृषि के सीमित साधन, प्राकृतिक प्रकोप और कम्पनी सरकार का उसे अनदेखा करना, जमींदार प्रथा, महाजनों की निर्दयता ने कृषकों की स्थिति को बद से बदतर बना दिया था।

5.5 ग्रामीण ऋणग्रस्तता (Rural Indebtedness)

ब्रिटिश भू–राजस्व नीति का सबसे बड़ा दुष्परिणाम कृषकों की बढ़ती हुई ऋणग्रस्तता थी। लगान की भारी रकमें चुकाने के लिए कृषकों को महाजनों एवं साहूकारों पर निर्भर रहना पड़ता था। इनसे मिलने वाले ऋणों के ब्याज को चुकाते–चुकाते कृषक का सम्पूर्ण जीवन व्यतीत हो जाता था पर वे इन ऋणों से मुक्त नहीं हो पाते थे। उनकी स्थिति बंधुआ मजदूरों की तरह थी। वे जमींदारों के शोषण के शिकार होते रहते थे। महाजनों के पास उनकी जमीनें, पशु, आभूषण एवं अन्य साधन गिरवी रखे रहते थे, जिसे वे कभी वापस प्राप्त नहीं कर पाते थे। महाजन ऋण न चुकाने का बहाना बनाकर कभी उनकी गिरवी रखी वस्तुएँ उन्हें वापस नहीं करते।

ब्रिटिश सरकार ने किसानों की दशा सुधारने का समुचित प्रयास नहीं किया। अदालतों तक निर्धन कृषकों का पहुँचना मुश्किल होता था। मध्यस्थ कभी सही स्थिति सरकार के सामने नहीं रखते थे। सरकार का भी मुख्य उद्देश्य अधिकतम राजस्व वसूल करना था। सरकार ने न तो कृषि और न ही कृषकों की दशा पर विचार किया।

भारत में साम्राज्य विस्तार कर अंग्रेजों ने ऐसी नीतियों को लागू किया जिससे कुटीर उद्योग नष्ट हो गए। अंग्रेज ने अपने उद्योगों में बने माल को बेचने के लिए भारत को बाज़ार की तरह उपयोग किया। उद्योग धन्धे बन्द हो जाने से कृषि भूमि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ा। कृषि भूमि छोटे–छोटे टुकड़ों में बँट गई कृषक और कारीगर दोनों ही ऋण लेने को बाध्य होने लगे।

कृषि का व्यवसायीकरण भी ग्रामीण ऋणग्रस्तता के लिए उत्तरदायी था। ब्रिटिश सरकार केवल उन्हीं फसलों के उत्पादन के लिए कृषकों को बाध्य करते थे जिसकी मांग उनके उद्योगों में थी। वे कृषकों को इन फसलों से बहुत कम कीमत देते थे। इससे उनकी निर्धनता बढ़ी और वे ऋण लेने पर मजबूर होने लगे। इस प्रकार ग्रामीण ऋणग्रस्तता के प्रमुख कारण थे–

1. ब्रिटिश भू–राजस्व नीति
2. साहूकार एवं महाजन द्वारा अत्यधिक ब्याज
3. जमींदारों द्वारा शोषण
4. मध्यस्थ वर्ग का लाभांश वसूल करना
5. कुटीर उद्योगों का विनाश
6. कृषि का व्यवसायीकरण
7. ग्रामीण समाज के रीति रिवाज़

8. ब्रिटिश सरकार की उपेक्षा
9. प्राकृतिक प्रकोप

अतः स्पष्ट है कि लगान नीति, लगान को कठोरता से वसूल करना, जमींदारों द्वारा शोषण और सरकार द्वारा सुधार के प्रयास न करने से कृषक निर्धन होते गए और वे ऋणग्रस्त होने लगे।

5.6 कृषि का वाणिज्यीकरण (Commercialisation of Farming)

कृषि के व्यवसायीकरण का प्रमुख कारण ब्रिटिश सरकार की साम्राज्यवादी नीति थी। ब्रिटिश सरकार ज्यादा से ज्यादा राजस्व प्राप्त करना चाहती थी अतः कृषकों को व्यवसायिक फसलें जैसे कपास, चाय, फल, आलू, सरसों, सब्जी आदि के उत्पादन के लिए बाध्य किया गया। इन फसलों को नकदी फसलें भी कहा जाता था। सरकार का मानना था कि इन फसलों से किसानों की आय अधिक हो सकती थी और वे सरकार को ज्यादा राजस्व दे सकते थे।

ब्रिटिश सरकार ने इन फसलों की खेती पर विशेष ध्यान दिया, ताकि वे अपने उद्योगों के लिए कच्चा माल सस्ते दामों पर प्राप्त कर सकें।

व्यवसायिक फसलों के उत्पादन से कृषकों को कोई लाभ नहीं मिल पाता था क्योंकि कम्पनी के कर्मचारी इन फसलों को कम मूल्य पर खरीदते थे। इस तरह कृषकों की आय कम होती गई। वे निर्धन हो गए और उन्हें महाजनों से ऋण लेने पर विवश होना पड़ा।

अंग्रेजों ने अपनी साम्राज्यवादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सम्पूर्ण भारत में रेल लाइनें बिछा दीं। सर्वप्रथम 1853 में बम्बई और ठाणे तक रेल लाइन बिछाई गई। इसके बाद 1861 तक 1,599 मील लम्बी रेल लाइन, 1871 में 5,077 मील और 1908 तक 30,576 मील लम्बी रेल लाइन बिछाई। इन साधनों से कृषि उत्पादनों को आसानी से ब्रिटेन पहुँचाया जा सकता था। इस प्रकार यातायात के साधनों के विकास ने भारतीय कृषि के व्यवसायीकरण को बढ़ावा दिया। सिंचाई के साधनों के विकास ने औद्योगिक कृषि में वृद्धि की। 1861–62 में 5.6 करोड़ रूपये का कपास ब्रिटेन भेजा गया, 1864–65 में यह निर्यात बढ़कर 37.5 करोड़ रूपये हो गया। 1859–60 में 28.9 करोड़ की अफीम का निर्यात 1879–80 में बढ़कर 69.2 करोड़ रूपये हो गया। इस प्रकार कृषि के व्यवसायीकरण के प्रमुख कारण थे–

1. ब्रिटिश सरकार की भू–राजस्व नीति।
2. ब्रिटिश सरकार की औद्योगिक नीति।
3. यातायात के साधनों का विकास।
4. सिंचाई के साधनों का विकास।
5. निर्यात में वृद्धि।

कृषि के व्यवसायीकरण से भले ही अंग्रेज व्यापारियों को लाभ पहुँचा किन्तु भारतीय कृषकों की दशा खराब होने लगी। वे उन्हीं फसलों को उगा सकते थे जिसकी बाजार को आवश्यकता थी, न कि उनके भूखे परिवार को। इसके ऊपर लगान की दरें बढ़ती जा रही थीं क्योंकि सरकार का मानना था कि नक़दी फसलें कृषकों को ज्यादा लाभ देती हैं जबकि वास्तविकता में अंग्रेज व्यापारी उन्हें बहुत कम मूल्य पर फसलें बेचने पर बाध्य करते थे। नील, चाय, कपास एवं अफीम से अंग्रेजों को अत्यधिक लाभ होता था। इनके बागानों में बहुत कम मजदूरी पर भारतीयों को काम करना पड़ता था। फलस्वरूप वे ऋण के बोझ से लदे रहते थे। बागान मालिक एवं जमींदार कम दामों पर उनकी फसलें लेकर उसे ऊँचे दामों पर बेचकर अधिक पैसे कमाते थे।

लगान की ऊँची दर, कठोरतापूर्वक लगान वसूली, नकदी फसल के कम दाम प्राप्त होना एवं महाजनों द्वारा शोषण ने कृषकों की दशा दयनीय कर दी। दूसरी ओर कृषि के व्यवसायीकरण से आवश्यक अनाज के उत्पादन में कमी आई। परिणामस्वरूप देश में अनेक बार अकाल पड़े, जिसमें जनता भूख से मरने लगी।

5.7 धन का निष्कासन (Drain of Wealth)

ब्रिटिश सरकार ने प्लासी के युद्ध के बाद ही भारत में राजनीतिक सत्ता स्थापित कर ली थी। उसके साम्राज्य विस्तार का उद्देश्य एवं परिणाम था भारत से धन का निष्कासन। 'धन का उत्सर्ग' सिद्धांत का प्रतिपादन सर्वप्रथम दादाभाई नारौजी ने किया।

अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारत के विदेशों से अनुकूल व्यापारिक सम्बन्ध थे। ईस्ट इंडिया कम्पनी ने भी प्लासी के युद्ध से पहले 50 वर्षों में भारत से वस्तुएँ निर्यात के लिए दो करोड़ पौण्ड मूल्य का सोना–चाँदी दिया था। कालान्तर में अंग्रेजों ने कानून बना कर भारत की बहुत सी वस्तुओं के निर्यात पर प्रतिबन्ध लगा दिए। 1720 ई. में इंग्लैण्ड ने भारतीय रेशम तथा सूती कपड़ा पहनने वालों पर जुर्माना लगा दिया।

प्लासी तथा बक्सर के युद्ध के बाद भारत का धन तेजी से इंग्लैण्ड भेजा जाने लगा। दीवानी के रूप में कम्पनी ने भू–राजस्व एकत्र करने के अधिकार पा लिए और भारत की लूट प्रारम्भ हो गई।

कम्पनी के अफ़सर भारतीय राजस्व से ही मोटा–मोटा वेतन पाते थे। इसका पूरा भार भरतीय जनता पर पड़ता था। गवर्नर जनरल का वेतन 20 हजार रूपये प्रतिमाह था। सैनिक अधिकारियों को इंग्लैण्ड में नियुक्त पदाधिकारियों से कई गुना अधिक प्राप्त होता था। वे इस वेतन को पूँजी के रूप में निवेश करते थे। ये सारा धन इंग्लैण्ड में प्रवाहित होता था।

औद्योगिक क्रांति के बाद इंग्लैण्ड ने भारत को कच्चा माल सस्ते में प्राप्त करने तथा अपने उद्योगों में बना हुआ माल बेचने का केन्द्र बना लिया। इस तरह

भारत प्रतिकूल व्यापार का शिकार हो गया। भारत से सारा धन इंग्लैण्ड की व्यापारिक नीतियों के चलते भारत से निष्कासित होने लगा।

इंग्लैण्ड की व्यापारिक नीति का ही एक पक्ष कृषि का व्यवसायीकरण था। अंग्रेजों ने भारतीय कृषकों को नगदी फसलें जैसे कपास, चाय, अफीम, नील, गन्ना आदि बोने के लिए बाध्य किया। इन फसलों की विदेशी बाज़ार में बहुत मांग थी। इन फसलों के उत्पादन का बोझ भारतीय कृषकों पर था किन्तु इसका लाभ उन्हें नहीं मिलता था। अंग्रेज व्यापारी इन फसलों को विदेशी बाज़ारों में बेचकर अपनी जेबें भर लेते थे।

इस प्रकार राजस्व, व्यापारिक नीतियों तथा उपहारों, अन्य रियायतें जैसे चुंगी, दस्तक और नवाबों को गद्दी पर बैठाने के बदले भारी धनराशि वसूल करके इसे इंग्लैण्ड भेज दिया जाता था। हेनरी वरलेस्ट के अनुसार 1766–88 के बीच 46,46,875 पौण्ड की धनराशि इंग्लैण्ड भेजी गयी। 1757 के पश्चात् सात वर्षों के दौरान बंगाल के नवाबों ने अंग्रेज कर्मचारियों को 50 लाख पौण्ड स्टर्लिंग की धनराशि नज़राना और मुआवजा के रूप में पेश की। कम्पनी के कर्मचारी समस्त राशि अपने देश इंग्लैण्ड भेज देते थे। वारेन हेस्टिंग्ज ने अनुमान लगाया कि प्रति वर्ष 40 लाख रुपये का सोना–चाँदी इंग्लैण्ड को भेजा गया। 1761 ई. से 1771 ई. के बीच कम्पनी सरकार ने भारतीय रियासतों से 11 लाख 90 हजार पौण्ड सैनिक सहायता प्रदान करने के बदले लिए। इस राशि को भी इंग्लैण्ड भेज दिया जाता था। 1783–1793 के भारत से निष्कासित होने वाली राशि 19 लाख पौण्ड प्रतिवर्ष जाने का अनुमान अमेरिकन विद्वान प्रो. होल्डर फरबर द्वारा लगाया गया। 1883–92 के बीच यह राशि 35 करोड़ 90 लाख पौंड पहुँच गई। पैवलौव ने लिखा है कि अंग्रेजों ने 1930 ई. के बाद भारत से 13–14 करोड़ पौंड़ केवल शुल्क के रूप में प्राप्त किए।

इतने आँकड़ों से स्पष्ट है कि भारत की निर्धनता का मुख्य कारण भारत से धन का निष्कासन था। दादाभाई नारौजी ने इसे 'अनिष्टों का अनिष्ट' (evil of all evils) की संज्ञा दी है। इस धन से अंग्रेजों के उद्योगों को तो अवश्य फायदा पहुँचा परन्तु भारत की औद्योगिक दशा चिंतनीय थी। भारत के कृषकों, मजदूरों एवं कारीगरों का शोषण लगातार हो रहा था। भारत से बड़ी मात्रा में धन इंग्लैण्ड जा रहा था, किन्तु भारतीयों को जीवन–यापन के लिए ऋण लेना पड़ रहा था।

धन के निष्कासन के अनेक विनाशकारी परिणाम थे जैसे निर्धनता, भारतीयों पर अत्याचार, कुटीर उद्योगों का विनाश, अकाल की स्थिति जिनसे भारतीय लगातार संघर्ष कर रहे थे।

5.8 कुटीर उद्योगों का विनाश (Decline of Cottage Industries)

ब्रिटिश आगमन का मुख्य कारण व्यापारिक था। उनके आगमन से पूर्ण भारत के उद्योगों में बनी वस्तुएँ अपनी श्रेष्ठता तथा कारीगरी के लिये विश्व में प्रसिद्ध थी।

अनेक देशों जैसे ईरान, अरब आदि में इन वस्तुओं की मांग थी इसलिए भारत के इनके साथ व्यापारिक सम्बन्ध थे।

5.8.1 उद्योग (Industry)

भारत में अनेक प्रकार के उद्योग थे जैसे–

1. गुड़ बनाना, चावल कूटना, चटाई बनाना, रस्सी बनाना। इन उद्योगों को कृषक दो फसलों के बीच के खाली समय में करते थे। इससे उन्हें अतिरिक्त आय हो जाती थी।
2. बढ़ई, बुनकर, लोहार, तेल, औजार बनाना। इन उद्योगों से ग्रामीण जीवन के निर्वाहन के लिए वस्तुएँ तैयार की जाती थी।
3. कला उद्योग अत्यन्त लोकप्रिय थे जैसे फिरोज़ाबाद की चूड़ियाँ, बनारस का गलीचा, सोना–चाँदी के जवाहरात, लकड़ी की नक्काशी, बंगाल में बने जहाज आदि।

प्रमुख रूप से भारत सूती, जरी और रेशमी वस्त्र, ऊनी शॉल, चीनी, नील, काली मिर्च और अन्य गरम मसालों का निर्यात करता था। इसके बदले भारत में भारी मात्रा में धन सोने–चाँदी के रूप में आता था। 18वीं शताब्दी भारत का व्यापार समृद्धशाली था।

इंग्लैण्ड में हुई औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप भारत के परम्परागत उद्योग एवं हस्तशिल्प नष्ट होने लगे। अंग्रेज सरकार ने भारत का उपयोग कच्चा माल प्राप्त करने के केन्द्र के रूप में किया तथा वे उसी माल को अपने उद्योगों में तैयार कर भारत में ऊँची कीमतों पर बेचने लगे। भारत की पूँजी अंग्रेज उद्योगपतियों के हाथों में पहुँचने लगी। भारतीय व्यापार जहाँ अब तक निर्यात प्रधान रहा था उसके विपरीत अब आयात पर निर्भर हो गया।

रेल्वे के विकास ने इस आवागमन को और गति प्रदान की। तेजी से कच्चा माल भारत से जाने और इंग्लैण्ड में बना हुआ माल भारत आने लगा।

कुछ तो मशीनों से बने माल की मांग और कुछ अंग्रेजों की व्यापारिक नीतियों ने भारतीय उद्योगों की हालत खराब कर दी। देशी राज्यों एवं राजदरबारों के खत्म हो जाने से भी कारीगरों को संरक्षण देने वालों का अभाव हो गया। कलात्मक वस्तुओं की पहचान रखने वालों के अभाव में इन वस्तुओं की मांग एवं बिक्री खत्म हो गई।

ब्रिटिश साम्राज्यवादी थे, उन्हें भारतीय जनता के सुख–दुख से कोई वास्ता नहीं था। भारत में ब्रिटिशकाल में अनेक अकाल पड़े। ब्रिटिश सरकार द्वारा अकाल की उचित व्यवस्था न होने पर कारीगरों को पेट भरने के लिए श्रम का सहारा लेना पड़ा और वे सिर्फ श्रमिक बन कर रह गए। उनके उद्योग पूर्णतया खत्म हो गए।

भारतीय कारीगर निर्धनता से जूझ रहे थे किन्तु अंग्रेज अधिकारियों के अत्याचार बढ़ते जा रहे थे वे उनके माल को जबरदस्ती उनसे कम कीमत पर ले

लेते थे और उसे ऊँचे दामों पर बेचकर लाभ कमाते थे। उनकी कारीगरी का उचित दाम न मिलने के कारण भी कारीगरों ने अपने उद्योग बंद कर दिए।

इस प्रकार इंग्लैण्ड की औद्योगिक क्रांति, रेल्वे, अंग्रेजों की व्यापारिक नीतियाँ एवं उनके अत्याचार, अकाल आदि कारणों से भारत के कुटीर उद्योगों का विनाश हो गया। इस विनाश का भारत की आर्थिक दशा पर गहरा प्रभाव पड़ा।

अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

1. 'धन का उत्सर्ग' सिद्धांत का प्रतिपादन सर्वप्रथम किसने किया?
   (अ) लॉर्ड विल्यम बैंटिक (ब) लॉर्ड कॉर्नवॉलिस
   (स) दादाभाई नौरोजी (द) मीर कासीम
2. गवर्नर जनरल का वेतन ________ रु प्रतिमहा था।
   (अ) 20,000 रु. (ब) 55,000 रु.
   (स) 10,000 रु. (द) 75,000 रु.

5.9 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर (Answers to Check Your Progress)

1. (स)
2. (अ)

5.10 सारांश (Summary)

ईस्ट इंडिया कम्पनी ने अपने आर्थिक व्यय की पूर्ति करने तथा अधिकाधिक धन कमाने के उद्देश्य से भारत की कृषि व्यवस्था में हस्तक्षेप करना प्रारम्भ किया था। कम्पनी ने करों के उत्पादन और वसूली के लिए कई नए प्रकार के भू राजस्व बंदोबस्त प्रारम्भ किए।

उपनिवेशवाद के इस चरण में बंगाल व अन्य प्रांतों से वसूले गए भू – राजस्व के बचे हुए हिस्से से भारतीय माल को खरीदा जाता था और उसे अन्य देशों को अच्छी कीमत पर निर्यात किया जाता था। इस तरह प्रतिवर्ष भारतीय माल और सम्पत्ति का दोहन होता रहा। परिणामस्वरूप इंग्लैण्ड अधिक अमीर और भारत अधिक गरीब होता गया। औपनिवेशक काल से पूर्व भारतीय अर्थव्यवस्था कृषिजन्य व्यवस्था थी लेकिन अंग्रेजों ने यहाँ के परम्परागत कृषि ढाँचे को नष्ट कर दिया और अपने फायदे के लिए भू–राजस्व निर्धारण और संग्रहण के नए तरीके लागू किए।

टिप्पणी

स्थायी एवं रैयतवारी व्यवस्था की असफलता के बाद 'महालवारी व्यवस्था' को लागू किया गया। इस व्यवस्था में भू–राजस्व का निर्धारण महाल या समूचे गाँव के उत्पादन के आधार पर किया जाता था और महाल के समस्त कृषक भू–स्वामियों के भू–राजस्व का निर्धारण संयुक्त रूप से किया जाता था जिससे गाँव के लोग अपने मुखिया या प्रतिनिधियों के द्वारा एक निर्धारित समयसीमा के अन्दर लगान की अदायगी की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेते थे। महालवारी व्यवस्था ब्रिटिश भारत के कुल क्षेत्रफल के तीस प्रतिशत हिस्से पर लागू थी। इस व्यवस्था के अन्तर्गत दक्कन के कुछ जिले उत्तर भारत (संयुक्त प्रान्त) आगरा, अवध, मध्य प्रांत तथा पंजाब के कुछ हिस्से शामिल थे।

5.11 मुख्य शब्दावली (Key Terminology)

- **ब्रिटिश भू–राजस्व नीतिः** इस व्यवस्था के अंतर्गत ब्रिटिश भारत के कुल क्षेत्रफल का लगभग 19 प्रतिशत भाग सम्मिलित था। इस व्यवस्था के अंतर्गत जमींदारों को भूमि का स्थायी मालिक बना दिया गया।
- **उपनिवेशवादः** किसी एक भौगोलिक क्षेत्र के लोगों द्वारा किसी दूसरे भौगोलिक क्षेत्र में उपनिवेश (कॉलोनी) स्थापित करना और यह मान्यता रखना कि यह एक अच्छा काम है, उपनिवेशवाद (Colonialism) कहलाता है।

5.12 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास (Self Assessment Questions and Exercises)

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. स्थायी बंदोबस्त के दोष क्या थे?
2. महालवारी के गुण-दोष बताइये।
3. ग्रामीण ऋणग्रस्तता के कारण बताइये।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. कृषकों की स्थिति विस्तार से समझाईये।
2. विभिन्न भू–राजस्व व्यवस्था के प्रमुख विशेषताओं को बताइये।

5.13 सहायक पाठ्य सामग्री (Suggested Readings)

1. आधुनिक भारत का इतिहास–बिपिन चन्द्र– Orient Blackswan 2009
2. आधुनिक भारतीय ऐतिहासिक शासक–इला नागौरी–राजा पब्लिशिंग हाउस
3. भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद का उद्‌भव और विकास–बिपिन चन्द्र (1880–1907)